[illegible] [illegible] [illegible]—[illegible]-1

[illegible]

[illegible]—1

विज्ञान भैरव तंत्र का जगत बौद्धिक नहीं है। वह दार्शनिक भी नहीं है। तंत्र शब्द का अर्थ है। विधि , उपाय , मार्ग। इस लिए यह एक वैज्ञानिक ग्रंथ है। विज्ञान ''क्यों '' की नहीं , ''कैसे '' की फिक्र करता है। दर्शन और विज्ञान में यही बुनियादी भेद है। दर्शन पूछता है। यह अस्तित्व क्यों है ? विज्ञान पूछता है , यह आस्तित्व कैसे है ? जब तुम कैसे का प्रश्न पूछते हो , तब उपाय , विधि , महत्वपूर्ण हो जाती है। तब सिद्धांत व्यर्थ हो जाती है। अनुभव केंद्र बन जाता है।

विज्ञान का मतलब है चेतना है। और भैरव का विशेष शब्द है , तांत्रिक शब्द , जो पारगामी के लिए कहा जाता है। इसीलिए शिव को भैरव कहते है , और देवी को भैरवी —वे जो समस्त द्वैत के पार चले जाते है।

पार्वती कहती है —

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—[illegible] [illegible], [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]: [illegible] [illegible]?
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]……

लेकिन संशय निर्मूल कैसे होंगे ? किसके ऊपर से ? क्या कोई उत्तर है जो कि मन के संशय दूर कर दे ? मन ही तो संशय है। जब तक मन नहीं मिटता है , संशय निर्मूल कैसे होंगे ?

शिव उत्तर देंगे। उनके उत्तर में सिर्फ विधियां है —सबसे पुरानी , सबसे प्रचीन विधियां। लेकिन तुम उन्हें अत्याधुनिक भी कह सकते हो। क्योंकि उनमें जोड़ा नहीं जा सकता। वे पूर्ण है , एक सौ बारह विधियां। उनमें सभी संभावनाओं का समावेश है ; मन को शुद्ध करने के , मन के अतिक्रमण के सभी उपाय उनमें समाएँ है। शिव की एक सौ बारह विधियों में एक और विधि नहीं जोड़ी जा सकती। कुछ जोड़ने की गुंजाईश ही नहीं है। यह सर्वांगीण है , संपूर्ण है , अंतिम है। यह सब से प्राचीन है और साथ ही सबसे आधुनिक , सबसे नवीन। पुराने पर्वतों की भांति ये तंत्र पुराने है , शाश्वत जैसे लगते है। और साथ ही सुबह के सूरज के सामने खड़े ओस -कण की भांति ये नए है। ये इतने ताजे है।

ध्यान की इन एक सौ बारह विधियों से मन के रूपांतरण का पूरा विज्ञान निर्मित हुआ है। एक -एक कर हम उनमें प्रवेश करेंगे। पहले हम उन्हें बुद्धि से समझने की चेष्टा करेंगे। लेकिन बुद्धि को मात्र एक यंत्र

की तरह काम में लाओ, मालिक की तरह नहीं। समझने के लिए यंत्र की तरह उसका उपयोग करों। लेकिन उसके जरिए नए व्यवधान मत पैदा करो। जिस समय हम इन विधियों की चर्चा करेंगे। तुम अपने पुराने ज्ञान को पुरानी जानकारियों को एक किनारे धर देना। उन्हें अलग ही कर देना। वे रास्ते की धूल भर है। इन विधियों का साक्षात्कार निश्चित ही सावचेत मन से करो; लेकिन तर्क को हटा कर करो। इस भ्रम में मत रहो कि विवाद करने वाला मन सावचेत मन है। वह नहीं है। क्योंकि जिस क्षण तुम विवाद में उतरते हो, उसी क्षण सजगता खो जाती है। सावचेत नहीं रहते हो। तुम तब यहां हो ही नहीं। ये विधियां किसी धर्म की नहीं है। वे ठीक वैसे ही हिंदू नहीं है जैसे सापेक्षवाद का सिद्धांत आइंस्टीन के द्वारा प्रतिपादित होने के कारण यहूदी नहीं हो जाता है। रेडियों टेलीविजन ईसाई नहीं है। ये विधियां हिंदुओं की ईजाद अवश्य है, लेकिन वे स्वयं हिंदू नहीं है। इस लिए इन विधियों में किसी धार्मिक अनुष्ठान का उल्लेख नहीं रहेगा। किसी मंदिर की जरूरत नहीं है। तुम स्वयं मंदिर हो। तुम ही प्रयोगशाला हो, तुम्हारे भीतर ही पूरा प्रयोग होने वाला है। और विश्वास की भी जरूरत नहीं है। तंत्र धर्म नहीं है। विज्ञान है। किसी विश्वास की जरूरत नहीं है। कुरान या वेद में, बुद्ध या महावीर में आस्था रखने की आवश्यकता नहीं है। नहीं, किसी विश्वास की आवश्यकता है। प्रयोग करने का महा साहस पर्याप्त है, प्रयोग करने की हिम्मत काफी है। एक मुसलमान प्रयोग कर सकता है। वह कुरान के गहरे अर्थों को उपलब्ध हो जाएगा। एक हिंदू अभ्यास कर सकता है। और वह पहली दफा जानेगा कि वेद क्या है? वैसे ही एक जैन इस साधना में उतर सकता है, बौद्ध इस साधना में उतर सकता है, एक ईसाई इस साधना में उतर सकता है...वे जहां है तंत्र उन्हें आप्तकाम करेगा। उनके अपने चुने हुए रास्ते जो भी हो, तंत्र सहयोगी होगा। यहीं कारण है कि जनसाधारण के लिए तंत्र नहीं समझा गया। और सदा यह होता है कि जब तुम किसी चीज को नहीं समझते हो तो उसे गलत जरूर समझते हो। क्योंकि तब तुम्हें लगता है। कि समझते जरूर हो। तुम रिक्त स्थान में बने रहने को राज़ी नहीं हो। दूसरी बात कि जब तुम किसी चीज को नहीं समझते हो, तुम उसे गाली देने लगते हो। यह इसलिए कि यह तुम्हें अपमानजनक लगता है। तुम सोचते हो, मैं और नहीं समझूं, यह असंभव है। इस चीज के साथ ही कुछ भूल होगी। और तब तुम गाली देने लगते हो। तब तुम ऊलजलूल बकने लगते हो। और कहते हो कि अब ठीक है।
इस लिए तंत्र को नहीं समझा गया। और तंत्र को गलत समझा गया। महान
राज भौज ने पवित्र उज्जैन नगरी में तंत्र के विद्यि पीठ को खत्म कर दिया। एक लाख तांत्रिक जोड़ों को काट दिया। क्यों ये क्या है, हमारी समझ में नहीं आता। कुछ सालों पहले वहीं पर राजा विक्रमादित्य ने उन्हीं तांत्रिकों कितना सम्मान दिया.....यह इतना गहरा और उँचा था कि यह होना स् वाभाविक था। तीसरी बात कि चूंकि तंत्र द्वैत के पार जाता है, इसलिए उसका दृष् टिकोण अति नैतिक है। कृपया कर इन शब्दों को समझो: नैतिक, अनैतिक, अति नैतिक। नैतिक क्या है हम समझते है; अनैतिक क्या है हम समझते है; लेकिन जब कोई चीज अति नैतिक हो जाती है, दौनों के पार चली जाती है। तब उसे समझना कठिन है।
तंत्र अति नैतिक है। तंत्र कहता है। कोई नैतिकता जरूरी नहीं है।
कोई खास नैतिकता जरूरी नहीं है। सच तो यह है कि तुम अनैतिक हो, क्योंकि तुम्हारा चित अशांत है। इसलिए तंत्र शर्त नहीं लगता कि पहले तुम नैतिक बनो तब तंत्र की साधना कर सकते हो। तंत्र के लिए यह बात ही बेतुकी है।

कोई बीमार है, बुखार में है, डाक्टर आकर कहता है: पहले अपना बुखार कम करो, पहले पूरा स्वस्थ हो लो और तब मैं दवा दूँगा। यही तो हो रहा है, चौर साधु के पास जाता है। और कहता है, मैं चौर हूं, मुझे ध्यान करना सिखाएं। साधु कहता है, पहले चौरी छोड़ो, चौर रहते ध्यान कैसे कर सकते हो। एक शराबी आकर कहता है, मैं शराब पीता हूं, मुझे ध्यान बताएं। और साधु कहता है, पहली शर्त कि शराब छोड़ो तब ध्यान कर सकोगे।
तंत्र तुम्हारी तथा कथित नैतिकता की, तुम्हारे समाजिक रस्म-रिवाज
आदि की चिंता नहीं करता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि तंत्र तुम्हें अनैतिक होने को कहता है। नहीं, तंत्र जब तुम्हारी नैतिकता की ही इतनी परवाह नहीं करता। तो वह तुम्हें अनैतिक होने को नहीं कह सकता। तंत्र तो वैज्ञानिक विधि बताता है कि कैसे चित को बदला जाए। और एक बार चित दूसर हुआ कि तुम्हारा चरित्र दूसरा हो जाएगा। एक बार तुम्हारे ढांचे का आधार बदला कि पूरी इमारत दूसरी हो जाएगी। इसी अति नैतिक सुझाव के कारण तंत्र तुम्हारे तथाकथित साधु-महात् माओं को बर्दाश्त नहीं हुआ। वे सब उसके विरोध में खड़े हो गए। क्योंकि अगर तंत्र सफल होता है तो धर्म के नाम पर चलने वाली सारी नासमझी समाप्त हो जाएगी।
तंत्र कहता है कि उस अवस्था का नाम भैरव है जब मन नहीं रहता—अ-मन
की अवस्था है। और तब पहल दफा तुम यथार्थत: उसको देखते हो जो है। जब तक मन है, तुम अपना ही संसार रचे जाते हो, तुम उसे आरोपित, प्रक्षेपित किए जाते हो, इसलिए पहल तो मन को बदलों और तब मन को अ-मन में बदलों। और ये एक सौ बारह विधियों सभी लोगों के काम आ सकती है। हो सकता है,
कोई विशेष उपाय तुमको ठीक न पड़े, इसलिए तो शिव अनेक उपाय बताए चले जाते है। कोई एक विधि चुन लो जो तुमको जंच जाए। और यह जानना कठिन नहीं है। कि कौन सी विधि तुम्हें जँचती है। हम यहां प्रत्येक विधि को समझने की कोशिश करेंगे। तुम अपने लिए वह विधि चुन लो जो कि तुम्हें और तुम्हारे मन को रूपांतरित कर दे। यह समझ, यह बौद्धिक समझ बुनियादी तौर से जरूरी है। लेकिन अंत नहीं है। जिस विधि की भी चर्चा में यहां करूं उसको प्रयोग करो। सच में यह है कि जब तुम अपनी सही विधि का प्रयोग करते हो तब झट से उसका तार तुम्हारे किसी तार से लगाकर बज उठता है। एक विधि लो उसके साथ तीन दिन खेलो। अगर तुम्हें उसके साथ निकटता
की अनुभूति हो, अगर उसके साथ तुम थोड़ा स्वस्थ महसूस करो, अगर तुम्हें लगे कि यह तुम्हारे लिए है तो फिर उसके प्रति गंभीर हो जाओ। तब दूसरी विधियों को भूल जाओ, उनमें खेलना बंद करो। और अपनी विधि के साथ टीको, कम से कम तीन महीने टीको। चमत्कार संभव है, बस इतना होना चाहिए कि वह विधि सचमुच तुम्हारे लिए हो। यदि तुम्हारे लिए नहीं है तो कुछ नहीं होगा। तब उसके साथ जन्मों-जन्मों तक प्रयोग करके भी कुछ नहीं होगा।
लेकिन ये एक सौ बारह विधियां तो समस्त मानव-जाति के लिए है। और वे
उन सभी युगों के लिए है जो गुजर गए है और आने वाले है। और किसी भी युग में एक भी एका आदमी नहीं हुआ और न होने वाला ही है। जो कह सके कि ये सभी एक सौ बारह विधियां मेरे लिए व्यर्थ है। असंभव, यह असंभव है। प्रत्येक ढंग के चित के लिए यहां गुंजाइश है। तंत्र में प्रत्येक किस्म के चित के लिए विधि है। कई विधियां है जिनके उपयुक्त आदमी अभी उपलब्ध नहीं है, वे भविष्य के लिए है। और ऐसी विधियां भी है जिनके उपयुक्त मनुष्य रहे ही नहीं। वे अतीत के लिए है। लेकिन डर मत जाना। अनेक विधियां है जो तुम्हारे लिए ही है। ओशो

[illegible]
[illegible]—1
[illegible]—1([illegible])

[illegible]-[illegible]--[illegible]—1

[illegible]:
[illegible], [illegible]
[illegible]--
[illegible], [illegible]

आरंभ की नौ विधियां श्वास -क्रिया से संबंध रखती है। इसलिए पहले हम श्वास -क्रिया के संबंध में थोड़ा समझ लें और विधियों में प्रवेश करेंगे।

हम जन्म से मृत्यु के क्षण तक निरंतर श्वास लेते रहते है। इन दो बिंदुओं के बीच सब कुछ बदल जाता है। सब चीज बदल जाती है। कुछ भी बदले बिना नहीं रहता। लेकिन जन्म और मृत्यु के बीच श्वास क्रिया अचल रहती है। बच्चा जवान होगा , जवान बूढ़ा होगा। वह। बीमार होगा। उसका शरीर रूग्ण और कुरूप होगा। सब कुछ बदल जायेगा। वह सुखी होगा , दुःखी होगा , पीड़ा में होगा , सब कुछ बदलता रहेगा। लेकिन इन दो बिंदुओं के बीच आदमी श्वास भर सतत लेता रहेगा।

श्वास क्रिया एक सतत प्रवाह है , उसमें अंतराल संभव नहीं है। अगर तुम एक क्षण के लिए भी श्वास लेना भूल जाओं तो तुम समाप्त हो जाओगे। यही कारण है कि श्वास लेने का जिम्मा तुम्हारी नहीं है। नहीं तो मुश्किल हो जायेगी। कोई भूल जाये श्वास लेना तो फिर कुछ भी नहीं किया जा सकता।

इसलिए यथार्थ में तुम श्वास नहीं लेते हो , क्योंकि उसमे तुम्हारी जरूरत नहीं है। तुम गहरी नींद में हो और श्वास चलती रहती है। तुम गहरी मूर्च्छा में हो और श्वास चलती रहती है। श्वासन तुम्हारे व्यक्तित्व का एक अचल तत्व है।

दूसरी बात यह जीवन के अत्यंत आवश्यक और आधारभूत है। इस लिए जीवन और श्वास पर्यायवाची हो गये। इस लिए भारत में उसे प्राण कहते है। श्वास और जीवन को हमने एक शब्द दिया। प्राण का अर्थ है , जीवन शक्ति , जीवंतता। तुम्हारा जीवन तुम्हारी श्वास है।

तीसरी बात श्वास तुम्हारे और तुम्हारे शरीर के बीच एक सेतु है। सतत श्वास तुम्हें तुम्हारे शरीर से जोड़ रही है। संबंधित कर रही है। और श्वास ने सिर्फ तुम्हारे और तुम्हारे शरीर के बीच सेतु है , वह तुम्हारे और विश्व के बीच भी सेतु है। तुम्हारा शरीर विश्व का अंग है। शरीर की हरेक चीज , हरेक कण , हरेक कोश विश्व का अंश है। यह विश्व के साथ निकटतम संबंध है। और श्वास सेतु है। और अगर सेतु टूट जाये तो तुम शरीर में नहीं रह सकते। तुम किसी अज्ञात आयाम में चले जाओगे। इस लिए श्वास तुम्हारे और देश काल के बीच सेतु हो जाती है।

श्वास के दो बिंदु है , दो छोर है। एक छोर है जहां वह शरीर और विश्व को छूती है। और दूसरा वह छोर है जहां वह विश्वातीत को छूती है। और हम श्वास के एक ही हिस्से से परिचित है। जब वह विश्व में , शरीर में गति करती है। लेकिन वह सदा ही शरीर से अशरीर में गति करती है। अगर तुम दूसरे बिंदू को , जो सेतु है , धुव्र है , जान जाओं। तुम एकाएक रूपांतरित होकर एक दूसरे ही आयाम में प्रवेश कर जाओगे।

लेकिन याद रखो , शिव जो कहते है वह योग नहीं है। वह तंत्र है। योग भी श्वास पर काम करता है। लेकिन योग और तंत्र के काम में बुनियादी फर्क है। योग श्वास -क्रिया को व्यवस्थित करने की चेष्टा करता है। अगर तुम अपनी

श्वास को व्यवस्था दो तो तुम्हारा स्वास्थ सुधर जायेगा। इसके रहस्यों को समझो, तो तुम्हें स्वास्थ और दीर्घ जीवन मिलेगा। तुम ज्यादा बलि, ज्यादा ओजस्वी, ज्यादा जीवंत, ज्यादा ताजा हो जाओगे।

लेकिन तंत्र का इससे कुछ लेना देना नहीं है। तंत्र स्वास की व्यवस्था की चिंता नहीं करता। भीतर की और मुड़ने के लिए वह श्वास क्रिया का उपयोग भर करता है। तंत्र में साधक को किसी विशेष ढंग की श्वास का अभ्यास नहीं करना चाहिए। कोई विशेष प्राणायाम नहीं साधना है, प्राण को लयवद्ध नहीं बनाना है; बस उसके कुछ विशेष बिंदुओं के प्रति बोधपूर्ण होना है।

श्वास प्रश्वास के कुछ बिंदु है जिन्हें हम नहीं जानते। हम सदा श्वास लेते है। श्वास के साथ जन्मते है, श्वास के साथ मरते है। लेकिन उसके कुछ महत्व पूर्ण बिंदुओं को बोध नहीं है। और यह हैरानी की बात है। मनुष्य अंतरिक्ष की गहराइयों में उतर रहा है, खोज रहा है, वह चाँद पर पहुंच गया है। लेकिन वह अपने जीवन के इस निकटतम विंदु को समझ नहीं सका। श्वास के कुछ बिंदु है, जिसे तुमने कभी देखा नहीं है। वे बिंदु द्वार है, तुम्हारे निकटतम द्वार है, जिनसे होकर तुम एक दूसरे ही संसार में, एक दूसरे ही अस्तित्व में, एक दूसरी ही चेतना में प्रवेश कर सकते हो।

लेकिन वह बिंदु बहुत सूक्ष्म है। जो चीज जितनी निकट हो उतनी ही कठिन मालूम पड़ेगी, श्वास तुम्हारे इतना करीब है, कि उसके बीच स्थान ही नहीं बना रहता। या इतना अल्प स्थान है कि उसे देखने के लिए बहुत सूक्ष्म दृष्टि चाहिए। तभी तुम उन बिंदुओं के प्रति बोध पूर्ण हो सकते हो। ये बिंदु इन विधियों के आधार है।

[illegible]

यह विधि है: हे देवी, यह अनुभव दो श्वासों के बीच घटित हो सकता है। जब श्वास भीतर अथवा नीचे को आती है उसके बाद फिर श्वास के लौटने के ठीक पूर्व—श्रेयस् है। इन दो बिंदुओं के बीच होश पुर्ण होने से घटना घटती है।

जब तुम्हारी श्वास भीतर आये तो उसका निरीक्षण करो। उसके फिर बाहर या ऊपर के लिए मुड़ने के पहले एक क्षण के लिए, या क्षण के हज़ारवें भाग के लिए श्वास बंद हो जाती है। श्वास भीतर आती है, और वहां एक बिंदु है जहां वह ठहर जाती है। फिर श्वास बाहर जाती है। और जब श्वास बाहर जाती है। तो वहां एक बिंदु पर ठहर जाती है। और फिर वह भीतर के लौटती है।

श्वास के भीतर या बाहर के लिए मुड़ने के पहले एक क्षण है जब तुम श्वास नहीं लेते हो। उसी क्षण में घटना घटनी संभव है। क्योंकि जब तुम श्वास नहीं लेते हो तो तुम संसार में नहीं होते हो। समझ लो कि जब तुम श्वास नहीं लेते हो तब तुम मृत हो; तुम तो हो, लेकिन मृत। लेकिन यह क्षण इतना छोटा है कि तुम उसे कभी देख नहीं पाते।

तंत्र के लिए प्रत्येक बहिर्गामी श्वास मृत्यु है और प्रत्येक नई स्वास पुनर्जन्म है। भीतर आने वाली श्वास पुनर्जन्म है; बाहर जाने वाली श्वास मृत्यु है। बाहर जाने वाली श्वास मृत्यु का पर्याय है; अंदर जाने वाली श्वास जीवन का। इसलिए प्रत्येक श्वास के साथ तुम मरते हो और प्रत्येक श्वास के साथ तुम जन्म लेते हो। दोनों के बीच का अंतराल बहुत क्षणिक है, लेकिन पैनी दृष्टि, शुद्ध निरीक्षण और अवधान से उसे अनुभव किया जा सकता है। और यदि तुम उस अंतराल को अनुभव कर सको तो शिव कहते है कि श्रेयस् उपलब्ध है। तब और किसी चीज की जरूरत नहीं है। तब तुम आप्तकाम हो

गए। तुमने जान लिया; घटना घट गई। श्वास को प्रशिक्षित नहीं करना। वह जैसी है उसे वैसी ही बनी रहने देना। फिर इतनी सरल विधि क्यों? सत्य को जानने को ऐसी सरल विधि? सत्य को जानना उसको जानना है। जिसका न जन्म है न मरण। तुम बहार जाती श्वास को जान सकते हो, तुम भीतर जाती श्वास को जान सकते हो। लेकिन तुम दोनों के अंतराल को कभी नहीं जानते। प्रयोग करो और तुम उस बिंदु को पा लोगे। उसे अवश्य पा सकते हो। वह
है। तुम्हें या तुम्हारी संरचना में कुछ जोड़ना नहीं है। वह है ही। सब कुछ है; सिर्फ बोध नहीं है। कैसे प्रयोग करो? पहले भीतर आने वाली श्वास के प्रति होश पूर्ण बनो। उसे देखो। सब कुछ भूल जाओ और आने वाली श्वास को, उसके यात्रा पथ को देखो। जब श्वास नासापुटों को स्पर्श करे तो उसको महसूस करो। श्वास को गति करने दो और पूरी सजगता से उसके साथ यात्रा करो। श्वास के साथ ठीक कदम से कदम मिलाकर नीचे उतरो; न आगे जाओ और ने पीछे पड़ो। उसका साथ न छूटे; बिलकुल साथ-साथ चलो। स्मरण रहे, न आगे जाना है और न छाया की तरह पीछे चलना है। समांतर चलो। युगपत। श्वास और सजगता को एक हो जाने दो। श्वास नीचे जाती है तो तुम भी नीचे जाओं; और तभी उस बिंदु को पा सकते हो, जो दो श्वासों के बीच में है। यह आसान नहीं है। श्वास के साथ अंदर जाओ; श्वास के साथ बाहर आओ। बुद्ध ने इसी विधि का प्रयोग विशेष रूप से किया; इसलिए यह बौद्ध विधि बन गई। बौद्ध शब्दावली में इसे अनापानसति योग कहते है। और स्वयं बुद्ध की आत्मोपलब्धि इस विधि पर ही आधारित थी। संसार के सभी धर्म, संसार के सभी द्रष्टा किसी न किसी विधि के जरिए मंजिल पर पहुंचे है। और वह सब विधियां इन एक सौ बारह विधियों में सम्मिलित है। यह पहली विधि बौद्ध विधि है। दुनिया इसे बौद्ध विधि के रूप में जानती है। क्योंकि बुद्ध इसके द्वारा ही निर्वाण को उपलब्ध हुए थे। बुद्ध न कहा है। अपनी श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग रहो। अंदर जाती, बहार आती, श्वास के प्रति होश पूर्ण हो जाओ। बुद्ध अंतराल की चर्चा नहीं करते। क्योंकि उसकी जरूरत ही नहीं है। बुद्ध ने सोचा और समझा कि अगर तुम अंतराल की, दो श्वासों के बीच के विराम की फिक्र करने लगे, तो उससे तुम्हारी सजगता खंडित होगी। इसलिए उन्होंने सिर्फ यह कहा कि होश रखो, जब श्वास भीतर आए तो तुम भी उसके साथ भीतर जाओ और जब श्वास बहार आये तो तुम उसके साथ बहार आओ। विधि के दूसरे हिस्से के संबंध में बुद्ध कुछ नहीं कहते। इसका कारण है। कारण यह है कि बुद्ध बहुत साधारण लोगों से, सीधे- सादे लोगों से बोल रहे थे। वे उनसे अंतराल की बात करते तो उससे लोगों में अंतराल को पाने की एक अलग कामना निर्मित हो जाती। और यह अंतराल को पाने की कामना बोध में बाधा बन जाती। क्योंकि अगर तुम अंतराल को पाना चाहते हो तो तुम आगे बढ़ जाओगे; श्वास भीतर आती रहेगी। और तुम उसके आगे निकल जाओगे। क्योंकि तुम्हारी दृष्टि अंतराल पर है जो भविष्य में है। बुद्ध कभी इसकी चर्चा नहीं करते; इसीलिए बुद्ध की विधि आधी है। लेकिन दूसरा हिस्सा अपने आप ही चला आता है। अगर तुम श्वास के प्रति सजगता का, बोध का अभ्यास करते गए तो एक दिन अनजाने ही तुम अंतराल को पा जाओगे। क्योंकि जैसे-जैसे तुम्हारा बोध तीव्र, गहरा और सघन होगा, जैसे-जैसे तुम्हारा बोध स्पष्ट आकार लेगा। जब सारा संसार भूल जाएगा। बस श्वास का आना जाना ही एकमात्र बोध रह जाएगा—तब अचानक तुम उस अंतराल को अनुभव करोगे। जिसमें श्वास नहीं है। अगर तुम सूक्ष्मता से श्वास-प्रश्वास के साथ यात्रा कर रहे हो तो
उस स्थिति के प्रति अबोध कैसे रह सकते हो। जहां स्वास नहीं है। वह क्षण

आ ही जाएगा जब तुम महसूस करोगे। कि अब श्वास न जाती है, न आती है। श्वास क्रिया बिलकुल ठहर गई है। और उसी ठहराव में श्रेयस् का वास है।

यह एक विधि लाखों-करोड़ों लोगों के लिए पर्याप्त है। सदियों तक समूचा एशिया इस एक विधि के साथ जीया और उसका प्रयोग करता रहा। तिब्बत, चीन, जापन, बर्मा, श्याम, श्रीलंका। भारत को छोड़कर समस्त एशिया सदियों तक इस एक विधि का उपयोग करता रहा। और इस एक विधि के द्वारा हजारों-हजारों व्यक्ति ज्ञान को उपलब्ध हुए। और यह पहली ही विधि है। दुर्भाग्य की बात कि चूंकि यह विधि बुद्ध के नाम से संबंद्ध हो गई। इसलिए हिंदू इस विधि से बचने की चेष्टा में लगे रहे। क्योंकि यह बौद्ध विधि की तरह बहुत प्रसिद्ध हुई। हिंदू इसे बिलकुल भूल गये। इतना ही नहीं, उन्होंने और एक कारण से इसकी अवहेलना की। क्योंकि शिव ने सबसे पहले इस विधि का उल्लेख किया, अनेक बौद्धों ने इस विज्ञान भैरव तंत्र के बौद्ध ग्रंथ होने का दावा किया। वे इसे हिंदू ग्रंथ नहीं मानते।

यह न हिंदू है और न बौद्ध, और विधि मात्र विधि है। बुद्ध ने इसका उपयोग किया, लेकिन यह उपयोग के लिए मौजूद ही थी। और इस विधि के चलते बुद्ध-बुद्ध हुए। विधि तो बुद्ध से भी पहले थी। वह मौजूद ही थी। इसको प्रयोग में लाओ। यह सरलतम विधियों में से है—अन्य विधियों की तुलना में। मैं यह नहीं कहता कि यह विधि तुम्हारे लिए सरल है। अन्य विधियां अधिक कठिन होंगी। यही कारण है कि पहली विधि की तरह इसका उल्लेख हुआ है।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]

(तंत्र-सूत्र—भाग-1)

प्रवचन—2

[illegible]-[illegible]—[illegible]—02

[illegible]

थोड़े फर्क के साथ यह वही विधि है; और अब अंतराल पर न होकर मोड़ पर है। बाहर जाने वाली और अंदर जाने वाली श्वास एक वर्तुल बनाती है। याद रहे, वे समांतर रेखाओं की तरह नहीं है। हम सदा सोचते है कि आने वाली श्‍वास और जाने वाली श्वास दो समांतर रेखाओं की तरह है। मगर वे ऐसी है नहीं। भीतर आने वाली श्वास आधा वर्तुल बनाती है। और शेष आधा वर्तुल बाहर जाने वाली श्वास बनाती है।

इसलिए पहले यह समझ लो कि श्वास और प्रश्वास मिलकर एक वर्तुल बनाती है। और वे समांतर रेखाएं नहीं है; क्योंकि समांतर रेखाएं कही नहीं मिलती है। दूसरी यह कि आने वाली और जाने वाली श्वास दो नहीं है। वे एक है। वही श्वास भीतर आती है, बहार भी जाती है। इसलिए भीतर उसका कोई मोड़ अवश्य होगा। वह कहीं जरूर मुड़ती होगी। कोई बिंदु होगा, जहां आने वाली

श्वास जाने वाली श्वास बन जाती होगी। लेकिन मोड़ पर इतना जोर क्यों है?
क्योंकि शिव कहते है, ‘’जब श्वास नीचे से ऊपर की और मुड़ती है, और
फिर जब श्वास ऊपर से नीचे की और मुड़ती है—इन दो मोड़ों के द्वारा उपलब्ध हो।‘’ बहुत सरल है। लेकिन शिव कहते है कि मोड़ों को प्राप्त कर लो। और आत्मा को उपलब्ध हो जाओगे। लेकिन मोड़ क्यों?
अगर तुम कार चलाना जानते हो तो तुम्हें गियर का पता होगा। हर गियर बदलते हो तो तुम्हें न्यूट्रल गियर से गुजरना पड़ता है जो कि गियर बिलकुल नहीं है। तुम पहले गियर से दूसरे गियर में जाते हो और दूसरे से तीसरे गियर में। लेकिन सदा तुम्हें न्यूट्रल गियर से होकर जाना पड़ता है। वह न्यूट्रल गियर घुमाव का बिंदु है। मोड़ है। उस मोड़ पर पहला गियर दूसरा गियर बन जाता है। और दूसरा तीसर बन जाता है।
वैसे ही जब तुम्हारी श्वास भीतर जाती है और घूमने लगती है तो उस वक्त वह न्यूट्रल गियर में होती है। नहीं तो वह नहीं धूम सकती। उसे तटस् थ क्षेत्र से गुजरना पड़ता है। उस तटस्थ क्षेत्र में तुम न तो शरीर हो और न मन ही हो; न शारीरिक हो,
न मानसिक हो। क्योंकि शरीर तुम्हारे अस्तित्व का एक गियर है और मन उसका दूसरा गियर है। तुम एक गियर से दूसरे गियर में गति करते हो, इस लिए तुम् हें एक न्यूट्रल गियर की जरूरत है जो न शरीर हो और न मन हो। उस तटस्थ क्षेत्र में तुम मात्र हो, मात्र अस्तित्व–शुद्ध, सरल, अशरीरी और मन से मुक्त। यही कारण है कि घुमाव बिंदु पर, मोड़ पर इतना जोर है। मनुष्य एक यंत्र है—बड़ा और बहुत जटिल यंत्र। तुम्हारे शरीर और
मन में भी अनेक गियर है। तुम्हें उस महान यंत्र रचना का बोध नहीं है। लेकिन तुम एक महान यंत्र हो। और अच्छा है कि तुम्हें उसका बोध नहीं है। अन्यथा तुम पागल हो जाओगे। शरीर ऐसा विशाल यंत्र है कि वैज्ञानिक कहते है, अगर हमें शरीर के समांतर एक कारखाना निर्मित करना पड़े तो उसे चार वर्ग मिल जमीन की जरूरत होगी। और उसका शोरगुल इतना भारी होगा कि उससे सौ वर्ग मील भूमि प्रभावित होगी। शरीर एक विशाल यांत्रिक रचना है—विशालतम। उसमे लाखों-लाखों कोशिकांए है, और प्रत्येक कोशिका जीवित है। तुम सात करोड़ कोशिकाओं के एक विशाल नगर में हो; तुम्हारे भी तर सात करोड़ नागरिक बसते है; और सारा नगर बहुत शांति और व्यवस्था से चल रहा है। प्रतिक्षण यंत्र-रचना काम कर रही है। और वह बहुत जटिल है। कई स्थलों पर इन विधियों का तुम्हारे शरीर और मन की एक यंत्र-रचना
के साथ वास्ता पड़ेगा। लेकिन याद रखो। कि सदा ही जोर उन बिंदुओं पर रहेगा जहां तुम अचानक यंत्र-रचना के अंग नहीं रह जाते हो। जब एकाएक तुम यंत्र रचना के अंग नहीं रहे तो ये ही क्षण है जब तुम गियर बदलते हो। उदाहरण के लिए, रात जब तुम नींद में उतरते हो तो तुम्हें गियर बदलना पड़ता है। कारण यह है कि दिन में जागी हुई चेतना के लिए दूसरे ढंग की यंत्र रचना की जरूरत रहती है। तब मन का भी एक दूसरा भाग काम करता है। और जब तुम नींद में उतरते हो तो वह भाग निष्क्रिय हो जाता है। और अन्य भाग सक्रिय होता है। उस क्षण वहां एक अंतराल, एक मोड़ आता है। एक गियर बदला। फिर सुबह जब तुम जागते हो तो गियर बदलता है। तुम चुपचाप बैठे हो और अचानक कोई कुछ कह देता है, और तुम क्रुद्ध
हो जाते हो। तब तुम भिन्न गियर में चले गए। यही कारण है कि सब कुछ बदल जाता है। तुम क्रोध में हुए श्वास क्रिया बदल जायेगी। वह अस्तव्यस्त हो जायेगी। तुम्हारी श्वास क्रिया में कंपन आ जाएगा। किसी चीज को चूर-चूर कर देना चाहेगा, ताकि यह घुटन जाए। तुम्हारी श्वास क्रिया बदल जाएगी,

तुम्हारे खून की लय दुसरी होगी। शरीर में और ही तरह का रस द्रव्य सक्रिय होगा। पूरी ग्रंथि व्यवस्था ही बदल जाएगी। क्रोध में तुम दूसरे ही आदमी हो जाते हो। एक कार खड़ी है, तुम उसे स्टार्ट करो। उसे किसी गियर में न डालकर न्यूट्रल गियर में छोड़ दो। गाड़ी हिलेगी, कांपेगी, लेकिन चलेगी नहीं। वह गरम हो जाएगी। इसी तरह क्रोध में नहीं कुछ कर पाने के कारण तुम गरम हो जाते हो। यंत्र रचना तो कुछ करने के लिए सक्रिय है और तुम उसे कुछ करने नहीं देते तो उसका गरम हो जाना स्वाभाविक है। तुम एक यंत्र-रचना हो, लेकिन मात्र यंत्र-रचना नहीं हो। उससे कुछ अधिक हो। उस अधिक को खोजना है। जब तुम गियर बदलते हो तो भीतर सब कुछ बदल जाता है। जब तुम गियर बदलते हो तो एक मोड़ आता है। शिव कहते है, ‘’जब श्वास नीचे से ऊपर की और मुड़ती है, और फिर जब श्
वास ऊपर से नीचे की और मुड़ती है। इन दो मोड़ों के द्वारा उपलब्ध हो जाओ।‘’
मोड़ पर सावधान हो जाओ, सजग हो जाओ। लेकिन यह मोड़ बहुत सूक्ष्म है
और उसके लिए बहुत सूक्ष्म निरीक्षण की जरूरत पड़ेगी। हमारी निरीक्षण की क्षमता नहीं के बराबर है; हम कुछ देख ही नहीं सकते। अगर मैं तुम्हें कहूं कि इस फूल को देखो—इस फूल को जो तुम्हें मैं देता हूं। तो तुम उसे नहीं देख पाओगे। एक क्षण को तुम उसे देखोगें और फिर किसी और चीज के संबंध में सोचने लगोगे। वह सोचना फूल के विषय में हो सकता है। लेकिन वह फूल नहीं हो सकता। तुम फूल के बारे में सोच सकते हो। कि देखो वह कितना सुंदर है। लेकिन तब तुम फूल से दूर हट गए। अब फूल तुम्हारे निरीक्षण क्षेत्र में नहीं रहा। क्षेत्र बदल गया। तुम कहोगे कि यह लाल है, नीला है, लेकिन तुम उस फूल से दूर चले गए। निरीक्षण का अर्थ होता है: किसी शब्द या शाब्दिकता के साथ, भीतर की बदलाहट के साथ न रहकर मात्र फूल के साथ रहना। अगर तुम फूल के साथ ऐसे तीन मिनट रह जाओ, जिसमे मन कोई गति न करे, तो श्रेयस् घट जाएगा। तुम उपलब्ध हो जाओगे। लेकिन हम निरीक्षण बिलकुल नहीं जानते है। हम सावधान नहीं है, सतर्क नहीं है, हम किसी भी चीज को अपना अवधान नहीं दे पाते है। हम ता यहां-वहां उछलते रहत है। वह हमारी वंशगत विरासत है, बंदर-वंश की विरासत। बंदर के मन से ही मनुष्य का मन विकसित हुआ है। बंदर शांत नहीं बैठ सकता।
इसीलिए बुद्ध बिना हलन-चलन के बैठने पर, मात्र बैठने पर इतना जौर देते है। क्योंकि तब बंदर-मन का अपनी राह चलना बंद हो जाता है।
जापान में एक खास तरह का ध्यान चलता है जिसे वे झा झेन कहते है। झा
झेन शब्द का जापानी में अर्थ होता है, मात्र बैठना और कुछ भी नहीं करना। कुछ भी हलचल नहीं करनी है, मूर्ति की तरह वर्षों बैठे रहना है—मृतवत्, अचल। लेकिन मूर्ति की तरह वर्षों बैठने की जरूरत क्या है? अगर तुम अपने श्वास के घुमाव को अचल मन से देख सको तो तुम प्रवेश पा जाओगे? तुम स्वयं में प्रवेश पा जाओगे। अंतर के भी पार प्रवेश पा जाओगे। लेकिन ये मोड़ इतने महत्वपूर्ण क्यों है?
वे महत्वपूर्ण है, क्योंकि मोड़ पर दूसरी दिशा में घूमने के लिए श्वास तुम्हें छोड़ देती है। जब वह भीतर आ रही थी तो तुम्हारे साथ थी; फिर जब वह बाहर जाएगी तो तुम्हारे साथ होगा। लेकिन घुमाव-बिंदु पर न वह तुम्हारे साथ है और न तुम उसके साथ हो। उस क्षण में श्वास तुमसे भिन्न है और तुम उससे भिन्न हो। अगर श्वास क्रिया ही जीवन है तो तब तुम मृत हो। अगर श्वास-क्रिया तुम्हारा मन है तो उस क्षण तुम अ-मन हो।
तुम्हें पता हो या न हो, अगर तुम अपनी श्वास को ठहरा दो तो मन अचानक
ठहर जाता है। अगर तुम अपनी श्वास को ठहरा दो तो तुम्हारा मन अभी और

अचानक ठहर जाएगा ; मन चल नहीं सकता। श्वास का अचानक ठहरना मन को ठहरा देता है। क्यों ? क्योंकि वे पृथक हो जाते है। केवल चलती हुई श्वास मन से शरीर से जुड़ी होती है। अचल श्वास अलग हो जाती है। और जब तुम न्यूट्रल गियर में होते हो।

कार चालू है , ऊर्जा भाग रही है , कार शोर मचा रही है। वह आगे जाने को तैयार है। लेकिन वह गियर में ही नहीं है। इसलिए कार का शरीर और कार का यंत्र -रचना , दोनों अलग -अलग है। कार दो हिस्सों में बंटी है। वह चलने को तैयार है , लेकिन गति का यंत्र उससे अलग है।

वही बात तब होती है जब श्वास मोड़ लेती है। उस समय तुम उसे नहीं जुड़े हो। और उस क्षण तुम आसानी से जान सकते हो कि मैं कौन हूं , यह होना क्या है , उस समय तुम जान सकते हो कि शरीर रूपी घर के भीतर कौन है , इस घर का स्वामी कौन है। मैं मात्र घर हूं या वहां कोई स्वामी भी है , मैं मात्र यंत्र रचना हूं , या उसके परे भी कुछ है। और शिव कहते है कि उस घुमाव बिंदु पर उपलब्ध हो। वे कहते है , उस मोड़ के प्रति बोधपूर्ण हो जाओ और तुम आत्मोपलब्ध हो।

□□□

विज्ञान भैरव तंत्र प्रवचन -2(तंत्र -सूत्र —भाग -1)

□□□□□-□□□□□—□□□□—03

□□ □□ □□□ □□□: □□□□□ □□ □□□□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□ □□□□□ □□□□ □□, □□ □□□□ □□□ □□□□□□□□□, □□□□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□

हम केंद्र और परिधि में विभाजित है। शरीर परिधि है। हम शरीर को , परिधि को जानते है। लेकिन हम यह नहीं जानते कि कहां केंद्र है। जब बहिर्श्वास अंत :श्वास में विलीन होती है। जब वे एक हो जाती है। जब तुम यह नहीं कह सकते कि यह अंत :श्वास है कि बहिर्श्वास , जब यह बताना कठिन हो कि श्वास भीतर जा रही है कि बाहर जा रही है। जब श्वास भी तर प्रवेश कि बाहर की तरफ मुड़ने लगती है , तभी विलय का क्षण है। तब श्वास जाती है और न भीतर आती है। श्वास गतिहीन है। जब वह बहार जाती है , गतिमान है , जब वह भीतर आती है , गतिमान है। और जब वह दोनों में कुछ भी नहीं करती है। तब वह मौन है , अचल है। और तब तुम केंद्र के निकट हो। आने वाली और जाने वाली श्वासों का यह विलय विंदु तुम्हारा केंद्र है।

इसे इस तरह देखो। जब श्वास भीतर जाती है तो कहां जाती है ? वह तुम्हारे केंद्र को जाती है। और जब वह बाहर जाती है तो कहां जाती है ? केंद्र से बाहर जाती है। इसी केंद्र को स्पर्श करना है। यही कारण हे कि ताओ वादी संत और झेन संत कहते है कि सिर तुम्हारा केंद्र नहीं है , नाभि तुम्हारा केंद्र है। श्वास नाभि -केंद्र को जाती है , फिर वहां से लौटती है , फिर उसकी यात्रा करती है।

जैसा मैंने कहा , श्वास तुम्हारे और तुम्हारे शरीर के बीच सेतु है। तुम शरीर को तो जानते हो , लेकिन यह नहीं जानते कि केंद्र कहां है। श्वास निरंतर केंद्र को जा रही है। और वहां से लौट रही है। लेकिन हम पर्याप्त श्वास नहीं लेते है। इस कारण से साधारण : वह केंद्र तक नहीं पहुंच पाती है। खासकर आधुनिक समय में तो वह केंद्र तक नहीं जाती। और नतीजा यह है कि हरेक व्यक्ति विकेंद्रित अनुभव करता है। अपने को केंद्र से च्यूत महसूस करता है। पूरे आधुनिक संसार में जो लोग भी थोड़ा सोच -विचार करते है। वे महसूस करते है कि उनका केंद्र खो गया है।

एक सोए हुए बच्चे को देखो , उसकी श्वास का निरीक्षण करो। जब उसकी श्वास भीतर जाती है तो उसका पेट ऊपर उठता है। उसकी छाती अप्रभावित रहती है। यही वजह है कि बच्चों के छाती नहीं होती। उनके केवल पेट होते है।

जीवंत पेट। श्वास प्रश्वास के साथ उनका पेट ऊपर नीचे होता है। उनका पेट ऊपर-नीचे होता है और बच्चे अपने केंद्र पर होते है, केंद्र में होते है, और यही कारण है कि बच्चे इतने सुखी है, इतने आनंदमग्न है। इतनी ऊर्जा से भरे है कि कभी थकते नहीं और ओवर फ्लोइंग है। वे सदा वर्तमान क्षण में होते है। न उनका अतीत है न भविष्य।
एक बच्चा क्रोध कर सकता है। जब वह क्रोध करता है तो समग्रता से
क्रोध करता है। वह क्रोध ही हो जाता है। और तब उसका क्रोध भी कितना सुंदर लगता है। जब कोई समग्रता से क्रोध ही हो जाता है। तो उसके क्रोध का भी अपना सौंदर्य है। क्योंकि समग्रता सदा सुंदर होती है।
तुम क्रोधी और सुंदर नहीं हो सकते। क्रोध में तुम कुरूप लगोगे। क् योंकि खंड सदा कुरूप होता है। क्रोध के साथ ही ऐसा नहीं है। तुम प्रेम भी करते हो तो कुरूप लगते हो। क्योंकि उसमे भी तुम खंडित हो, बंटे-बंटे हो। जब तुम किसी को प्रेम कर रहे हो, जब तुम संभोग में उतर रहे हो तो अपने चेहरे को देखो। आईने के सामने प्रेम करो और अपना चेहरा देखो। वह कुरूप और पशुवत होगा।
प्रेम में भी तुम्हारा रूप कुरूप हो जाता है। क्यों? तुम्हारे
प्रेम में भी द्वंद्व है, तुम कुछ बचाकर रख रहे हो, कुछ रोक रहे हो; तुम बहुत कंजूसी से दे रहे हो। तुम अपने प्रेम में भी समग्र नहीं हो। तुम समग्रता से, पूरे-पूरे दे भी नहीं पाते।
और बच्चा क्रोध और हिंसा से भी समग्र होता है। उसका मुखड़ा दीप्त
और सुंदर हो उठता है। वह यहां और अभी होता है। उसके क्रोध का न किसी अतीत से कुछ लेना-देना है और न किसी भविष्य से; वह हिसाब नहीं रखता है। वह मात्र क्रुद्ध है। बच्चा अपने केंद्र पर है। और जब तुम केंद्र पर होते हो तो सदा समग्र होते हो। तब तुम तो कुछ करते हो वह समग्र होता है। भला या बुरा, वह समग्र होता है। और जब खंडित होते हो, केंद्र से च्युत होते हो तो तुम्हारा हरेक काम भी खंडित होता है। क्योंकि उसमे तुम्हारा खंड ही होता है। उसमे तुम्हारा समग्र संवेदित नहीं होता है। खंड समग्र के खिलाफ जाता है। और वही कुरूपता पैदा करता है।
कभी हम सब बच्चो थे। क्या बात है कि जैसे-जैसे हम बड़े होते है
हमारी श्वास क्रिया उथली हो जाती है। तब श्वास पेट तक कभी नहीं जाती है, नाभि केंद्र को नहीं छूती है। अगर वह ज्यादा से ज्यादा नीचे जाएगी तो वह कम से कम उथली रहेगी। लेकिन वि तो सीने को छूकर लौट आती है। वह केंद्र तक नहीं जाती है। तुम केंद्र से डरते हो, क्योंकि केंद्र पर जाने से तुम समग्र हो जाओगे। अगर तुम खंडित रहना चाहो तो खंडित रहने की यही प्रक्रिया है।
तुम प्रेम करते हो, अगर तुम केंद्र से श्वास लो तो तुम प्रेम में
पूरे बहोगे। तुम डरे हुए हो। तुम दूसरे के प्रति, किसी के भी प्रति खुल होने से, असुरक्षित और संवेदनशील होने से डरते हो। तुम उसे अपना प्रेमी कहो कि प्रेमिका कहो, तुम डरे हुए हो। वह दूसरा है, और अगर तुम पूरी तरह खुले हो, असुरक्षित हो तो तुम नहीं जानते कि क्या होने जा रहा है। तब तुम हो, समग्रता से हो—दूसरे अर्थों में। तुम पूरी तरह दूसरे में खो जाने से डरते हो। इसलिए तुम गहरी श्वास नहीं ले सकते। तुम अपनी श्वास को शिथिल और ढीला नहीं कर सकते हो। क्योंकि वह केंद्र तक चली जायेगी। क् योंकि जिस क्षण श्वास केंद्र पर पहुँचेगी, तुम्हारा कृत्य अधिकाधिक समग्र होने लगेगा।
क्योंकि तुम समग्र होने से डरते हो, तुम उथली श्वास लेते हो। तुम अल्पतम श्वास लेते हो। अधिकतम नहीं। यही कारण है कि जीवन इतना जीवनहीन लगता है। अगर तुम न्यूनतम श्वास लोगे तो जीवन जीवनहीन ही होगा। तुम जीते भी न्यूनतम हो, अधिकतम नहीं। तुम अधिकतम जियो तो जीवन अतिशय हो

जाए। लेकिन तब कठिनाई होगी। यदि जीवन अतिशय हो तो तुम न पति हो सकते हो और न पत्नी। सब कुछ कठिन हो जाएगी। अगर जीवन अतिशय हो तो प्रेम अतिशय होगा। तब तुम एक से ही बंधे नहीं रह सकते। तब तुम सब तरफ प्रवाहित होने लगोगे। सभी आयाम में तुम भर जाओगे। और उस हालत में मन खतरा महसूस करता है; इसलिए जीवित ही नहीं रहना उसे मंजूर है।
तुम जितने मृत होगें उतने सुरक्षित होगें। जितने मृत होगें उतना
ही सब कुछ नियंत्रण में होगा। तुम नियंत्रण करते हो तो तुम मालिक हो, क् योंकि नियंत्रण करते हो इसलिए अपने को मालिक समझते हो। तुम अपने क्रोध पर, अपने प्रेम पर, सब कुछ पर नियंत्रण कर सकते हो। लेकिन यह नियंत्रण ऊर्जा के न्यूनतम तक पर ही संभव है।
कभी न कभी हर आदमी ने यह अनुभव किया है कि वह अचानक न्यूनतम से
अधिकतम तल पर पहुंच गया। तुम किसी पहाड़ पर चले जाओ। अचानक तुम शहर से, उसकी कैद से बाहर हो जाओ। अब तुम मुक्त हो। विराट आकाश है, हरा जंगल है, बादलों को छूता शिखर है। अचानक तुम गहरी श्वास लेते हो। हो सकता है, उस पर तुम्हारा ध्यान न को छूता शिखर है। अचानक तुम गहरी श्वास लेते हो। हो सकता है, उस पर तुम्हारा ध्यान न गया हो। अब जब पहाड़ जाओ तो इसका ख्याल रखना। केवल पहाड़ के कारण बदलाहट नहीं मालूम होती, श्वास के कारण मालूम होती है। तुम गहरी श्वास लेते हो और कहते हो, अहा, तुमने केंद्र छू लिया, क्षण भर के लिए तुम समग्र हो गए। और सब कुछ आनंदपूर्ण है। वह आनंद पहाड़ से नहीं, तुम्हारे केंद्र से आ रहा है। तुमने अचानक उसे छू जो लिया। शहर में तुम भयभीत थे। सर्वत्र दूसरा मौजूद था और तुम अपने को
काबू में किए रहते थे। न रो सकते थे, न हंस सकते थे। कैसे दुर्भाग्य, तुम सड़क पर गा नहीं सकते थे। नाच नहीं सकते थे। तुम डरे-डरे थे। कहीं सिपाही खड़ा था, कहीं पुरोहित, कहीं जज खड़ा था। कहीं राजनीतिज्ञ, कहीं नीतिवादी। कोई न कोई था कि तुम नाच नहीं सकते थे।
बर्ट्रेंड रसेल न कहीं कहा है कि मैं सभ्यता से प्रेम करता हूं,
लेकिन हमने यह सभ्यता भारी कीमत चुका कर हासिल की है।
तुम सड़क पर नहीं नाच सकते, लेकिन पहाड़ चले जाओ और वहां अचानक नाच सकते हो। तुम आकाश के साथ अकेले हो और आकाश कारागृह नहीं है। वह खुलता ही जाता है, खुलता ही जाता है। अंनत तक खुलता ही जाता है। एकाएक तुम एक गहरी श्वास लेते हो; केंद्र छू जाता है; और तब आनंद ही आनंद है।
लेकिन वह लंबे समय तक टिकने वाला नहीं है। घंटे दो घंटे में पहाड़
विदा हो जाएगा। तुम वहां रह सकते हो, लेकिन पहाड़ विदा हो जाएगा। तुम् हारी चिंताएं लौट आएँगी। तुम शहर देखना चाहोगे, पत्नी को पत्र लिखने की सोचोगे या सोचोगे कि तीन दिन बाद वापस जाना है तो उसकी तैयारी शुरू करें। अभी तुम आए हो और जाने की तैयारी होने लगी। फिर तुम वापस आ गए। वह गहरी श्वास सच में तुमसे नहीं आई थी। वह अचानक घटित हुई थी, बदली परिस् थिति के कारण गियर बदल गया था। नई परिस्थिति में तुम पुराने ढंग से श् वास नहीं ले सकते थे। इसलिए क्षण भर को एक नयी श्वास आ गई, उसने केंद्र छू लिया और तुम आनंदित थे।
शिव कहते है, तुम प्रत्येक क्षण केंद्र को स्पर्श कर रहे हो, या
यदि नहीं स्पर्श कर रहे हो तो कर सकते हो। गहरी, धीमी श्वास लो और केंद्र को स्पर्श करो। छाती से श्वास मत लो। वह एक चाल है; सभ्यता, शिक्षा और नैतिकता ने हमें उथली श्वास सिखा दी है। केंद्र में गहरे उतरना जरूरी है, अन्यथा तुम गहरी श्वास नहीं ले सकते।
जब तक मनुष्य समाज कामवासना के प्रति गैर-दमन की दृष्टि नहीं
अपनाता, तब तक वह सच में श्वास नहीं ले सकता। अगर श्वास पेट तक गहरी जाए तो वह काम केंद्र को ऊर्जा देती है। वह काम केंद्र को छूती है। उसकी

भीतर से मालिश करती है। तब काम-केंद्र अधिक सक्रिय, अधिक जीवंत हो उठता है। और सभ्यता कामवासना से भयभीत है।
हम अपने बच्चों को जननेंद्रिय छूने नहीं देते है। हम कहते है,
रुको, उन्हें छुओ मत। जब बच्चा पहली बार जननेंद्रिय छूता है तो उसे देखो; और कहो, रुको; और तब उसकी श्वास क्रिया को देखो। जब तुम कहते हो, रुको, जननेंद्रिय मत छुओ। तो उसकी श्वास तुरंत उथली हो जायेगी। क्योंकि उसका हाथ ही काम केंद्र को नहीं छू रहा। गहरे में उसकी श्वास भी उसे छू रही है। अगर श्वास उसे छूती रहे तो हाथ को रोकना कठिन है। और अगर हाथ रुकता है तो बुनियादी तौर से जरूरी हो जाता है कि श्वास गहरी न होकर उथली रहे।
हम काम से भयभीत है। शरीर का निचला हिस्सा शारीरिक तल पर ही नहीं
मूल्य के तल पर भी निचला हो गया है। वह निचला कहकर निंदित है। इसलिए गहरी श्वास नहीं, उथली श्वास लो। दुर्भाग्य की बात है कि श्वास नीचे को ही जाती है। अगर उपदेशक की चलती तो वह पूरी यंत्र रचना को बदल देता। वह सिर्फ ऊपर की और, सिर में श्वास लेने की इजाजत देता। और तब कामवासना बिलकुल अनुभव नहीं होती।
अगर काम विहीन मनुष्य को जन्म देना है तो श्वास-प्रणाली को बिलकुल
बदल देना होगा। तब श्वास को सिर में सहस्त्रार में भेजना होगा। और वहां से मुंह में वापस लाना होगा। मुंह से सहस्त्रार उसका मार्ग होगा। उसे नीचे गहरे में नहीं जाने देना होगा। क्योंकि वहां खतरा है। जितने गहरे उतरोगे उतने ही जैविकी के गहरे तलों पर पहुंचोगे। तब तुम केंद्र पर पहुंचोगे। और वह केंद्र काम केंद्र के पास ही है। ठीक भी है, क्योंकि काम ही जीवन है।
इसे इस तरह देखो। श्वास ऊपर से नीचे को जाने वाला जीवन है। काम ठीक दूसरी दिशा से नीचे से ऊपर को जाने वाला जीवन है। काम-ऊर्जा बह रही है। और श्वास ऊर्जा बह रही है। श्वास का रास्ता ऊपर शरीर में है और काम का रास्ता निम्न शरीर में है। और जब श्वास और काम मिलते है। जीवन को जन्म देते है। इस लिए अगर तुम काम से डरते हो, तो दोनों के बीच दूरी बनाओ। उन्हें मिलने मत दो। सच तो यह है कि सभ्य आदमी बधिया किया हुआ आदमी है।
यही कारण है कि हम श्वास के संबंध में नह जानते, और हमें यह सूत्र समझना कठिन है।
शिव कहते है: जब कभी अंत:श्वास और बहिर्श्वास एक दूसरे में विलीन
होती है। उस क्षण में ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केंद्र को स्पर्श करों। शिव परस्पर विरोधी शब्दावली का उपयोग करते है। ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित। वह ऊर्जारहित है, क्योंकि तुम्हारे शरीर, तुम्हारे मन उसे ऊर्जा नहीं दे सकते। तुम्हारे शरीर की ऊर्जा और मन की ऊर्जा वहां नहीं है। इसलिए जहां तक तुम्हारे तादात्म्य का संबंध है, वह ऊर्जारहित है। लेकिन वह ऊर्जापूरित है, क्योंकि उसे ऊर्जा का जागतिक स्त्रोत उपलब्ध है।
तुम्हारे शरीर की ऊर्जा को ईंधन है—पेट्रोल जैसी। तुम कुछ खाते- पीते हो उससे ऊर्जा बनती है। खाना पीना बंद कर दो और शरीर मृत हो जाएगा। तुरंत नहीं कम से कम तीन महीने लगेंगे। क्योंकि तुम्हारे पास पेट्रोल का एक खजाना भी है। तुमने बहुत ऊर्जा जमा की हुई है, जो कम से कम तीन महीने काम दे सकती है। शरीर चलेगा, उसके पास जमा ऊर्जा थी। और किसी आपत्काल में उसका उपयोग हो सकता है। इसलिए शरीर ऊर्जा-ईंधन ऊर्जा है। केंद्र को ईंधन-ऊर्जा नहीं मिलती है। यही कारण है कि शिव उसे ऊर्जारहित कहते है। वह तुम्हारे खाने पीने पर निर्भर नहीं है। वह जागतिक स्त्रोत से जुड़ा हुआ है, वह जागतिक ऊर्जा है। इसलिए शिव उसे ‘’ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केंद्र कहते है। जिस क्षण तुम उस केंद्र को

अनुभव करोगे जहां से श्वास जाती -आती है , जहां श्वास विलीन होती है , उस क्षण तुम आत्मोपलब्ध हुए।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible],

([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)

[illegible]-2

[illegible]-[illegible]—[illegible]—04

[illegible]: [illegible], [illegible]—[illegible]

लेकिन तब तो यह विधि सब के लिए कठिन है , क्योंकि शिव कहते है कि ''केवल अशुद्ध के लिए कठिन है। ''

लेकिन कौन शुद्ध है ? तुम्हारे लिए यह कठिन है ; तुम इसका अभ्यास नहीं कर सकते। लेकिन कभी अचानक इसका अनुभव तुम्हें हो सकता है। तुम कार चला रहे हो और अचानक तुम्हें लगता है कि दुर्धटना होने जा रही है। श्वास बंद हो जाएगी। अगर वह बाहर है तो बाहर ही रह जाएगी। और भी अगर वह भीतर है तो वह भीतर ही रह जायेगी। ऐसे संकट काल में तुम श्वास नहीं ले सकते : तुम्हारे बस में नहीं है। सब कुछ ठहर जाता है। विदा हो जाता है।

''या जब श्वास पूरी तरह बाहर गई है और स्वत : ठहरी है , या पूरी तरह भीतर आई है और ठहरी है —ऐसे जागतिक विराम के क्षण में व्यक्ति का क्षुद्र अहंकार विसर्जित हो जाता है। ''

तुम्हारा क्षुद्र अहंकार दैनिक उपयोगिता की चीज है। संकट की घड़ी में तुम उसे नहीं याद रख सकते। तुम जो भी हो , नाम बैंक बैलेंस , प्रतिष्ठा , सब काफूर हो जाता है। तुम्हारी कार दूसरी कार से टकराने जा रही है। एक क्षण , और मृत्यु हो जाएगी। इस क्षण में एक विराम होगा , अशुद्ध के लिए भी विराम होगा। ऐसे क्षण में अचानक श्वास बंद हो जाती है। और उस क्षण में अगर तुम बोधपूर्ण हो सके तो तुम उपलब्ध हो जाओगे।

जापान में झेन संतों ने इस विधि का बहुत उपयोग किया। इसीलिए उनके उपाय अनूठे है। बेतुके और चकित करने वाले होते है। उन्होंने बहुत से ऐसे काम किए है जिन्हें तुम सोच भी नहीं सकते। एक गुरु किसी को घर के बाहर फेंक देगा। अचानक और अकारण गुरु शिष्य को चांटा मारने लग जायेगा। तुम गुरु के साथ बैठे थे। और अभी तक सब कुछ ठीक था। तुम गपशप कर रहे थे। और वह तुम्हें मारने लगा ताकि विराम पैदा हो।

अगर गुरु सकारण ऐसा करे तो विराम नहीं पैदा होगा। अगर तुमने गुरु को गाली दी होती और गुरु तुम्हें पीटता तो पीटना सकारण होता है। तुम्हारा मन समझ जाता कि मेरी गाली के लिए मुझे मार लगी। असल में तुम्हारा मन उसकी अपेक्षा करता। इसलिए विराम नहीं पैदा होगा। लेकिन याद रहे , झेन

गुरु गाली देने पर तुम्हें नहीं मारेगा। वह हंसेगा, क्योंकि तब हंसी विराम पैदा कर सकती है। तुम गाली दे रहे थे, अनाप-शनाप बक रहे थे, और क्रोध का इंतजार कर रहे थे। लेकिन गुरु हंसना या नाचना गुरु कर देता है। यह अचानक है और इससे विराम पैदा होगा। तुम उसे नहीं समझ पाओगे। और अगर नहीं समझ सके तो मन ठहर जाएगा। और जब मन ठहरता है तो श्वास भी ठहर जाती है।
दोनों ढंग से घटना घटती है। अगर श्वास रूक जाती है। या अगर मन
रुकता है तो श्वास रूक जाती है। तुम गुरु की प्रशंसा कर रहे थे, तुम अच् छी मुद्रा में थे और सोचते थे कि गुरु प्रसन्न ही होगा। और गुरु अचानक डंडा उठा लेता है और तुम्हें मारने लगता है, वह भी बेरहमी से, क्योंकि झेन गुरु बेरहम होते है। वह तुम्हें पीटने लगता है और तुम समझ नहीं पाते हो कि क्या हो रहा है। उस क्षण मन ठहर जाता है, विराम घटित होता है। और अगर तुम्हें विधि मालूम है तो तुम आत्मोपलब्ध हो सकते हो।
अनेक कथाएं है कि कोई बुद्धत्व को उपलब्ध हो गया जब गुरू अचानक
उसे मारने लगा था। तुम नहीं समझोगे। क्या नासमझी है। किसी से पीटने पर या खिड़की से बाहर फेंक दिए जाने पर कोई बुद्धत्व को कैसे उपलब्ध हो सकता है। अगर तुम्हें कोई मार भी डाले तो भी तुम बुद्धत्व को उपलब्ध नहीं हो सकते। लेकिन अगर इस विधि को तुम समझते हो तो इस तरह की घटनाओं को समझना आसान होगा।
पश्चिम में पिछले तीस-चालीस वर्षों के दरम्यान झेन बहुत फैला है। फैशन की तरह। लेकिन जब तक वे इस विधि को नहीं जानेंगे, वे झेन को नहीं समझ सकते है। वह इसका अनुकरण कर सकते है, लेकिन अनुकरण किसी काम का नहीं होता है। बल्कि वह खतरनाक है। यह चीज अनुकरण करने की नहीं है।
समूची झेन विधि शिव की चौथी विधि पर आधारित है। लेकिन कैसे
दुर्भाग्य कि अब हमें जापान से झेन का आयात करना होगा; क्योंकि हमने पूरी परंपरा खो दी है। हम उसे नहीं जानते। शिव इस विधि के बेजोड़ विशेषज्ञ थे। जब वे अपनी बरात लेकर देवी को ब्याहने पहुंचे थे, समूचे नगर ने विराम अनुभव किया होगा।
देवी के पिता अपनी बेटी को इस हिप्पी के साथ ब्याहने को बिलकुल
राज़ी नहीं थे। शिव मौलिक हिप्पी थे। देवी के पिता उनके बिलकुल खिलाफ थे। कोई भी पिता ऐसे विवाह की अनुमति नहीं दे सकता है। इसलिए हम देवी के पिता के खिलाफ कुछ नहीं कह सकते। कौन पिता शिव से विवाह की अनुमति देगा? और तब देवी हठ कर बैठी। और उन्हें अनिच्छा से, खेद पूर्वक अनुमति देनी पड़ी।
और फिर बरात आई। कहा जाता है कि शिव और उनकी बरात देखकर लोग भागने
लगे। समूची बराम मानो एल. एस. डी. मारीजुआना, भाँग और गांजा जैसी चीजें खाकर आये थे। लोग नशे में चूर थे। सच तो यह है कि एल. एस. डी. और मारीजुआना आरंभिक चीजें है। शिव और उनके दोस्तों और शिष्यों को उस परम मनोमद्य का पता था जिसे वह सोमरस कहते थे। अल्डुअस हक्सले ने शिव के कारण ही परम मनोमद्य को सोमा नाम दिया है। वे मतवाले थे, नाचते थे, गाते थे, चीखते-चिल्लाते थे। समूचा नगर भाग खड़ा हुआ। अवश्य ही विराम का अनुभव हुआ होगा।
अशुद्ध के लिए कोई भी आकस्मिक, अप्रत्याशित, अविश्वसनीय चीज
विराम पैदा कर सकती है। लेकिन शुद्ध के लिए ऐसी चीजों की जरूरत नहीं है। शुद्ध के लिए तो हमेशा विराम उपलब्ध है। विराम ही विराम है। कई बार शुद्ध चित के लिए श्वास अपने आप ही रूक जाती है। अगर तुम्हारा चित शुद्ध है—शुद्ध का अर्थ। है कि तुम किसी चीज की चाहना नहीं करते, किसी के पीछे भागते नहीं—मौन और शुद्ध है, सरल और शुद्ध है, तो तुम बैठे रहोगे और अचानक तुम्हारी श्वास रूक जाएगी।

याद रखो कि मन की गति के लिए श्वास की गति आवश्यक है; मन के तेज चलने के लिए श्वास का तेज चलना आवश्यक है। यही कारण है कि जब तुम क्रोध में होते हो तो तुम्हारी श्वास तेज चलती है। और यही कारण है कि आयुर्वेद में कहा गया है कि मैथुन अतिशय होगा तो तुम्हारी आयु कम हो जायेगी। आयुर्वेद श्वास से आयु का हिसाब रखता है। अगर तुम्हारी श्वास-क्रिया बहुत तीव्र है तो तुम चिरायु नहीं हो सकते।

आधुनिक चिकित्सा कहती है कि काम भोग रक्त प्रवाह में और विश्राम में जाने में सहयोगी होता है। और जो लोग कामवासना का दमन करते है, वे मुसीबत में पड़ते है। खासकर ह्रदय रोग के शिकार होते है।

आधुनिक चिकित्सा ठीक कहती है। अपनी-अपनी जगह आयुर्वेद भी सही है और आधुनिक चिकित्सा भी; यद्यपि दोनों परस्पर विरोधी मालूम होते है।

आयुर्वेद का आविष्कार आज से पाँच हजार साल पहल हुआ था। तब आदमी काफी श्रम करता था; जीवन ही श्रम था। इसलिए विश्राम की जरूरत नहीं थी। और रक्त प्रवाह के लिए कृत्रिम उपायों की भी जरूरत नहीं थी। लेकिन अब जिन लोगों को बहुत शारीरिक श्रम नहीं करना पड़ता है उनके लिए काम भोग ही श्रम है।

इसलिए आधुनिक आदमी के बाबत आधुनिक चिकित्सा सही है। वह शारीरिक श्रम नहीं करता है, उनके लिए काम भोग श्रम है। काम मे उसकी ह्रदय की धड़कन तेज हो जाती है, उसका रक्त प्रवाह बढ़ जाता है और उसकी श्वास क्रिया गहरी होकर केंद्र तक पहुंच जाती है। इसलिए संभोग के बाद तुम शिथिल अनुभव करते हो और आसानी से नींद में उतर जाते हो। फ्रायड कहता है कि संभोग सबसे बढ़िया नींद की दवा है। ट्रैंक्विलाइजर है। और आधुनिक आदमी के लिए फ्रायड सही भी है।

काम भोग में क्रोध में श्वास क्रिया तेज हो जाती है। काम भोग में मन वासना से, लोग से अशुद्धियों से भरा होता है। जब मन शुद्ध होता है, मन में कोई वासना नहीं होती है, कोई चाह, कोई दौड़ कोई प्रयोजन नहीं होता है, तुम कहीं जा नहीं रहे होते हो, तुम निर्दोष जलाशय की तरह अभी और यहीं ठहरे हुए होते हो, कोई लहर भी नहीं होती है। तब श्वास अपने आप ही ठहर जाती है—अकारण।

इस मार्ग पर क्षुद्र अहंकार विसर्जित हो जाता है। और तुम उच्चात्मा को, परमात्मा को उपलब्ध हो जाते हो।

□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□(□□□□□-□□□□□—□□□-1)
□□□□□□-2

□□□□□-□□□□□—□□□□-05

□□□□□□□□□ □□ □□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□ □□ □□□□□ □□□□ □□□ □□□□□□□□□ □□ □□□ □□ □□□□□-□□□□ □□, □□□□□ □□ □□□□ □□□ □□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□ □□□□□□□

यह विधि पाइथागोरस को दी गई थी। पाइथागोरस इसे लेकर यूनान वापस गए। और वह पश्चिम के समस्त रहस्यवाद के आधार बन गए। पश्चिम में अध्यात्मवाद के वे पिता है। यह विधि बहुत गहरी विधियों में ऐ एक है। इसे समझने की कोशिश करो।

‘’भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर करो।‘’

आधुनिक शरीर-शस्त्र कहता है, वैज्ञानिक शोध कहती है कि दो भृकुटियों के बीच में ग्रंथि है वह शरीर का सबसे रहस्यपूर्ण भाग है। जिसका नाम पाइनियल ग्रंथि है। यही तिब्बतियों की तीसरी आँख है। और यही

है शिव का नेत्र। तंत्र के शिव का त्रिनेत्र। दो आंखों के बीच एक तीसरी आँख भी है। लेकिन यह सक्रिय नहीं है। यह है, और यह किसी भी समय सक्रिय हो सकती है। निसर्गत: यह सक्रिय नहीं है। इसको सक्रिय करने के लिए संबंध में तुम को कुछ करना पड़ेगा। यह अंधी नहीं है, सिर्फ बंद है। यह विधि तीसरी आँख को खोलने की विधि है।
‘’भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर.....।‘’
आंखे बंद कर लो और फिर दोनों आंखों को बंद रखते हुए भौंहों के बीच
में दृष्टि को स्थिर करो—मानो कि दोनों आंखों से तुम देख रहे हो। और समग्र अवधान को वही लगा दो।
यह विधि एकाग्र होने की सबसे सरल विधियों में से एक है। शरीर के
किसी दूसरे भाग में इतनी आसानी से तुम अवधान को नहीं उपलब्ध हो सकते। यह ग्रंथि अवधान को अपने में समाहित करने में कुशल है। यदि तुम इस पर अवधान दोगे तो तुम्हारी दोनों आंखे तीसरी आँख से सम्मोहित हो जाएंगी। वे थिर हो जाएंगी, वे वहां से नहीं हिल सकेंगी। यदि तुम शरीर के किसी दूसरे हिस्से पर अवधान दो तो वहां कठिनाई होगी। तीसरी आँख अवधान को पकड़ लेती है। अवधान को खींच लेती है। अवधान के लिए वह चुंबक का काम करती है। इसलिए दुनिया भी की सभी विधियों में इसका समावेश किया गया है।
अवधान को प्रशिक्षित करने में यह सरलतम है, क्योंकि इसमे तुम ही चेष्टा नही करते, यह ग्रंथि भी तुम्हारी मदद करती है। यह चुंबकीय है। तुम्हारे अवधान को यह बलपूर्वक खींच लेती है।
तंत्र के पुराने ग्रंथों में कहा गया है कि अवधान तीसरी आँख का
भोजन है। यह भूखी है; जन्मों-जन्मों से भूखी है। जब तुम इसे अवधान देते हो यह जीवित हो उठती है। इसे भोजन मिल गया है। और जब तुम जान लोगे कि अवधान इसका भोजन है, जान लोगे कि तुम्हारे अवधान को यह चुंबक की तरह खींच लेती है। तब अवधान कठिन नहीं रह जाएगा। सिर्फ सही बिंदु को जानना है।
इस लिए आँख बंद कर लो, और अवधान को दोनों आंखों के बीच में घूमने दो
और उस बिंदू को अनुभव करो। जब तुम उस बिंदु के करीब होगें। अचानक तुम् हारी आंखे थिर हो जाएंगी। और जब उन्हें हिलाना कठिन हो जाए तब जानो कि सही बिंदु मिल गया।
‘’भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने रखो।‘’
अगर यह अवधान प्राप्त हो जाए तो पहली बार एक अद्भुत बात तुम्हारे अनुभव में आएगी। पहली बार तुम देखोगें कि तुम्हारे विचार तुम्हारे सामने चल रहे है, तुम साक्षी हो जाओगे। जैसे कि सिनेमा के पर्दे पर दृश् य देखते हो, वैसे ही तुम देखोगें कि विचार आ रहे है, और तुम साक्षी हो। एक बार तुम्हारा अवधान त्रिनेत्र-केंद्र पर स्थिर हो जाए तुम तुरंत विचारों के साक्षी हो जाओगे।
आमतौर से तुम साक्षी नहीं होते, तुम विचारों के साथ तादात्म्य कर
लेते हो। यदि क्रोध है तो तुम क्रोध हो जाते हो। यदि एक विचार चलता है तो उसके साक्षी होने की बजाएं तुम विचार के साथ एक हो जाते हो। उससे तादात् म्य करके साथ-साथ चलने लगते हो। तुम विचार ही बन जाते हो, विचार का रूप ले लेते हो, जब क्रोध उठता है तो तुम क्रोध बन जाते हो। और जब लोभ उठता है तब लोभ बन जाते हो। कोई भी विचार तुम्हारे साथ एकात्म हो जाता है। और उसके ओर तुम्हारे बीच दूरी नहीं रहती।
लेकिन तीसरी आँख पर स्थिर होते ही तुम एकाएक साक्षी हो जाते हो।
तीसरी आँख के जरिए तुम साक्षी बनते हो। इस शिवनेत्र के द्वारा तुम विचारों को वैसे ही चलता देख सकते हो जैसे आसमान पर तैरते बादलों को, या रहा पर चलते लोगो को देखते हो।

जब तुम अपनी खिड़की से आकाश कोया रहा चलते लोगों को देखते हो तब
तुम उनसे तादात्म्य नहीं करते। तब तुम अलग होते हो, मात्र दर्शक रहते हो — बिलकुल अलग। वैसे ही अब जब क्रोध आता है तब तुम उसे एक विषय की तरह देखते हो। अब तुम यह नहीं सोचते कि मुझे क्रोध हुआ। तुम यही अनुभव करते हो कि तुम क्रोध से घिरे हो। क्रोध की एक बदली तुम्हारे चारो और घिर गई। और जब तुम खुद क्रोध नहीं रहे तब क्रोध नापुंसग हो जाता है। तब वह तुमको नहीं प्रभावित कर सकता। तब तुम अस्पर्शित रह जाते हो। क्रोध आता है और चला जाता है। और तुम अपने में केंद्रित रहते हो।
यह पाँचवीं विधि साक्षित्व को प्राप्त करने की विधि है।
‘’भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर कर विचार को मन के सामने करो।‘’
अब अपने विचारों को देखो, विचारों का साक्षात्कार करो।
‘’फिर सहस्त्रार तक रूप को श्वास तत्व से प्राण से भरने दो। वहां
वह प्रकाश की तरह बरसेगा।‘’
जब अवधान भृकुटियों के बीच शिवनेत्र के केंद्र पर स्थिर होता है।
तब दो चीजें घटित होती है।
और यही चीज दो ढंगों से हो सकती है। एक, तुम साक्षी हो जाओ तो तुम तीसरी आँख पर थिर हो जाते हो। साक्षी हो जाओ, जो भी हो रहा हो उसके साक्षी हो जाओ। तुम बीमार हो, शरीर में पीड़ा है, तुम को दुःख और संताप है, जो भी हो, तुम उसके साक्षी रहो, जो भी हो, उससे तादात्म्य न करो। बस साक्षी रहो—दर्शक भर। और यदि साक्षित्व संभव हो जाए, तो तुम तीसरे नेत्र पर स्थिर हो जाओगे।
इससे उलटा भी हो सकता है। यदि तुम तीसरी आँख पर स्थिर हो जाओ, तो साक्षी हो जाओगे।। ये दोनों एक ही बात है।
इसलिए पहली बात: तीसरी आँख पर केंद्रित होते ही साक्षी आत्मा का
उदय होगा। अब तुम अपने विचारों का सामना कर सकते हो। और दूसरी बात: और अब तुम श्वास-प्रश्वास की सूक्ष्म और कोमल तरंगों को भी अनुभव कर सकते हो। अब तुम श्वसन के रूप को ही नहीं, उसके तत्व को, सार को, प्राण को भी समझ सकते हो।
पहले तो यह समझने की कोशिश करें कि ‘’रूप’’ और ‘’श्वास-तत्व’’ का क्या अर्थ है। जब तुम श्वास लेते हो, तब सिर्फ वायु की ही श्वास नहीं लेते।
वैज्ञानिक तो यही कहते है कि तुम वायु की ही श्वास लेते हो। जिसमें आक् सीजन, हाइड्रोजन तथा अन्य तत्व रहते है। वे कहते है कि तुम वायु की श् वास लेते हो।
लेकिन तंत्र कहता है कि हवा तो मात्र वाहन है, असली चीज नहीं है।
असल में तुम प्राण की श्वास लेते हो। हवा तो माध्यम भर है। प्राण उसका सत्व है, सार है। तुम न सिर्फ हवा की, बल्कि प्राण की श्वास लेते हो। आधुनिक विज्ञान अभी नहीं जान सका है कि प्राण जैसी कोई वस्तु भी
है। लेकिन कुछ शोधकर्ताओं ने कुछ रहस्यमयी चीज का अनुभव किया है। श्वास में सिर्फ हवा हम नहीं लेते, वह बहुत से आधुनिक शोधकर्ताओं ने अनुभव किया है। विशेषकर एक नाम उल्लेखनीय है। वह है जर्मन मनोवैज्ञानिक विलहेम रेख का। जिसने इसे आर्गन एनर्जी या जैविक ऊर्जा का नाम दिया है। वह प्राण ही है। वह कहता है कि जब आप श्वास लेते है, तब हवा तो मात्र आधार है, पात्र है, जिसके भीतर एक रहस्यपूर्ण तत्व है, जिसे आर्गन या प्राण या एलेन वाइटल कह सकते है। लेकिन वह बहुत सूक्ष्म है। वास्तव में वह भौतिक नहीं है। पदार्थ गत नहीं है। हवा भौतिक है, पात्र भौतिक है; लेकिन उसके भीतर से कुछ सूक्ष्म, अलौकिक तत्व चल रहा है।
इसका प्रभाव अनुभव किया जा सकता है। जब तुम किसी प्राणवान व्यक्
ति के पास होते हो, तो तुम अपने भीतर किसी शक्ति को उगते देखते हो। और जब किसी बीमार के पास होते हो, तो तुमको लगता है कि तुम चूसे जा रहे हो।

तुम्हारे भीतर से कुछ निकाला जा रहा है। जब तुम अस्पताल जाते हो, तब थके-थके क्यों अनुभव करते हो? वहां चारों ओर से तुम चूसे जाते हो। अस् पताल का पूरा माहौल बीमार होता है और वहां सब किसी को अधिक प्राण की, अधिक एलेन वाइटल की जरूरत है। इसलिए वहां जाकर अचानक तुम्हारा प्राण तुमसे बहने लगता है। जब तुम भीड़ में होते हो, तो तुम घुटन महसूस क्यों करते हो। इसलिए कि वहां तुम्हारा प्राण चूसा जाने लगता है। और जब तुम प्रात: काल अकेले आकाश के नीचे या वृक्षों के बीच होते हो, तब फिर अचानक तुम अपने में किसी शक्ति का, प्राण का उदय अनुभव करते हो। प्रत्येक का एक खास स्पेस की जरूरत है। और जब वह स्पेस नहीं मिलता है तो तुमको घुटन महसूस होती है।
विलहेम रेख ने कई प्रयोग किए। लेकिन उसे पागल समझा गया। विज्ञान
के भी अपने अंधविश्वास है। और विज्ञान बहुत रूढ़िवादी होता है।
विज्ञान अभी भी नहीं समझता है कि हवा से बढ़कर कुछ है; वह प्राण है।
लेकिन भारत सदियों से उस पर प्रयोग कर रहा है।
तुमने सुना होगा—शायद देखा भी हो—कि कोई व्यक्ति कई दिनों के
लिए भूमिगत समाधि में प्रवेश कर गया। जहां हवा का कोई प्रवेश नहीं था।
1880 में मिस्त्र में एक आदमी चालीस वर्षों के लिए समाधि में चला गया था। जिन्होंने उसे गाड़ा था वे सभी मर गए। क्योंकि वह 1920 में समाधि से बहार आने वाला था।
1920 में किसी को भरोसा नहीं था कि वह जीवित मिलेगा। लेकिन वह
जीवित था और उसके बाद भी वह दस वर्षों तक जीवित रहा। वह बिलकुल पीला पड़ गया था, परंतु जीवित था। और उसको हवा मिलने की कोई संभावना नहीं थी। डॉक्टरों ने तथा दूसरों ने उससे पूछा कि इसका रहस्य क्या है? उसने कहां हम नहीं जानते; हम इतना ही जानते है कि प्राण कही भी प्रवेश कर सकता है। और वह है। हवा वहां नहीं प्रवेश कर सकती, लेकिन प्राण कर सकता है। एक बार तुम जान जाओ कि श्वास के बिना भी कैसे तुम प्राण को सीधे
ग्रहण कर सकते हो, तो तुम सदियों तक के लिए भी समाधि में जा सकते हो। तीसरी आँख पर केंद्रित होकर तुम श्वास के सार तत्व को, श्वास को
नहीं, श्वास के सार तत्व प्राण को देख सकेत हो। और अगर तुम प्राण को देख सके, तो तुम उस बिंदु पर पहुंच गए जहां से छलांग लग सकती है, क्रांति घटित हो सकती है।
सूत्र कहता है: ‘’सहस्त्रार तक रूप को प्राण से भरने दो।‘’
और जब तुम को प्राण का एहसास हो, तब कल्पना करो कि तुम्हारा सिर
प्राण से भर गया है। सिर्फ कल्पना करो, किसी प्रयत्न की जरूरत नहीं है। और मैं बताऊंगा कि कल्पना कैसे काम करती है। तब तुम त्रिनेत्र-बिंदु पर स्थिर हो जाओ तब कल्पना करो, और चीजें आप ही और तुरंत घटित होने लगती है। अभी तुम्हारी कल्पना भी नपुंसक है। तुम कल्पना किए जाते हो और कुछ
भी नहीं होता। लेकिन कभी-कभी अनजाने साधारण जिंदगी में भी चीजें घटित होती है। तुम अपने मित्र की सोच रहे हो और अचानक दरवाजे पर दस्तक होती है। तुम कहते हो कि सांयोगिक था कि मित्र आ गया। कभी तुम्हारी कल्पना संयोग की तरह भी काम करती है।
लेकिन जब भी ऐसा हो, तो याद रखने की चेष्टा करो और पूरी चीज का विश्लेषण करो। जब भी लगे कि तुम्हारी कल्पना सच हुई है। तुम भीतर जाओ और देखो। कहीं न कहीं तुम्हारा अवधान तीसरे नेत्र के पास रहा होगा। दरअसल यह संयोग नहीं था। यह वैसा दिखता है; क्योंकि गुह्म विज्ञान का तुमको पता नहीं है। अनजाने ही तुम्हारा मन त्रिनेत्र केंद्र के पास चला गया होगा। और अवधान यदि तीसरी आँख पर है तो किसी घटना के सृजन के लिए उसकी कल्पना काफी है।
यह सूत्र कहता है कि जब तुम भृकुटियों के बीच स्थिर हो और प्राण को

अनुभव करते हो, तब रूप को भरने दो। अब कल्पना करो कि प्राण तुम्हारे पूरे मस्तिष्क को भर रहे है। विशेषकर सहस्त्रार को जो सर्वोच्च मनस केंद्र है। उस क्षण तुम कल्पना करो। और वह भर जाएगा। कल्पना करो कि वह प्राण तुम्हारे सहस्त्रार से प्रकाश की तरह बरसेगा। और वह बरसने लगेगा। और उस प्रकाश की वर्षा में तुम ताजा हो जाओगे। तुम्हारा पुनर्जन्म हो जाएगा। तुम बिलकुल नए हो जाओगे। आंतरिक जन्म का यही अर्थ है।
यहां दो बातें है। एक, तीसरी आँख पर केंद्रित होकर तुम्हारी कल्
पना पुंसत्व को, शुद्धि को उपलब्ध हो जाती है। यही कारण है कि शुद्धता पर, पवित्रता पर इतना बल दिया गया है। इस साधना में उतरने के पहले शुद्ध बने।
तंत्र के लिए शुद्धि कोई नैतिक धारणा नहीं हे। शुद्धि इसलिए अर्थपूर्ण है कि यदि तुम तीसरी आँख पर स्थिर हुए और तुम्हारा मन अशुद्ध रहा, तो तुम्हारी कल्पना खतरनाक सिद्ध हो सकती है—तुम्हारे लिए भी और दूसरें के लिए भी। यदि तुम किसी की हत्या करने की सोच रहे हो, उसका महज विचार भी मन में है। तो सिर्फ कल्पना से उस आदमी की मृत्यु घटित हो जाएगी। यही कारण है कि शुद्धता पर इतना जोर दिया जाता है।
पाइथागोरस को विशेष उपवास और प्राणायाम से गुजरने को कहा गया; क् योंकि यहां बहुत खतरनाक भूमि से यात्री गुजरता है। जहां भी शक्ति है, वहां खतरा है। यदि मन अशुद्ध है तो शक्ति मिलने पर आपके अशुद्ध विचार शक्ति पर हावी हो जाएंगे।
कई बार तुमने हत्या करने की सोची है; लेकिन भाग्य से वहां कल्पना न
काम नहीं किया। यदि वह काम करे, यदि वह तुरंत वास्तविक हो जाए तो वह दूसरों के लिए ही नहीं तुम्हारे लिए भी खतरनाक सिद्ध हो सकती है। क् योंकि कितनी ही बार तुमने आत्म हत्या की सोची है। अगर मन तीसरी आँख पर केंद्रित है तो आत्महत्या का विचार भी आत्महत्या बन जाएगा। तुमको विचार बदलने का समय भी नहीं मिलेगा। वह तुरंत घटित हो जाएगी।
तुमने किसी को सम्मोहित होते देखा है। जब कोई सम्मोहित किया जाता
है, तब सम्मोहन विद जो भी कहता है, सम्मोहित व्यक्ति तुरंत उसका पालन करता है। आदेश कितना ही बेहूदा हो तर्कहीन हो असंभव ही क्या न हो। सम् मोहित व्यक्ति उसका पालन करता है। क्या होता है?
यह पांचवी विधि सब सम्मोह न की जड़ में है। जब कोई सम्मोहित किया
जाता है, तब उसे एक विशेष बिंदू पर, किसी प्रकाश पर या दीवार पर लगे किसी चिन्ह पर या किसी भी चीज पर या सम्मोहक की आँख पर ही अपनी दृष्टि केंद्रित करने को कहा जाता है। और जब तुम किसी खास बिंदू पर दृष्टि केंद्रित करते हो, उसके तीन मिनट के अंदर तुम्हारा आंतरिक अवधान तीसरी आँख की और बहने लगता है। तुम्हारे चेहरे की मुद्रा बदलने लगती है। और सम्मोहन विद जानता है कि कब तुम्हारा चेहरा बदलने लगा। एकाएक चेहरे से सारी शक्ति गायब हो जाती है। वह मृत वत हो जाता है। मानों गहरी तंद्रा में पड़े हो। जब ऐसा होता है, सम्मोहक को उसका पता हो जाता है। उसका अर्थ हुआ कि तीसरी आँख अवधान को पी रही है। आपका चेहरा पीला पड़ गया है। पूरी ऊर्जा त्रिनेत्र केंद्र की और बह रही है।
अब सम्मोहित करने वाला तुरंत जान जाता है। कि जो भी कहा जाएगा। वह
घटित होगा। वह कहता है कि अब तुम गहरी नींद में जा रहे हो, और तुम तुरंत सो जाते हो। वह कहता है कि अब तुम बेहोश हो रहे हो और तुम बेहोश हो जाते हो। अब कुछ भी किया जा सकता है। अब अगर वह कहे कि तुम नेपोलियन या हिटलर हो गए हो तो तुम हो जाओगे। तुम्हारी मुद्रा बदल जायेगी। आदेश पाकर तुम् हारा अचेतन उसका वास्तविक बना देता है। अगर तुम किसी रोग से पीडित हो तो रोग को हटने का आदेश देगा, और मजेदार बात रोग दूर हो जायेगा। या कोई नया

रोग भी पैदा किया जा सकता है।
यही नहीं, सड़क पर से एक कंकड़ उठा कर अगर सम्मोहन विद तुम्हारी
हथेली पर रख दे और कहे कि यह अंगारा है तो तुम तेज गर्मी महसूस करोगे और तुम्हारी हथेली जल जाएगी—मानसिक तल पर नहीं, वास्तव में ही। वास्तव में तुम्हारी चमड़ी जब लायेगी और तुम्हें जलन महसूस होगी। क्या होता है? अंगारा नहीं, बस एक मामूली कंकड़ है वह भी ठंडा, फिर भी जलना ही नहीं हाथ पर फफोले तक उगा देता है।
तुम तीसरी आँख पर केंद्रित हो और सम्मोहन विद तुमको सुझाव देता है
और वह सुझाव वास्तविक हो जाता है। यदि सम्मोहन विद कहे कि अब तुम मर गए, तो तुम तुरंत मर जाओगे। तुम्हारी ह्रदय गति रूक जायेगी। रूक ही जाएगी। यह होता है त्रिनेत्र के चलते। त्रिनेत्र के लिए कल्पना और वास् तविकता दो चीजें नहीं है। कल्पना ही तथ्य है। कल्पना करें और वैसा ही जाएगा। स्वप्न और यथार्थ में फासला नहीं है। स्वप्न देखो और सच हो जायेगा।
यही कारण है कि शंकर ने कहा कि यह संसार परमात्मा के स्वप्न के
सिवाय और कुछ नहीं है—यह परमात्मा की माया है। यह इसलिए कि परमात्मा तीसरी आँख में बसता है—सदा, सनातन से। इसलिए परमात्मा जी स्वप्न देखता है वह सच हो जाता है। और यदि तुम भी तीसरी आँख में थिर हो जाओ तो तुम् हारे स्वप्न भी सच होने लगेंगे।
सारिपुत्र बुद्ध के पास आया। उसने गहरा धान किया। तब बहुत चीजें
घटित होने लगीं, बहुत तरह के दृश्य उसे दिखाई देने लगे। जो भी ध्यान की गहराई में जाता है। उसे यह सब दिखाई देने लगता है। स्वर्ग और नरक; देवता और दानव, सब उसे दिखाई देने लगे। और वह ऐसे वास्तविक थे कि सारिपुत्र बुद्ध के पास दौड़ा आया। और बोला कि ऐसे-ऐसे दृश्य दिखाई देते है। बुद्ध ने कहा, वे कुछ नहीं है। मात्र स्वप्न है।
लेकिन सारिपुत्र ने कहा कि वे इतने वास्तविक है कि मैं कैसे उन्
हें स्वप्न कहूं? जब एक फूल दिखाई पड़ता है, वह फूल किसी भी फूल से अधिक वास्तविक मालूम पड़ता है। उसमे सुगंध है। उसे मैं छू सकता हूं। अभी जो मैं आपको देखता हूं वह उतना वास्तविक नहीं है; आप जितना वास्तविक मेरे सामने है, वह फूल उससे अधिक वास्तविक है। इसलिए कैसे मैं भेद करूं कि कौन सच है, और कौन स्वप्न।
बुद्ध ने कहा, अब चूंकि तुम तीसरी आँख में केंद्रित हो, इसलिए स्
वप्न और यथार्थ एक हो गए है। जो भी स्वप्न तुम देखोगें सच हो जाएगा। और उससे ठीक उलटा भी घटित हो सकता है। जो त्रिनेत्र पर थिर हो गया, उसके लिए स्वप्न यथार्थ हो जाएगा। और यथार्थ स्वप्न हो जाएगा। क्योंकि जब तुम्हारा स्वप्न सच हो जाता है तब तुम जानते हो कि स्वप्न और यथार्थ में बुनियादी भेद नहीं है।
इसलिए जब शंकर कहते है कि सब संसार माया है, परमात्मा का स्वप्न
है, तब यह कोई सैद्धांतिक प्रस्तावना या कोई मीमांसक वक्तव्य नहीं है। यह उस व्यक्ति का आंतरिक अनुभव है जो शिवनेत्र में थिर हो गया है।
अंत: जब तुम तीसरे नेत्र पर केंद्रित हो जाओ तब कल्पना करो कि सहस् त्रार से प्राण बरस रहा है; जैसे कि तुम किसी वृक्ष के नीचे बैठे हो और फूल बरस रहे है, या तुम आकाश के नीचे हो और कोई बदली बरसने लगी। या सुबह तुम बैठे हो और सूरज उग रहा है और उसकी किरणें बरसने लगी है। कल्पना करो और तुरंत तुम्हारे सहस्त्रार से प्रकाश की वर्षा होने लगेगी। यह वर्षा मनुष्य को पुनर्निर्मित करती है, उसका नया जन्म दे जाती है। तब उसका पुनर्जन्म हो जाता है।
ओशो

[illegible] [illegible] [illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-2

[illegible]-[illegible]—[illegible]-06

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

‘’सांसरिक कामों में लगे हुए, अवधान को दो श्वासों के बीच टिकाओ...।‘’

श्वासों को भूल जाओं और उनके बीच में अवधान को लगाओ। एक श्वास भीतर आती है। इसके पहले कि वह लौट जाए, उसे बाहर छोड़ा जाए, वहां एक अंतराल होता है।

‘’सांसारिक कामों में लगे हुए। ‘’ यह छठी विधि निरंतर करने की है। इसलिए कहा गया है, ‘’सांसारिक कामों में लगे हुए....’’ जो भी तुम कर रहे हो, उसमे अवधान को दो श्वासों के अंतराल में थिर रखो। लेकिन काम-काज में लगे हुए ही इसे साधना है।

ठीक ऐसी ही एक दूसरी विधि की चर्चा हम कर चुके है। अब फर्क इतना है कि इसे सांसारिक कामों में लगे हुए ही करना है। उससे अलग होकर इसे मत करो। यह साधना ही तब करो जब तुम कुछ और काम कर रहे हो।

तुम भोजन कर रहे हो, भोजन करते जाओ और अंतराल पर अवधान रखो। तुम चल रहे हो, चलते जाओ और अवधान को अंतराल पर टिकाओ। तुम सोने जा रहे हो, लेटो और नींद को आने दो। लेकिन तुम अंतराल के प्रति सजग रहो।

पर काम-काज में क्यों? क्योंकि काम-काज मन को डांवाडोल करता है। काम-काज में तुम्हारे अवधान को बार-बार भुलाना पड़ता है। तो डांवाडोल न हों; अंतराल में थिर रहें। काम-काज भी न रूके, चलता रहे। तब तुम्हारे अस्तित्व के दो तल हो जाएंगे। करना ओर होना। अस्तित्व के दो तल ओ गए; एक करने का जगत और दूसरा होने का जगत। एक परिधि है और दूसरा केंद्र। परिधि पर काम करते रहो, रूको नहीं; लेकिन केंद्र पर भी सावधानी से काम करते रहो। क्या होगा?

तुम्हारा काम-काज तब अभिनय हो जाएगा। मानों तुम कोई पार्ट अदा कर रहे हो। उदाहरण के लिए, तुम किसी नाटक म पार्ट कर रहे हो। तुम राम बने हो या क्राइस्ट बने हो। यद्यपि तुम राम या क्राइस्ट का अभिनय करते हो, तो भी तुम स्वयं बने रहते हो। केंद्र पर तुम जानते हो कि तुम कौन हो और परिधि पर तुम राम या क्राइस्ट का या किसी का पार्ट अदा करते हो। तुम जानते हो कि तुम राम नहीं हो, राम का अभिनय भर कर रहे हो। तुम कौन हो तुमको मालूम है। तुम्हारा अवधान तुममें केंद्रिय है। और तुम्हारा काम परिधि पर जारी है।

यदि इस विधि का अभ्यास हो तो पूरा जीवन एक लंबा नाटक बन जाएगा। तुम

एक अभिनेता होगें। अभिनय भी करोगे और सदा अंतराल में केंद्रित रहोगे। जब तुम अंतराल को भूल जाओगे, तब तुम अभिनेता नहीं रहोगे, तब तुम कर्ता हो जाओगे। तब वह नाटक नहीं रहेगा। उसे तुम भूल से जीवन समझ लोगे।
यही हम सबने किया है। हर आदमी सोचता है कि वह जीवन जी रहा है। यह
जीवन नहीं है। यह तो एक रोल है, एक पार्ट है, जो समाज ने, परिस्थितियों ने, संस्कृति ने, देश की परंपरा ने तुमको थमा दिया है। और तुम अभिनय कर रहे हो। और तुम इस अभिनय के साथ तादात्म्य भी कर बैठे हो। उसी तादात्म्य को तोड़ने के लिए यह विधि है।
कृष्ण के अनेक नाम है, कृष्ण सबसे कुशल अभिनेताओं में से एक है। वे
सदा अपने में थिर है और खेल कर रहे है। लीला कर रहे है, बिलकुल गैर-गंभीर है। गंभीरता तादात्म्य से पैदा होती है।
यदि नाटक में तुम सच ही राम हो जाओ तो अवश्य समस्याएं खड़ी होगी।
जब-जब सीता की चोरी होगी, तो तुमको दिल का दौरा पड़ सकता है। और पूरा नाटक बंद हो जाना भी निश्चित है। लेकिन अगर तुम बस अभिनय कर रहे हो तो सीता की चोरी से तुमको कुछ भी नहीं होता है। तुम अपने घर लौटोगे। और चैन से सो जाओगे। सपने में भी ख्याल न आएगा। की सीता की चोरी हुई।
जब सचमुच सीता चोरी गई थी तब राम स्वयं रो रहे थे। चीख रहे थे और वृक्षों से पूछ रहे थे कि सीता कहां है? कौन उसे ले गया? लेकिन यह समझने जैसी बात है। अगर राम सच में रो रहे है और पेड़ों से पूछ रहे है, तब तो वे तादाम्तयता कर बैठे, तब वे राम न रहे, ईश्वर न रहे, अवतार न रहे। यह स् मरण रखना चाहिए। कि राम के लिए उनका वास्तविक जीवन भी अभिनय ही था। जैसे दूसरे अभिनेताओं को तुमने राम का अभिनय करते देखा है, वैसे ही राम भी अभिनय कर रहे थे—नि:संदेह एक बड़े रंग मंच पर।
इस संबंध में भारत के पास एक खुबसूरत कथा है। मेरी दृष्टि में यह
कथा अद्भुत है। संसार के किसी भी भाग में ऐसी कथा नहीं मिलेगी। कहते है कि वाल्मीकि ने राम के जन्म से पहले ही रामायण लिख दी। राम को केवल उसका अनुगमन करना था। इसलिए वास्तव में राम का पहला कृत्य भी अभिनय ही था। उनके जन्म के पहले ही कथा लिख दी गई थी, इसलिए उन्हें केवल उसका अनुगमन करना पडा। वे और क्या कर सकते थे। वाल्मीकि जैसा व्यक्ति जब कथा लिखता है, तब राम को अनुगमन करना होगा। इसलिए एक तरह से सब कुछ नियम था। सीता की चोरी होनी थी। और युद्ध का लड़ा जाना था।
यदि यह तुम समझ सको तो भाग्य के सिद्धांत को भी समझ सकते हो। इसका बड़ा गहरा अर्थ है। और अर्थ यह है कि यदि तुम समझ जाते हो कि तुम्हारे लिए यह सब कुछ नियम है तो जीवन नाटक हो जाता है। अब यदि तुमको राम का अभिनय करना है। तो तुम कैसे बदल सकते हो। सब कुछ नियत है, यहां तक कि तुम्हारा संवाद भी, डायलाग भी। अगर तुम सीता से कुछ कहते हो तो वह किसी नीयत वचन का दोहराना भर है।
यदि जीवन नियत है, तो तुम उसे बदल नहीं सकते। उदाहरण के लिए, एक
विशेष दिन को तुम्हारी मृत्यु होने वाली है। यह नियत है। और तुम जब मरोगे तब रो रहे होगें; यह भी निश्चित है। और फलां-फलां लोग तुम्हारे पास होंगे। यह भी तय है। और यदि सब कुछ नीयत है, तय है, तब सब कुछ नाटक हो जाता है। यदि सब कुछ निश्चित है तो उसका अर्थ हुआ कि तुम केवल उसे अंजाम देने वाले हो। तुमको उसे जीना नहीं है। उसका अभिनय करना है।
यह विधि, छठी विधि, तुमको एक साइकोड्रामा, एक खेल बना देती है।
तुम दो श्वासों के अंतराल में थिर हो और जीवन परिधि पर चल रहा है। यदि तुम्हारा अवधान केंद्र पर है, तो तुम्हारा अवधान परिधि पर नहीं है।
परिधि पर जो है वह उपावधान है, वह कहीं तुम्हारे अवधान के पास घटित होता है। तुम उसे अनुभव कर सकते हो, उसे जान सकते हो, पर वह महत्वपूर्ण नहीं है। यह ऐसा है जैसे तुमको नहीं घटित हो रहा है।

मैं इसे दोहराता हूं, यदि तुम इस छठी विधि की साधना करो तो तुम्हारा समूचा जीवन ऐसा हो जाएगा जैसे वह तुमको न घटित होकर किसी दूसरे व्यक्ति को घटित हो रहा है।

[illegible]

[illegible]

([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)

[illegible]-5

[illegible]-[illegible]—[illegible]-07

[illegible]:

[illegible] ([illegible]) [illegible]

तुम अधिकारिक गहरी पर्तों में प्रवेश कर रहे हो।

''ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वास **(**प्राण **)** को टिकाओ। ''

अगर तुम तीसरी आँख को जान गए हो तो तुम ललाट के मध्य में स्थिर सूक्ष्म श्वास को, अदृश्य प्राण को जान गए, और तुम यह भी जान गए कि वह उर्जा, वह प्रकाश बरसता है।

''जब वह सोन के क्षण में ह्रदय तक पहुंचेगा—जब वह वर्षा तुम्हारे ह्रदय तक पहुँचेगी—''तब स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा। ''

इस विधि को तीन हिस्सों में लो। एक, श्वास के भीतर जो प्राण है, जो उसका सूक्ष्म, अदृष्य, अपार्थिव अंश है, उसे तुमको अनुभव करना होगा। यह तब होता है, जब तुम भृकुटियों के बीच अवधान को थिर रखते हो। तब यह आसानी से घटित होता है। अगर तुम अवधान को अंतराल में टिकाते हो, तो भी घटित होता है, मगर उतनी आसानी से नहीं। यदि तुम नाभि केंद्र के प्रति सजग हो, जहां श्वास आती है। और छूकर चली जाती है। तो भी यह घटित होता है, पर कम आसानी से। उस सूक्ष्म प्राण को जानने का सबसे सुगम मार्ग है, तीसरी आँख में थिर होना। वैसे तुम जहां भी केंद्रित होगें। वह घटित होगा। तुम प्राण को प्रभावित होते अनुभव करोगे।

यदि तुम प्राण को अपने भीतर प्रवाहित होता अनुभव कर सको तो तुम यह
भी जान सकते हो कि कब तुम्हारी मृत्यु होगी। यदि तुम सूक्ष्म श्वास को, प्राण को महसूस करने लगे। तो मरने के छह महीने पहले से तुम अपनी आसन्न मृत्यु को जानने लगते हो। कैसे इतने संत अपनी मृत्यु की तिथि बना देते है? यह आसान है। क्योंकि यदि तुम प्राण के प्रवाह को जानते हो तो जब उसकी गति उलट जाएगी। तब उसको भी तुम जान लोगे। मृत्यु के छह महीने पहले प्रक्रिया उलट जाती है। प्राण तुम्हारी बाहर जाने लगता है। तब श्वास इसे भीतर नहीं ले जाती, बल्कि उलटे बाहर ले जाने लगती है—वह श्वास। तुम इसे जान पाते हो, क्योंकि तुम उसके अदृश्य भाग को नहीं देखते,
केवल वाहन को ही देखते हो। और वाहन तो एक ही रहेगा। अभी श्वास प्राण को भीतर ले जाती है और वहां छोड़ देती है। फिर वाहन बाहर खाली वापस जाता है। और प्राण से पुन: भरकर भीतर जाता है। इसलिए याद रखो कि भीतर आने वाली श्वास और बाहर जाने वाली श्वास, दोनों एक नहीं है। वाहन के रूप में तो पूरक श्वास और रेचक श्वास एक ही है, लेकिन जहां पूरक प्राण से भरा होता है। वहीं रेचक उससे रिक्त रहता है। तुमने प्राण को पी लिया और श्वास खाली हो गई।
जब तुम मृत्यु के करीब होते हो, तब उलटी प्रक्रिया चालू होती है।
भीतर आने वाली श्वास प्राण विहीन आती है। रिक्त आती है। क्योंकि तुम् हारा शरीर अस्तित्व से प्राण को ग्रहण करने में असमर्थ हो जाता है। तुम मरने वाले हो, तुम्हारी जरूरत न रही। पूरी प्रक्रिया उलट जाती है। अब जब श्वास बाहर जाती है, जब प्राण को साथ लिए बाहर जाती है।
इसलिए जिसने सूक्ष्म प्राण को जान लिए वह अपनी मृत्यु का दिन भी
तुरंत जान सकता है। छह महीने पहले प्रक्रिया उलटी हो जाती है।
यह सूत्र बहुत-बहुत महत्वपूर्ण है।
‘’ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वास (प्राण) को टिकाओ। जब सोने के
क्षण में वह ह्रदय तक पहुंचेगा। तब स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।‘’
जब तुम नींद में उतर रहे हो, तभी इस विधि को साधना है, अन्य समय में नहीं। ठीक सोने का समय इस विधि के अभ्यास के लिए उपयुक्त समय है।
तुम नींद में उतर रहे हो, धीरे-धीर नींद तुम पर हावी हो रही है।
कुछ ही क्षणों में भीतर तुम्हारी चेतना लुप्त होगी। तुम अचेत हो जाओगे। उस क्षण के आने के पहले तुम अपनी श्वास और उसके सूक्ष्म अंश प्राण के प्रति सजग हो जाओ। और उसे ह्रदय तक जाते हुए अनुभव करो। अनुभव करते जाओ कि वह ह्रदय तक आ रहा है। ह्रदय तक आ रहा है। प्राण ह्रदय से होकर तुम् हारे शरीर में प्रवेश करता है, इसलिए यह अनुभव करते ही जाओ। कि प्राण ह्रदय तक आ रहा है। और इस निरंतर अनुभव के बीच ही नींद को आने दो। तुम अनुभव करते जाओ और नींद को आने दो; नींद को तुमको अपने में समेट लेने दो। यदि यह संभव हो जाए कि तुम अदृश्य प्राण को ह्रदय तक जाते देखो और
नींद को भी, तो तुम अपने सपनों के प्रति भी सजग हो जाओगे। तब तुमको बोध रहेगा कि तुम सपना देखते हो तो तुम समझते हो कि यह यथार्थ ही है। वह भी तीसरी आँख के कारण ही संभव होता है। क्या तुमने किसी को नींद में देखा है। उसकी आंखे ऊपर चली जाती है, और तीसरी आँख में स्थिर हो जाती है। यदि नहीं देखा तो देखो।
तुम्हारा बच्चा सोया है, उसकी आंखे खोलकर देखो कि उसकी आंखे कहां
है। उसकी आँख की पुतलियाँ ऊपर को चढ़ी है। और त्रिनेत्र पर केंद्रित है। मैं कहता हूं कि बच्चों को देखो, सयानों को नहीं। सयाने भरोसे योग्य नहीं है। क्योंकि उनकी नींद गहरी नहीं है। वे सोचते भर है कि सोये है।
बच्चों को देखो। उनकी आंखें ऊपर को चढ़ जाती है।
इसी तीसरी आँख में थिरता के कारण तुम अपने सपनों को सच मानते हो।

तुम यह नहीं समझ सकते की वे सपने है। वह तुम तब जानोंगे, जब सुबह जागोगे। तब तुम जानोंगे कि यह स्वप्न है। यदि समझ जाओ तो दो तल हो गए—स्वप्न है और तुम सजग हो, जागरूक हो। जो नींद में स्वप्न के प्रति जाग सके, उसके लिए यह सूत्र चमत्कारिक है।
यह सूत्र कहता है: ‘’स्वप्न पर और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो
जाएगा।‘’
यदि तुम स्वप्न के प्रति जागरूक हो जाओ तो तुम दो काम कर सकते हो।
एक कि तुम स्वप्न पैदा कर सकते हो। आमतौर से तुम स्वप्न नहीं पैदा कर सकते। आदमी कितना नपुंसक है। तुम स्वप्न भी नहीं पैदा कर सकते। अगर तुम कोई खास स्वप्न देखना चाहो तो नहीं देख सकते; यह तुम्हारे हाथ में नहीं है। मनुष्य कितना शक्तिहीन है। स्वप्न भी उससे नहीं निर्मित किए जा सकते। तुम स्वप्नों के शिकार भर हो। उनके स्त्रष्टा नहीं। स्वप्न तुम में घटित होता है। तुम कुछ नहीं कर सकते हो। न तुम उसे रोक सकते हो, न उसे पैदा कर सकते हो।
लेकिन अगर तुम यह देखते हुए नींद में उतरो कि ह्रदय प्राण से भर
रहा है। निरंतर हर श्वास में प्राण से स्पर्शित हो रहा है तो तुम अपने स्वप्नों के मालिक हो जाओगे। और यह मलकियत बहुत अनूठी है, दुर्लभ है। तब तुम जो भी स्वप्न देखना चाहते हो, तुम वह स्वप्न देख सकते हो। और सोत समय कहो कि मैं फलां स्वप्न देखना चाहता हूं और वह स्वप्न कभी तुम्हारे मन में प्रवेश नहीं कर सकेगा।
लेकिन अपने स्वप्नों के मालिक बनने का क्या प्रयोजन है। क्या यह व्यर्थ नहीं है? नहीं, यह व्यर्थ नहीं है। एक बार तुम स्वप्न के मालिक हो गए तो दुबारा तुम कभी स्वप्न नहीं देखोगें। वह व्यर्थ हो गया। जरूरत नहीं रही। जैसे ही तुम अपने स्वप्नों के मालिक होते हो, स्वप्न बंद हो जाते है। उनकी जरूरत नहीं रहती। और जब स्वप्न बंद हो जाते है, तब तुम्हारी नींद का गुण धर्म ही और होता है। वह गुणधर्म वही है, जो मृत्यु का है।
मृत्यु गहन नींद है। अगर तुम्हारी नींद मृत्यु की तरह गहरी हो जाए
तो उसका अर्थ है कि सपने विदा हो गए। सपने नींद को उथला करते है। सपनों के चलते तुम सतह पर ही घूमते रहते हो। सपनों में उलझे रहने के कारण तुम् हारी नींद उथली हो जाती है। और जब सपने नहीं रहते, तब तुम नींद के सागर में उतर जाते हो। उसकी गहराई छू लेते है। वही मृत्यु है।
इसलिए भारत न सदा कहा है कि नींद छोटी मृत्यु है। और मृत्यु लंबी
नींद है। गुणात्मक रूप से दोनों समान है। नींद दिन-दिन की मृत्यु है, मृत्यु जीवन-जीवन की नींद है। प्रतिदिन तुम थक जाते हो, तुम सो जाते हो, और दूसरी सुबह तुम फिर अपनी शक्ति और अपनी जीवंतता को वापस पा लेते हो। तुम मानो फिर से जन्म लेते हो। वैसे ही सत्तर या अस्सी वर्ष के जीवन के बाद तुम पूरी तरह थक जाते हो। अब छोटी अविधि की मृत्यु से काम नहीं चलेगा, अब तुमको बड़ी मृत्यु की जरूरत है। उस बड़ी मृत्यु या नींद के बाद तुम बिलकुल नए शरीर के साथ पुनर्जन्म लेते हो।
और एक बार यदि तुम स्वप्न-शुन्य नींद को जान जाओ और उसमे बोध
पूर्वक रहो तो फिर मृत्यु का भय जाता रहता है। कोई कभी नहीं मर सकता। मृत्यु असंभव है, अभी एक दिन पहले मैं कहता था कि केवल मृत्यु निश्चित है। और अब कहता हूं कि मृत्यु असंभव है। कोई कभी नहीं मरा है। कोई कभी मर नहीं सकता। संसार में यदि कुछ असंभव है तो वह मृत्यु है। क्योंकि अस् तित्व जीवन है। तुम फिर-फिर जन्मते हो। लेकिन नींद ऐसी गहरी है कि पुरानी पहचान भूल जाते हो। तुम्हारे मन से स्मृतियां पोंछ दी जाती है। इसे इस तरह सोचो। मान लो कि आज तुम सोने जा रहे हो, और कोई ऐसा
यंत्र बन गया है—शीध्र ही बनने वाला है—जो कि जैसे टेपरिकार्डर के

फीते से आवाज पोंछ दी जाती है, वैसे ही मन से स्मृति को पोंछ डालता है। क्योंकि स्मृति भी एक गहरी रिकार्डिंग है। देर-अबेर हम ऐसा यंत्र निकाल लेंगे। जो तुम्हारे फिर में लगा दिया जाएगा। और जो तुम्हारे दिमाग को पोंछकर बिलकुल साफ कर देगा। तो कल सुबह तुम वही आदमी नहीं रहोगे जो सोने गया था। क्योंकि तुमको याद नहीं रहेगा कि कौन सोने गया था। तब तुम्हारी नींद मृत्यु जैसी हो जाएगी। एक गैप आ जाएगा। तुमको याद नहीं रहेगा। कि कौन सोया था। यही चीज स्वाभाविक ढंग से घट रही है। जब तुम मरते हो ओर फिर जन्म लेते हो तब तुमको याद नहीं रहता है कि कौन मरा। तुम फिर से शुरू करते हो।
इस विधि के द्वारा पहले तो तुम स्वप्नों के मालिक हो जाओगे। उसका
अर्थ हुआ कि सपने आना बंद हो जाएंगे। या यदि तुम खुद सपने देखना चाहोगे तो सपना देख भी सकते हो। लेकिन तब वह ऐच्छिक सपना होगा। वह अनिवार्य नहीं रहेगा। वह तुम पर लादा नहीं जाएगा। तुम उसके शिकार नहीं होगा। और तब तुम्हारी नींद का गुणधर्म ठीक मृत्यु जैसा हो जाएगा। तब तुम जानोगें कि मृत्यु भी नींद है।
इसलिए यह सूत्र कहता है: ‘’स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।‘’
तब तुम जानोगें कि मृत्यु एक लंबी नींद है—और सहयोगी है, और
सुंदर है। क्योंकि वह तुमको नवजीवन देती है। वह तुमको सब कुछ नया देती है, फिर तो मृत्यु भी समाप्त हो जाती है। स्वप्न के शेष होते ही मृत्यु समाप्त हो जाती है।
मृत्यु पर नियंत्रण पाने, अधिकार पाने का दूसरा अर्थ भी है। अगर
तुम समझ लो कि मृत्यु नींद है तो तुम उसको दिशा दे सकते हो। अगर तुम अपने सपनों को दिशा दे सकते हो। तो मृत्यु को भी दे सकते हो। तब तुम चुनाव कर सकते हो, कि कहां पैदा हो? कब पैदा हो, किससे पैदा हो, और किस रूप में पैदा हो, तब तुम अपने जीवन के मालिक होते हो।
बुद्ध की मृत्यु हुई, मैं उनके अंतिम जन्म के पूर्व के जन्म की
चर्चा कर रहा हूं। जब वे बुद्ध नहीं थे। मरने के पूर्व उन्होंने कहा: ‘’मैं अमुक मां बाप से पैदा होऊंगा, ऐसी मेरी मां होगी, ऐसे मेरे पिता होंगे, और मेरी मां मेरे जन्म के बाद ही मर जायेगी। और जब मैं जनमुगां तो मेरी मां ऐसे-ऐसे सपने देखेगी। न तुमको सिर्फ अपने सपनों पर अधिकार होगा दूसरे के स्वप्नों पर भी अधिकार हो जायेगा। सो बुद्ध ने उदाहरण के तौर पर बताया कि जब मैं मां के पेट में होऊंगा, तब मेरी मां ये-ये स्वप्न देखेगी। और जब कोई इस क्रम से इन स्वप्नों को देखे, तब तुम समझ जाना की मैं जन्म लेने वाला हूं।
और ऐसा ही हुआ। बुद्ध की माता ने उसी क्रम से सपने देखे। वह क्रम
सारे भारत को पता था। विशेषकर उनको जो धर्म में, जीवन की गहन चीजों में और उसके गुह्म पथों में उत्सुक थे। पता था, इसलिए उन स्वप्नों की व्याख् या हुई। स्वप्नों की व्याख्या करने वाला पहला आदमी फ्रायड नहीं था। और न उसकी व्याख्या में गहराई थी। पला वह केवल पश्चिम के लिए था।
तो बुद्ध के पिता ने स्वप्नों के व्याख्याकारों को, उस जमाने के फ्रायडों और जुंगों को तुरंत बुलवाया और उनसे पूछा, इस क्रम का क्या अर्थ है। मुझे डर लगता है, ये सपने अद्भुत है। और एक ही क्रम से आ रहे है, एक ही तरह के सपने, बारी-बारी से आ रहे है। मानों कोई एक ही फिल्म को बार-बार देखता हो। क्या हो रहा है।
और व्याख्याकारों ने बताया कि आप एक महान आत्मा के पिता होने जा
रहे है। वह बुद्ध होने वाला है। लेकिन आपकी पत्नी को संकट है। क्योंकि जब ऐसे बुद्ध जन्म लेते है, तब मां का जीना कठिन हो जाता है। बुद्ध के पिता ने कारण पूछा। व्याख्याकारों ने कहा कि हम यह नहीं बता सकते।

लेकिन जो आत्मा पैदा होने वाली है, उसका ही वक्तव्य है कि उसके जन्म लेने पर उसकी मां की मृत्यु हो जायेगी।

बाद में बुद्ध से पूछा गया कि आपकी माता की मृत्यु तुरंत क्यो हुई? उन्होंने कहा कि एक बुद्ध को जन्म देना इतनी बड़ी घटना है कि उसके बाद और सब कुछ व्यर्थ हो जाता है। इसलिए मां जीवित नहीं रह सकती। उसे नया जीवन शुरू करने के लिए फिर से जन्म लेना होगा। एक बुद्ध को जन्म देना परम अनुभव है। ऐसा शिखर है कि मां उसके बाद नहीं बची रह सकती। इसलिए मां की मृत्यु हुई।

बुद्ध ने अपने पिछले जन्म में कहा था कि मैं उस समय जन्म लूंगा, जब मेरी मां एक ताड़ वृक्ष के नीचे खड़ी होगी। और वही हुआ। बुद्ध का जब जन्म हुआ तब उनका मां ताड़ वृक्ष के नीचे खड़ी थी। और बुद्ध ने यह भी कहां की। जन्म लेने के बाद में तुरंत सात कदम चलूंगा। यह-यह पहचान होगी। जो बताए देता हूं, ताकि तुम जान सको कि बुद्ध का जन्म हो गया। और बुद्ध ने सब कुछ का इंगित किया।

और यह केवल बुद्ध के लिए ही सही नहीं है। यही जीसस के लिए सही है, यही महावीर के लिए सही है। यही और भी कई अन्यों के लिए सही है। प्रत्येक जैन तीर्थंकर ने अपने पिछले जन्म में भविष्यवाणी की थी कि उनका जन्म किस तरह होगा। उन्होंने भी स्वप्नों के क्रम बताए थे। उन्होंने भी प्रतीक बताए थे, और कहा था कि किस तरह सब कुछ घटित होने वाला है।

तुम दिशा दे सकते हो, एक बार तुम अपने स्वप्नों को दिशा देने लगो तो सब कुछ को दिशा दे सकते हो। क्योंकि यह संसार स्वप्नों का ही बना हुआ है। और स्वप्नों का ही यह जीवन बना है। इसलिए जब तुम्हारा अधिकार सपने पर हुआ तब सब कुछ पर हो गया।

यह सूत्र कहता है: ''स्वयं मृत्यु पर।''

तब कोई व्यक्ति अपने को एक विशेष तरह का जन्म भी दे सकता है। विशेष तरह का जीवन भी दे सकता है।

हम लोग तो शिकार है। हम नहीं जानते है कि क्यों जन्मते है, क्यों मरते है। कौन हमें चलाता है और क्यों? काई कारण नहीं दिखाई देता है। सब कुछ अराजकता, संयोग जैसा है। ऐसा इसलिए है कि हम मालिक नहीं है। एक बार मालिक हो जाएं तो फिर ऐसा नहीं रहेगा।

[illegible]

[illegible]

([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)

[illegible]-5

[illegible]-[illegible]—[illegible]-08

[illegible]:

[illegible]-[illegible]

इन विधियों के बीच जरा-जरा से है, तो भी तुम्हारे लिए वे भेद बहुत हो सकते है। एक अकेला शब्द बहुत फर्क पैदा करता है।

''आत्यंतिक भक्ति पूर्वक श्वास के दो संधि-स्थलों पर केंद्रित होकर .....।''

भीतर आने वाली श्वास को एक संधि स्थल है। जहां वह मुड़ती है। इन दो

संधि-स्थलों—जिसकी चर्चा हम कर चुके है—के साथ यहां जरा सा भेद किया गया है। हालांकि यह भेद विधि में तो जरा सा ही है, लेकिन साधक के लिए बड़ा भेद हो सकता है। केवल एक शर्त जोड़ दी गई है—‘’आत्यंतिक भक्ति पूर्वक’’, और पूरी विधि बदल गयी।
इसके प्रथम रूप में भक्ति का सवाल नहीं था। वह मात्र वैज्ञानिक
विधि थी। तुम प्रयोग करो और वह काम करेगी। लेकिन लोग है जो ऐसी शुष्क वैज्ञानिक विधियों पर काम नहीं करेंगे। इसलिए जो ह्रदय की और झुके है। जो भक्ति के जगत के है, उनके लिए जरा सा भेद किया गया है: आत्यंतिक भक् ति पूर्वक श्वास के दो संधि-स्थलों पर केंद्रित होकर ज्ञाता को जान लो।‘’
अगर तुम वैज्ञानिक रुझान के नहीं हो, अगर तुम्हारा मन वैज्ञानिक
नहीं है, तो तुम इस विधि को प्रयोग में लाओ।
आत्यंतिक भक्ति पूर्वक—प्रेम श्रद्धा के साथ—श्वास के दो संधि स्थलों पर केंद्रित होकर ज्ञाता को जान लो।‘’
यह कैसे संभव होगा।
भक्ति तो किसी के प्रति होती है। चाहे वे कृष्ण हों या क्राइस्ट। लेकिन तुम्हारे स्वयं के प्रति, श्वास के दो संधि-स्थलों के प्रति भक् ति कैसी होगी। यह तत्व तो गैर भक्ति वाला है। लेकिन व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर है।
तंत्र का कहना है कि शरीर मंदिर है। तुम्हारा शरीर परमात्मा का
मंदिर है, उसका निवास स्थान है। इसलिए इसे मात्र अपना शरीर या एक वस्तु न मानो। यह पवित्र है, धार्मिक है। जब तुम एक श्वास भीतर ले रहे हो तब तुम ही श्वास नहीं ले रहे हो, तुम्हारे भीतर परमात्मा भी श्वास ले रहा है। तुम चलते फिरते हो—इसे इस तरह देखो—तुम नहीं, स्वयं परमात्मा तुममें चल रहा है। तब सब चीजें पूरी तरह भक्ति हो जाती है।
अनेक संतों के बारे में कहा जाता है कि वे अपने शरीर को प्रेम करते
थे, वे उसके साथ ऐसा व्यवहार करते थे। मानो वे शरीर उनकी प्रेमिकाओं के रहे हों।
तुम भी अपने शरीर को यह व्यवहार दे सकते हो। उसके साथ यंत्रवत व् यवहार भी कर सकते हो। वह भी एक रूझान है, एक दृष्टि है। तुम इसे अपराधपूर्ण पाप भरा और गंदा भी मान सकते हो। और इसे चमत्कार भी समझ सकते हो, परमात्मा का घर भी समझ सकते है, यह तुम पर निर्भर है।
यदि तुम अपने शरीर को मंदिर मान सको तो यह विधि तुम्हारे काम आ
सकती है, ‘’आत्यंतिक भक्ति पूर्वक....।‘’ इसका प्रयोग करो। जब तुम भोजन कर रहे हो तब इसका प्रयोग करो। यह न सोचो कि तुम भोजन कर रहे हो, सोचो कि परमात्मा तुममें भोजन कर रहा है। और तब परिवर्तन को देखो। तुम वही चीज खा रहे हो। लेकिन तुरंत सब कुछ बदल जाता है। अब तुम परमात्मा को भोजन दे रहे हो। तुम स्नान कर रहे हो। कितना मामूली सा काम है। लेकिन दृष्टि बदल दो, अनुभव करो कि तुम अपने में परमात्मा को स्नान करा रहे हो, तब यह विधि आसान होगी।
‘’आत्यंतिक भक्ति पूर्वक श्वास के दो संधि स्थलों पर केंद्रित
होकर ज्ञाता को जान लो।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र
(तंत्र-सूत्र—भाग-1)
प्रवचन-5

□□□□□-□□□□□—□□□□-09

□□□□□ □□□□:

□□□□□ □□□□ □□□□ □□□□□ □□□ □□□□□□□ □□□□ □□□□ □□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□ □□□□ □□□□□ □□□□ □□ □□□ □□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□

''मृतवत लेटे रहो। ''

प्रयोग करो कि तुम एकाएक मर गए हो। शरीर को छोड़ दो, क्योंकि तुम मर गए हो। बस कल्पना करो कि मृत हूं, मैं शरीर नहीं हूं, शरीर को नहीं हिला सकता। आँख भी नहीं हिला सकता। मैं चीख-चिल्ला भी नहीं सकता। न ही मैं रो सकता हूं, कुछ भी नहीं कर सकता। क्योंकि मैं मरा हुआ हूं। और तब देखो तुम्हें कैसा लगता है। लेकिन अपने को धोखा मत दो। तुम शरीर को थोड़ा हिला सकते हो, नहीं, हिलाओ नहीं। लेकिन मच्छर भी आ जाये, तो भी शरीर को मृत समझो। यह सबसे अधिक उपयोग की गई विधि है।

रमण महर्षि इसी विधि से ज्ञान को उपलब्ध हुए थे। लेकिन यह उनके इस जन्म की विधि नहीं थी। इस जन्म में तो अचानक सहज ही यह उन्हें घटित हो गई। लेकिन जरूर उन्होंने किसी पिछले जन्म में इसकी सतत सधाना की होगी। अन्यथा सहज कुछ भी घटित नहीं होता। प्रत्येक चीज का कार्य-कारण संबंध रहता है।

जो जब वे केवल चौदह या पंद्रह वर्ष के थे, एक रात अचानक रमण को लगा कि मैं मरने वाला हूं, उनके मन में यक बात बैठ गई कि मृत्यु आ गई है। वे अपना शरीर भी नहीं हिला सकते थे। उन्हें लगा कि मुझे लकवा मार गया है। फिर उन्हें अचानक घुटन महसूस हुई और वे जान गए कि उनकी ह्रदय-गति बंद होने वाली है। और वे चिल्ला भी नहीं सके, बोल भी नहीं सके कि मैं मर रहा हूं।

कभी-कभी किसी दुस्वप्न में ऐसा होता है कि जब तुम न चिल्ला पाते हो और न हिल पाते हो। जागने पर भी कुछ क्षणों तक तुम कुछ नहीं कर पाते हो। यही हुआ रमण को अपनी चेतना पर तो पूरा अधिकार था। पर अपने शरीर पर बिलकुल नहीं। वे जानते थे कि मैं हूं, चेतना हूं, सजग हूं, लेकिन मैं मरने वाला हूं। और यह निश्चय इतना घना था कि कोई विकल्प भी नहीं था। इसलिए उन्होंने सब प्रयत्न छोड़ दिया। उन्होंने आंखे बद कर ली और मृत्
यु की प्रतीक्षा करने लगे।

धीरे-धीरे उनका शरीर सख्त हो गया। शरीर मर गया। लेकिन एक समस्या उठ खड़ी हुई। वे जान रहे थे कि शरीर नहीं हूं। लेकिन मैं तो हूं, वे जान रहे थे कि मैं जीवित हूं, और शरीर मर गया है। फिर वे उस स्थिति से वापस आए। सुबह में शरीर स्वास्थ था। लेकिन वही आदमी नहीं लौटा था जो मृत्यु के पूर्व था। क्योंकि उसने मृत्यु को जान लिया था।

अब रमण ने एक नए लोक को देख लिया था। चेतना के एक नए आयाम को जान लिया था। उन्होंने घर छोड़ दिया। उस मृत्यु के अनुभव ने उन्हें पूरी तरह बदल दिया। और वे इस यूग के बहुत थोड़े से प्रबुद्ध पुरूषों में हुए।

और यहीं विधि है जो रमण को सहज घटित हुई। लेकिन तुमको यह सहज ही

नहीं घटित होने वाली। लेकिन प्रयोग करो तो किसी जीवन में यह सहज हो सकती है। प्रयोग करते हुए भी यह घटित हो सकती है। और यदि नहीं घटित हुई तो भी प्रयत्न कभी व्यर्थ नहीं जाता है। यह प्रयत्न तुम में रहेगा। तुम्हारे भीतर बीज बनकर रहेगा। कभी जब उपयुक्त समय होगा और वर्षा होगी, यह बीज अंकुरित हो जाएगा।
सब सहजता की यही कहानी है। किसी काल में बीज बो दिया गया था। लेकिन
ठीक समय नहीं आया था। और वर्षा नहीं हुई थी। किसी दूसरे जन्म और जीवन में समय तैयार होता है, तुम अधिक प्रौढ़, अधिक अनुभवी होते हो। और संसार में उतने ही निराश होते हो, तब किसी विशेष स्थिति में वर्षा होती है और बीज फूट निकलता है।
‘’मृतवत लेटे रहो। क्रोध में क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो।‘’
निश्चय ही जब तुम मर रहे हो तो वह कोई सुख का क्षण नहीं होगा। वह आनंदपूर्ण नहीं हो सकता। जब तुम देखते हो कि तुम मर रहे हो। भय पकड़ेगा। मन में क्रोध उठेगा, या विषाद, उदासी, शोक, संताप, कुछ भी पकड़ सकता है। व्यक्ति-व्यक्ति में फर्क है।
सूत्र कहता है—‘’क्रोध में क्षुब्ध होकर उसमे ठहरे रहो, स्थित
रहो।‘’
अगर तुमको क्रोध घेरे तो उसमे ही स्थित रहो। अगर उदासी घेरे तो
उसमे भी। भय, चिंता, कुछ भी हो, उसमें ही ठहरे रहो, डटे रहो, जो भी मन में हो, उसे वैसा ही रहने दो, क्योंकि शरीर तो मर चुका है।
यह ठहरना बहुत सुंदर है। अगर तुम कुछ मिनटों के लिए भी ठहर गए तो
पाओगे कि सब कुछ बदल गया। लेकिन हम हिलने लगते है। यदि मन में कोई आवेग उठता है तो शरीर हिलने लगता है। उदासी आती है, तो भी शरीर हिलता है। इसे आवेग इसीलिए कहते है कि यह शरीर में वेग पैदा करता है। मृतवत महसूस करो — और आवेगों को शरीर हिलाने इजाजत मत दो। वे भी वहां रहे और तुम भी वहां रहो। स्थिर, मृतवत। कुछ भी हो, पर हलचल नहीं हो, गति नहीं हो। बस ठहरे रहो।
‘’या पुतलियों को घुमाएं बिना एकटक घूरते रहो।‘’
यह—या पुतलियों को घुमाएं बिना एकटक घूरते रहो। मेहर बाबा की
विधि थी। वर्षो वे अपने कमरे की छत को घूरते रहे, निरंतर ताकते रहे। वर्षो वह जमीन पर मृतवत पड़े रहे और पुतलियों को, आंखों को हिलाए बिना छत को एक टक देखते रहे। ऐसा वे लगातार घंटो बिना कुछ किए घूरते रहते थे। टकटकी लगाकर देखते रहते थे।
आंखों से घूरना अच्छा है। क्योंकि उससे तुम फिर तीसरी आँख मैं स्
थित हो जाते हो। और एक बार तुम तीसरी आँख में थिर हो गए तो चाहने पर भी तुम पुतलियों को नहीं घूमा सकते हो। वे भी थिर हो जाती है—अचल।
मेहर बाबा इसी घूरने के जरिए उपलब्ध हो गए। और तुम कहते हो कि इन छोटे-छोटे अभ्यासों से क्या होगा। लेकिन मेहर बाबा लगातार तीन वर्षों तक बिना कुछ किए छत को घूरते रहे थे। तुम सिर्फ तीन मिनट के लिए ऐसी टकटकी लगाओ और तुमको लगेगा कि तीन वर्ष गुजर गये। तीन मिनट भी बहुत लम्ब समय मालूम होगा। तुम्हें लगेगा की समय ठहर गया है। और घड़ी बंद हो गई है। लेकिन मेहर बाबा घूरते रहे, घूरते रह, धीरे-धीरे विचार मिट गए। और गति बंद हो गई। मेहर बाबा मात्र चेतना रह गए। वे मात्र घूरना बन गए। टकटकी बन गए। और तब वे आजीवन मौन रह गए। टकटकी के द्वारा वे अपने भीतर इतने शांत हो गए कि उनके लिए फिर शब्द रचना असंभव हो गई।
मेहर बाबा अमेरिका में थे। वहां एक आदमी था जो दूसरों के विचार को,
मन को पढ़ना जानता था। और वास्तव में वह आमी दुर्लभ था—मन के पाठक के रूप में। वह तुम्हारे सामने बैठता, आँख बंद कर लेता और कुछ ही क्षणों में वह तुम्हारे साथ ऐसा लयवद्ध हो जाता कि तुम जो भी मन में सोचते, वह

उसे लिख डालता था। हजारों बार उसकी परीक्षा ली गई। और वह सदा सही साबित हुआ। तो कोई उसे मेहर बाबा के पास ले गया। वह बैठा और विफल रहा। और यह उसकी जिंदगी की पहली विफलता थी। और एक ही। और फिर हम यह भी कैसे कहें कि यह उसकी विफलता हुई।
वह आदमी घूरता रहा, घूरता रहा, और तब उसे पसीना आने लगा। लेकिन एक शब्द उसके हाथ नहीं लगा। हाथ में कलम लिए बैठा रहा और फिर बोला—किसी किस्म का आदमी है। यह, मैं नहीं पढ़ पाता हूं, क्योंकि पढ़ने के लिए कुछ है ही नहीं। यह आदमी तो बिलकुल खाली है। मुझे यह भी याद नहीं रहता की यहां कोई बैठा है। आँख बंद करने के बाद मुझे बार-बार आँख खोल कर देखना पड़ता है कि यह व्यक्ति यहां है कि नहीं। या यहां से हट गया है। मेरे लिए एकाग्र होना भी कठिन हो गया है। क्योंकि ज्यों ही मैं आँख बंद करता हूं कि मुझे लगता है कि धोखा दिया जा रहा है। वह व्यक्ति यहां से हट जाता है। मेरे सामने कोई भी नहीं है। और जब मैं आँख खोलता हूं तो उसको सामने ही पाता हूं। वह तो कुछ भी नहीं सोच रहा है।
उस टकटकी ने, सतत टकटकी ने मेहर बाबा के मन को पूरी तरह विसर्जित
कर दिया था।
‘’या पुतलियों को घुमाएं बिना एकटक घूरते रहो। या कुछ चुसो और
चूसना बन जाओ।‘’
यहां जरा सा रूपांतरण है। कुछ भी काम दे देगा। तुम मर गए, यह काफी
है।
‘’क्रोध में क्षुब्ध होकर उसमे ठहरे रहो।‘’
केवल यह अंश भी एक विधि बन सकता है। तुम क्रोध में हो; लेटे रहो और क्रोध में स्थित रहो। पड़े रहो। इससे हटो नहीं, कुछ करो नहीं, स्थिर पड़ें रहो।
कृष्णामूर्ति इसी की चर्चा किए चले जा रहे थे। उनकी पूरी विधि इस
एक चीज पर निर्भर है: क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमे ठहरे रहो।‘’ यदि तुम क्रुद्ध हो तो क्रुद्ध होओ और क्रुद्ध रहो। उससे हिलो नहीं, हटो नहीं। और अगर तुम वैसे ठहर सको तो क्रोध चला जाता है। और तुम दूसरे आदमी बन जाते हो। और एक बार तुम क्रोध को उससे आंदोलित हुए बिना देख लो तो तुम उसके मालिक हो गए।
‘’या पुतलियों को घुमाएं बिना एक टक घूरते रहो। या कुछ चुसो और
चूसना बन जाओ।‘’
यह अंतिम विधि शारीरिक है। और प्रयोग में सुगम है। क्योंकि चूसना
पहला काम है, जो कि कोई बच्चा करता है। चूसना जीवन का पहला कृत्य है। बच् चा जब पैदा होता है, तब वह पहले रोता है। तुमने यह जानने की कोशिश नहीं की होगी कि बच्चा क्यों रोता है। सच में वह रोता नहीं है। वह रोता हुआ मालूम होता है। वह सिर्फ हवा का पी रहा है। चूर रहा है। अगर वह नहीं रोंए तो मिनटों के भीतर मर जाए। क्योंकि रोना हवा लेने का पहला प्रयत्न है। जब वह पेट में था, बच्चा स्वास नहीं लेता है। बिना स्वास लिए वह जीता था। वह वहीं प्रक्रिया कर रहा था। जो भूमिगत समाधि लेने पर योगी जन करते है। वह बिना श्वास लिए प्राण को ग्रहण कर रहा था—मां से शुद्ध प्राण ही ग्रहण कर रहा था।
यही कारण है कि मां और बच्चे के बीच जो प्रेम है, वह और प्रेम से
सर्वथा भिन्न होता है। क्योंकि शुद्धतम प्राण दोनों को जोड़ता है। अब ऐसा फिर कभी नहीं होगा। उनके बीच एक सूक्ष्म प्राणमय संबंध था। मां बच् चे को प्राण देती थी। बच्चा श्वास तक नहीं लेता था।
लेकिन जब वह जन्म लेता है, तब वह मां के गर्भ से उठाकर एक बिलकुल अनजानी दुनिया में फेंक दिया जाता है। अब उसे प्राण या ऊर्जा उस आसानी से उपलब्ध नहीं होगी। उसे स्वयं ही श्वास लेनी होगी। उसकी पहली चीख

चूसने का पहला प्रयत्न है। उसके बाद वह मां के स्तन से दूध चूसता है। ये बुनियादी कृत्य है जो तुम करते हो। बाकी सब काम बाद में आते है। जीवन के वे बुनियादी कृत्य है, और प्रथम कृत्य उसका अभ्यास भी किया जा सकता है। यह सूत्र कहता है: ‘’या कुछ चुसो और चूसना बन जाओ।‘’
किसी भी चीज को चुसो, हवा को ही चुसो, लेकिन तब हवा को भूल जाओ और
चूसना ही बन जाओ। इसका अर्थ क्या हुआ? तुम कुछ चूस रहे हो, इसमें तुम चूसने वाले हो, चोषण नहीं। तुम चोषण के पीछे खड़े हो। यह सूत्र कहता है कि पीछे मत खड़े रहो, कृत्य में भी सम्मिलित हो जाओ और चोषण बने जाओ। किसी भी चीज से तुम प्रयोग कर सकते हो, अगर तुम दौड़ रहे हो तो
दौड़ना ही बन जाओ और दौड़ने वाले न रहो। दौड़ना बन जाओ। दौड़ बन जाओ और दौड़ने वाले को भूल जाओ। अनुभव करो कि भीतर कोई दौड़ने वाला नहीं है। मात्र दौड़ने की प्रक्रिया है। वह प्रक्रिया तुम हो—सरिता जैसी प्रक्रिया। भीतर कोई नहीं है। भीतर सब शांत है। और केवल यह प्रक्रिया है।
चूसना, चोषण अच्छा है। लेकिन तुमको यह कठिन मालूम पड़ेगा। क्
योंकि हम इसे बिलकुल भूल गए है। यह कहना भी ठीक नहीं है कि बिलकुल भूल गए है। क्योंकि उसका विकल्प तो निकालते ही रहते है। मां के स्तन की जगह सिगरेट ले लेती है। और तुम उसे चूसते रहते हो। यह स्तन ही है, मां का स् तन, मां का चूचुक। और गर्म धुआँ निकलता है, वह मां का दूध।
इसलिए छुटपन में जिनको मां के स्तन के पास उतना नहीं रहने दिया
गया, जितना वे चाहते थे, वे पीछे चलकर धूम्रपान करने लगते है। यह बिलकुल भूल गए है, और विकल्प से भी काम चल जाएगा। इसलिए अगर तुम सिगरेट पीते हो तो धुम्रपान ही बन जाओ। सिगरेट को भूल जाओ, पीने वाले को भूल जाओ और धूम्रपान ही बने रहो।
एक विषय है जिसे तुम चूसते हो, एक विषयी है जो चूसता है। और उनके
बीच चूसने की, चोषण की प्रक्रिया है। तुम चोषण बन जाओ प्रक्रिया बन जाओ। इसे प्रयोग करो। पहले कई चीजों से प्रयोग करना होगा और तब तुम जानोंगे कि तुम्हारे लिए क्या चीज सही है।
तुम पानी पी रहे हो। ठंडा पानी भीतर जा रहा है। तुम पानी बन जाओ।
पानी न पीओ। पानी को भूल जाओ। अपने को भूल जाओ, अपनी प्यास को भी, और मात्र पानी बन जाओ। प्रक्रिया में ठंडक है, स्पर्श है, प्रवेश है, और पानी है—वही सब बने रहो।
क्यों नहीं? क्या होगा? यदि तुम चोषण बन जाओ तो क्या होगा?
यदि तुम चोषण बन जाओ तो तुम निर्दोष हो जाओगे—ठीक वैसे जैसे
प्रथम दिन जन्मा हुआ शिशु होता है। क्योंकि वह प्रथम प्रक्रिया है। एक तरह से आप पीछे की और यात्रा करेंगे। लेकिन उसकी ललक, लालसा भी तो है। आदमी का पूरा अस्तित्व उस स्तन पान के लिए तड़पता है। उसके लिए वह कई प्रयोग करता है, लेकिन कुछ भी काम नहीं आता। क्योंकि वह बिंदु ही खो गया है। जब तक तुम चूसना नहीं बन जाते, तब तक कुछ भी काम नहीं आएगा। इसलिए इसे प्रयोग में लाओ।
एक आदमी को मैंने यह विधि दी थी। उसने कई विधियां प्रयोग की थी। तब
वह मेरे पास आया। उससे मैंने कहा, यदि मैं समूचे संसार से केवल एक चीज ही तुम्हें चुनने को दूँ तो तुम क्या चुनोगे? और मैंने तुरंत उसे यह भी कहा कि आँख बंद करो और इस पर तुम कुछ भी सोचे बिना मुझे बताओ। वह डरने लगा, झिझकने लगा। तो मैंने कहा, न डरों और न झिझाको। मुझे स्पष्ट बताओ। उसने कहा, यह तो बेहूदा मालूम पड़ता है। लेकिन मेरे सामने एक स्तन उभर रहा है। और यह कहकर वह अपराध भाव अनुभव करने लगा। तो मैंने कहा, मत अपराध भाव अनुभव करो। स्तन में गलत क्या है? सर्वाधिक सुंदर चीजों में स्तन एक है, फिर अपराध भाव क्यों?

लेकिन उस आदमी ने कहा , यह चीज तो मेरे लिए ग्रस्तता बन गई है। इसलिए अपनी विधि बताने के पहले आप कृपा कर यक बताएं कि मैं क्यों स्त्रियों के स्तनों में इतना उत्सुक हूं ? जब भी मैं किसी स्त्री को देखता हुं , पहले उसका स्तन ही मुझे दिखाई देता है। शेष शरीर उतने महत्व का नह रहता।

और यह बात केवल उसके साथ ही लागू नहीं है। प्रत्येक के साथ , प्रात : प्रत्येक के साथ लागू है। और यह बिलकुल स्वाभाविक है। क्योंकि मां का स्तन की जगत के साथ आदमी का पहला परिचय बनता है। यह बुनियादी है। जगत के साथ पहला संपर्क मां के स्तन बनता है। यही कारण है कि स्तन में इतना आकर्षण है , स्तन इतना सुंदर लगता है। उसमे एक चुंबकीय शक्ति है।

इसलिए मैंने उस व्यक्ति से कहा कि अब मैं तुमको विधि दूँगा। और यही विधि थी जो मैंने उसे दी : किसी चीज को चुसो और चूसना बन जाओ। मैंने बताया कि आंखें बंद कर लो और अपनी मां का स्तन याद करो या और कोई स्तन जो तुम्हें पंसद हो , कल्पना करो और ऐसे चूसना शुरू करो कि यह असली स्तन है। शुरू करो।

उसने चूसना शुरू किया। तीन दिन के अंदर वह इतनी तेजी से , पागलपन के साथ चूसने लगा। और वह इसके साथ इतना मंत्र मुग्ध हो गया कि उसने एक दिन आकर मुझसे कहा , यह तो समस्या बन गई है। सात दिन में चूसता ही रहा हूं। और यह इतना सुंदर है और इसमे ऐसी गहरी शांति पैदा होती है। ’’ और तीन महीने के अंदर उसका चोषण एक मौन मुद्रा बन गया। तुम होंठों से समझ नहीं सकते कि वह कुछ कर रहा है। लेकिन अंदर से चूसना जारी था। सारा समय वह चूसता रहता। यह जब बन गया।

तीन महीने बाद उसके मुझसे कहा , ‘‘कुछ अनूठा मेरे साथ घटित हो रहा है। निरंतर कुछ मीठी द्रव सिर से मेरी जीभ पर बरसता है। और यह इतना मीठा और शक्तिदायक है। कि मुझे किसी और भोजन की जरूरत नहीं रही। भूख समाप्त हो गई है। और भोजन मात्र औपचारित हो गया। परिवार में समस्या न बने , इसलिए मैं दूध लेता हूं। लेकिन कुछ मुझे मिल रहा है जो बहुत मीठा है। बहुत जीवनदायी है। ’’

मैंने उसे यह विधि जारी रखने को कहा।

तीन महीने और। और वह एक दिन नाचता हुआ , पागल सा मेरे पास आया। और बोला , चूसना तो चला गया , लेकिन अब मैं दूसरा ही आदमी हो गया हूं। अब मैं वही नहीं रहा हूं। जो पहले था। मरे लिए कोई द्वार खुल गया है। कुछ टूट गया है। और कोई आकांक्षा शेष नहीं रही। अब मैं कुछ भी नहीं चाहता हूं , न परमात्मा। न मोक्ष , अब जो है , जैसा है , ठीक है। मैं उसे स्वीकारता हूं और आनंदित हूं। ’’

इसे प्रयोग में लाओ। किसी चीज को चुसो और चूसना बन जाओ। यह बहुतों के लिए उपयोगी होगा। क्योंकि यह इतना आधारभूत है।

[illegible]
[illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-5

[illegible]-[illegible]—[illegible]-10

[illegible]:

प्रिय देवी, प्रेम किए जाने के क्षण में प्रेम में ऐसे प्रवेश करो जैसे कि वह नित्य जीवन हो।

शिव प्रेम से शुरू करते है। पहली विधि प्रेम से संबंधित है। क्
योंकि तुम्हारे शिथिल होने के अनुभव में प्रेम का अनुभव निकटतम है। अगर तुम प्रेम नहीं कर सकते हो तो तुम शिथिल भी नहीं हो सकते हो। और अगर तुम शिथिल हो सके तो तुम्हारा जीवन प्रेमपूर्ण हो जाएगा।
एक तनावग्रस्त आदमी प्रेम नहीं कर सकता। क्यों? क्योंकि
तनावग्रस्त आदमी सदा उद्देश्य से, प्रयोजन से जीता है। वह धन कमा सकता है। लेकिन प्रेम नहीं कर सकता। क्योंकि प्रेम प्रयोजन-रहित है। प्रेम कोई वस्तु नहीं है। तुम उसे संग्रहीत नहीं कर सकते, तुम उसे बैंक खाते में नहीं डाल सकते। तुम उससे अपने अहंकार की पुष्टि नहीं कर सकते। सच तो यह है कि प्रेम सब से अर्थहीन काम है; उससे आगे उसका कोई अर्थ नहीं है। उससे आगे उसका कोई प्रयोजन नहीं है। प्रेम अपने आप में जीता है। किसी अन्य चीज के लिए नहीं।
तुम धन कमाते हो—किसी प्रयोजन से। वह एक साधन नहीं है। तुम मकान बनाते हो—किसी के रहने के लिए। वह भी एक साधन है। प्रेम साधन नहीं है। तुम क्यों प्रेम करते हो? किस लिए प्रेम करते हो?
प्रेम अपना लक्ष्य आप है। यही कारण है कि हिसाब किताब रखने वाला
मन, तार्किक मन, प्रयोजन की भाषा में सोचने वाला मन प्रेम नहीं कर सकता। और जो मन प्रयोजन की भाषा में सोचता है। वह तनावग्रस्त होगा। क्योंकि प्रयोजन भविष्य में ही पूरा किया जा सकता है। यहां और अभी नहीं।
तुम एक मकान बना रहे हो। तुम उसमें अभी ही नहीं रह सकते। पहले
बनाना होगा। तुम भविष्य में उसमे रह सकते हो; अभी नहीं। तुम धन कमाते हो। बैंक बैलेंस भविष्य में बनेगा, अभी नहीं। अभी साधन का उपयोग कर सकते हो, साध्य भविष्य में आएँगे।
प्रेम सदा यहां है और अभी है। प्रेम का कोई भविष्य नहीं है। यही
वजह है कि प्रेम ध्यान के इतने करीब है। यही वजह है कि मृत्यु भी ध्यान के इतने करीब है। क्योंकि मृत्यु भी यहां और अभी है, वह भविष्य में नहीं घटती।
क्या तुम भविष्य में मर सकते हो? वर्तमान में ही मर सकते हो। कोई
कभी भविष्य में नहीं मरा। भविष्य में कैसे मर सकते हो? या अतीत में कैसे मर सकते हो। अतीत जा चुका वह अब नहीं है। इसलिए अतीत में नहीं मर सकते। और भविष्य अभी आया नहीं है। इसलिए उसमे कैसे मरोगे?
मृत्यु सदा वर्तमान में होती है। मृत्यु प्रेम और ध्यान सब
वर्तमान में घटित होते है। इसलिए अगर तुम मृत्यु से डरते हो तो तुम प्रेम नहीं कर सकते। अगर तुम मृत्यु से भयभीत हो तो तुम ध्यान नहीं कर सकते। और अगर तुम ध्यान से डरे हो तो तुम्हारा जीवन व्यर्थ होगा। किसी प्रयोजन के अर्थ में जीवन व्यर्थ नहीं होगा। वह व्यर्थ इस अर्थ में होगा कि तुम्हें उसमें किसी आनंद की अनुभूति नहीं होगी। जीवन अर्थहीन होगा।
इन तीनों को—प्रेम, ध्यान और मृत्यु को—एक साथ रखना अजीब मालूम पड़ेगा। वह अजीब है नहीं। वे समान अनुभव है। इसलिए अगर तुम एक में प्रवेश कर गए तो शेष दो में भी प्रवेश पा जाओगे।
शिव प्रेम से शुरू करते है: ‘’प्रिय देवी, प्रेम किए जाने के क्षण
में प्रेम में ऐसे प्रवेश करो जैसे कि वह नित्य जीवन है।‘’
इसका क्या अर्थ है? कई चीजें, एक जब तुम्हें प्रेम किया जाता है तो अतीत समाप्त हो जाता है। और भविष्य भी नहीं बचता। तुम वर्तमान के आयाम

में गति कर जाते हो। तुम अब में प्रवेश कर जाते हो। क्या तुमने कभी किसी को प्रेम किया है? यदि कभी किया है तो जानते हो कि उस क्षण मन नहीं होता है।
यही कारण है कि तथाकथित बुद्धिमान कहते है कि प्रेम अंधे होते है,
मन: शून्य और पागल होते है। वस्तुत: वे सच कहते है। प्रेमी इस अर्थ में अंधे होते है। कि भविष्य पर अपने किए का हिसाब रखने वाली आँख उनके पास नहीं होती। वे अंधे है, क्योंकि वे अतीत को नहीं देख पाते। प्रेमियों को क्या हो जाता है?
वे अभी और यही में सरक आते है, अतीत और भविष्य की चिंता नहीं करते,
क्या होगा इसकी चिंता नहीं लेते। इस कारण वे अंधे कहे जाते है। वे है। जो गणित करते है, उनके लिए वे अंधे है, और जो गणित नहीं करते उनके लिए आँख वाले है। जो हिसाबी नहीं है वे देख लेंगे कि प्रेम ही असली आँख है, वास्तविक दृष्टि है।
इसलिए पहली चीज के प्रेम के क्षण में अतीत और भविष्य नहीं होते
है। तब एक नाजुम बिंदु समझने जैसा है। जब अतीत और भविष्य नहीं रहते तब क्या तुम इस क्षण को वर्तमान कह सकते हो? यह वर्तमान है दो के बीच, अतीत और भविष्य के बीच; यह सापेक्ष है। अगर अतीत और भविष्य नहीं रहे तो इसे वर्तमान कहते में क्या तुक है। वह अर्थहीन है। इसीलिए शिव वर्तमान शब्द का व्यवहार नहीं करते। वे कहते है, नित्य जीवन। उनका मतलब शाश्वत से है — शाश्वत में प्रवेश करो।
हम समय को तीन हिस्सों में बांटते है—भूत, भविष्य और वर्तमान। यह विभाजन गलत है। सर्वथा गलत है। केवल भूत और भविष्य समय है, वर्तमान समय का हिस्सा नहीं है। वर्तमान शाश्वत का हिस्सा है। जो बीत गया वह समय है।
जो आने वाला है समय है।
लेकिन जो है वह समय नहीं है। क्योंकि वह कभी बीतता नहीं है। वह सदा है।
अब सदा है। वह सदा है। यह अब शाश्वत है।
अगर तुम अतीत से चलो तो तुम कभी वर्तमान में नहीं आते। अतीत से तुम
सदा भविष्य में यात्रा करते हो। उसमे कोई क्षण नहीं आता जो वर्तमान हो।
तुम अतीत से सदा भविष्य में गति करते रहते हो। आकर वर्तमान से तुम और वर्तमान में गहरे उतरते हो, अधिकाधिक वर्तमान में। यही नित्य जीवन है। इसे हम इस तरह भी कह सकते है। अतीत से भविष्य तक समय है। समय का
अर्थ है कि तुम समतल भूमि पर और सीधी रेखा में गति करते हो। या हम उसे क्षैतिज कह सकते है। और जिस क्षण तुम वर्तमान में होते हो, आयाम बदल जाता है। तुम्हारी गति ऊर्ध्वाधर ऊपर-नीचे हो जाती है। तुम ऊपर, ऊँचाई की और जाते हो या नीचे गहराई की और जाते हो। लेकिन तब तुम्हारी गति क्षैतिज या समतल नहीं होती है।
बुद्ध और शिव शाश्वत में रहते है, समय में नहीं।
जीसस से पूछा गया कि आपके प्रभु के राज्य में क्या होगा? जो पूछ
रहा था वह समय के बारे में नहीं पूछ रहा था। वह जानना चाहता था कि वहां उसकी वासनाओं का क्या होगा। वे कैसे पूरी होंगी? वह पूछ रहा था कि क्या वहां अनंत जीवन होगा या वहां मृत्यु भी होगी। क्या वहां दुःख भी रहेगा। और छोटे और बड़े लोग भी होंगे। जब उसने पूछा कि आपके प्रभु के राज्य में क्या होगा। तब वह इसी दुनिया की बात पूछ रहा था।
और जीसस ने उत्तर दिया—यह उत्तर झेन संत के उत्तर जैसा है—‘’वहां
समय नहीं होगा।‘’ जिस व्यक्ति को यह उत्तर दिया गया था उसने कुछ नहीं समझा होगा। जीसस ने इतना ही कहा—वहां समय नहीं होगा। क्यों? क्योंकि समय क्षैतिज है, और प्रभु का राज्य ऊर्ध्वगामी है। वह शाश्वत है। वह सदा यहां है। उसमे प्रवेश के लिए तुम्हें समय से हट भर जाना है।
तो प्रेम पहला द्वारा है। इसके द्वारा तुम समय के बाहर निकल सकते

हो। यही कारण है कि हर आदमी प्रेम चाहता है, हर आदमी प्रेम करना चाहता है। और कोई नहीं जानता है कि प्रेम को इतनी महिमा क्यों दी जाती है? प्रेम के लिए इतनी गहरी चाह क्यों है? और जब तक तुम यह ठीक से न समझ लो, तुम ने प्रेम कर सकते हो और न पा सकते हो। क्योंकि इस धरती पर प्रेम गहन से गहन घटना है।
हम सोचते है कि हर आदमी, जैसा वह है, प्रेम करने को सक्षम है। वह
बात नहीं है। और इसी कारण से तुम प्रेम में निराशा होते हो। प्रेम एक और ही आयाम है। यदि तुमने किसी को समय के भीतर प्रेम करने की कोशिश की तो तुम्हारी कोशिश हारेगी। समय के रहते प्रेम संभव नहीं है।
मुझे एक कथा याद आती है। मीरा कृष्ण के प्रेम में थी। वह गृहिणी थी
— एक राजकुमार की पत्नी। राजा को कृष्ण से ईर्ष्या होने लगी। कृष्ण थे नहीं। वे शरीर से उपस्थित नहीं थे। कृष्ण और मीरा की शारीरिक मौजूदगी में पाँच हजार वर्षों का फासला था। इसलिए यथार्थ में मीरा कृष्ण के प्रेम में कैसे हो सकती थी। समय का अंतराल इतना लंबा था।
एक दिन राणा ने मीरा से पूछा, तुम अपने प्रेम की बात किए जाती हो,
तुम कृष्ण के आसपास नाचती-गाती हो। लेकिन कृष्ण है कहां? तुम किसके प्रेम में हो? किससे सतत बातें किए जाती हो?
मीरा ने कहां: कृष्ण यहां है, तुम नहीं हो। क्योंकि कृष्ण शाश्वत
है। तुम नहीं हो, वे यहां सदा होंगे। सदा थे। वे यहां है, तुम यहां नहीं हो। एक दिन तुम यहां नहीं थे, किसी दिन फिर यहां नहीं होओगे। इसलिए मैं कैसे विश्वास कुरू कि इन दो अनस्तित्व के बीच तुम हो। दो अनस्तित्व के बीच अस्तित्व क्या संभव है?
राणा समय में है और कृष्ण शाश्वत में है। तुम राणा के निकट हो सकते
हो। लेकिन दूरी नहीं मिटाई जा सकती। तुम दूर ही रहोगे। और समय में तुम कृष्ण से बहुत दूर हो सकते हो, तो भी तुम उनके निकट हो सकते हो। यह आयाम ही और है।
मैं आपने सामने देखता हूं वहां दीवार है। फिर मैं अपनी आंखों को
आगे बढ़ाता हूं और वहां आकाश है। जब तुम समय में देखते हो तो वहां दीवार है। और जब तुम समय के पार देखते हो तो वहां खुला आकाश है, अनंत आकाश। प्रेम अनंत का द्वार खोल सकता है। अस्तित्व की शाश्वतता का
द्वार। इसलिए अगर तुमने कभी सच में प्रेम किया है तो प्रेम को ध्यान की विधि बनाया जा सकता है। यह वहां विधि है: ‘’प्रिय देवी प्रेम किए जाने के क्षण में प्रेम में ऐसे प्रवेश करो जैसे कि यह नित्य जीवन हो।‘’ बाहर-बाहर रहकर प्रेमी मत बनो, प्रेमपूर्ण होकर शाश्वत में
प्रवेश करो। जब तुम किसी को प्रेम करते हो तो क्या तुम वहां प्रेमी की तरह होते हो? अगर होते हो तो समय में हो, और तुम्हारा प्रेम झूठा है। नकली है, अगर तुम अब भी वहां हो और कहते हो कि मैं हूं तो शारीरिक रूप से नजदीक होकर भी आध्यात्मिक रूप से तुम्हारे बीच दो ध्रुवों की दूरी कायम रहती है।
प्रेम में तुम न रहो, सिर्फ प्रेम रहे; इसलिए प्रेम ही हो जाओ।
अपने प्रेमी या प्रेमिका को दुलार करते समय दुलार ही हो जाओ। चुंबन लेते समय चूसने वाले या चूमे जाने वाले मत रहो, चुंबन ही बन जाओ। अहंकार को बिलकुल भूल जाओ। प्रेम के कृत्य में धुल-मिल जाओ। कृत्य में इतनी गहरे समा जाओ कि कर्ता न रहे।
और अगर तुम प्रेम में नहीं गहरे उतर सकते तो खाने और चलने में गहरे उतरना कठिन होगा। बहुत कठिन होगा। क्योंकि अहंकार को विसर्जित करने के लिए प्रेम सब से सरल मार्ग है। इसी वजह से अहंकारी लोग प्रेम नहीं कर पाते। वे प्रेम के बारे में बातें कर सकते है। गीत गा सकते है। लिख सकते है; लेकिन वे प्रेम नहीं कर सकते। अहंकार प्रेम नहीं कर सकता है।

शिव कहते है, प्रेम ही हो जाओ। जब आलिंगन में हो तो आलिंगन हो जाओ। चुंबन लेते समय चुंबन हो जाओ। अपने को इस पूरी तरह भूल जाओ कि तुम कह सको कि मैं अब नहीं हूं, केवल प्रेम है। तब ह्रदय नहीं धड़कता है, प्रेम की धड़कता है। तब खून नहीं दौड़ता है, प्रेम ही दौड़ता है। तब आंखे नहीं देखती है, प्रेम ही देखता है। तब हाथ छूने को नहीं बढ़ते है, प्रेम ही छूने को बढ़ता है। प्रेम बन जाओ और शाश्वत जीवन में प्रवेश करो।
प्रेम अचानक तुम्हारे आयाम को बदल देता है। तुम समय से बाहर फेंक
दिये जाते हो। तुम शाश्वत के आमने-सामने खड़े हो जाते हो। प्रेम गहरा ध् यान बन सकता है—गहरे से गहरा। और कभी-कभी प्रेमियों ने वह जाना है जो संतों न भी नहीं जाना। कभी-कभी प्रेमियों ने उस केंद्र को छुआ है जो अनेक योगियों ने नहीं छुआ।
शिव को अपनी प्रिया देवी के साथ देखो। उन्हें ध्यान से देखो। वे
दो नहीं मालूम होते। वे एक ही है। यह एकांत इतना गहरा है। हम सबने शिव लिंग देखे है। ये लैंगिक प्रतीक है। शिव के लिंग का प्रतीक है। लेकिन वह अकेला नहीं है, वह देवी की योनि में स्थित है। पुराने दिनों के हिंदू बड़े साहसी थे। अब जब तुम शिवलिंग देखते हो तो याद नह रहता कि यह एक लैंगिक प्रतीक है। हम भूल गए है। हमने चेष्टा पूर्वक इसे पूरी तरह भुला दिया है।
प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जुंग ने अपनी आत्मकथा में, अपने संस्
मरणों में एक मजेदार घटना का उल्लेख किया है। वह भारत आया और कोणार्क देखने को गया। कोणार्क के मंदिर में शिवलिंग है। जो पंडित उसे समझाता था उसने शिवलिंग के सिवाय सब कुछ समझाया। और वे इतने थे कि उनसे बचना मुश्किल था। जुंग तो सब जानता था, लेकिन पंडित को सिर्फ चिढ़ाने के लिए पूछता रहा की ये क्या है? तो पंडित ने आखिर जुंग के कान में कहा कि मुझे यहां मत पूछिये, मैं पीछे आपको बताऊंगा। यह गोपनीय है।
जुंग मन ही मन हंसा होगा। ये है आज के हिंदू। फिरा बहार आकर पंडित
ने कहा कि दूसरों के सामने आपका पूछना उचित न था। अब में बताता हूं। यह गुप्त चीज है। और तब फिर उसने जुंग के कान में कहा ये हमारे गुप्तांग है।
जुंग जब यहां से वापस गया तो वहां वह एक महान विद्वान से मिला। पूर्वीय चिंतन मिथक और दर्शन के विद्वान, हेनरिख जिमर से। जुंग ने यह किस्सा जिमर को सुनाया। जिमर उन थोड़े से मनीषियों में था जिन्होंने भारतीय चिंतन में डूबने की चेष्टा की थी। और वह भारत का उसकी विचारणा का, जीवन के प्रति उसके अतार्किक रहस्यवादी दृष्टि वादी दृष्टिकोण का प्रेमी था। जब उसने जुंग से यह सूना तो वह हंसा और बोला, बदलाहट के लिए अच्छा है। मैंने बुद्ध, कृष्ण, महावीर जैसे महान भारतीयों के बारे में सुना है। तुम तो सुना रहे हो वह किसी महान भारतीय के संबंध में नहीं, भारतीयों के संबंध में कुछ कहता है।
शिव के लिए प्रेम महाद्वार है। और उनके लिए कामवासना निंदनीय
नहीं है। उनके लिए काम बीज है और प्रेम उसका फूल है। और अगर तुम बीज की निंदा करते हो तो फूल की भी निंदा अपने आप हो जाती है। काम प्रेम बन सकता है। और अगर वह कभी प्रेम नहीं बनता है तो वह पंगु हो जाता है। पंगुता की निंदा करो, काम की नहीं। प्रेम को खिलना चाहिए। उसको प्रेम बनना चाहिए। और अगर यह नहीं होता है तो यह काम दोष नहीं है, यह दोष तुम्हारा है।
काम को काम नहीं रहना है। यहीं तंत्र की शिक्षा है। उसे प्रेम में रूपांतरित होना ही चाहिए। और प्रेम को भी प्रेम ही नहीं रहना है। उसे प्रकाश में, ध्यान के अनुभव में अंतिम, परम रहस्यवादी शिखर में रूपांतरित होना चाहिए। प्रेम को रूपांतरित कैसे किया जाए?

कृत्य हो जाओ और कर्ता को भूल जाओ। प्रेम करते हुए प्रेम, महज
प्रेम हो जाओ। तब यह तुम्हारा प्रेम मेरा प्रेम या किसी अन्य का प्रेम नहीं है। तब यह मात्र प्रेम है, जब कि तुम नहीं हो, जब कि तुम परम स् त्रोत या धारा के हाथ में हो। तब कि तुम प्रेम में हो तुम प्रेम में नहीं हो, प्रेम न ही तुम्हें आत्मसात कर लिया है। तुम तो अंतर्धान हो गए हो। मात्र प्रवाहमान ऊर्जा बनकर रह गए हो।
इस यूग का एक महान सृजनात्मक मनीषी डी. एच. लॉरेंस, जाने अनजाने
तत्र विद था। पश्चिम में वि पूरी तरह निंदित हुआ। उसकी किताबें जब्त हुई। उस पर अदालतों में अनेक मुकदमे चले, सिर्फ इसलिए कि उसने कहा कि काम ऊर्जा एक मात्र ऊर्जा है। और अगर तुम उसकी निंदा करते हो, दमन करते हो, तो तुम जगत के खिलाफ हो। और तब तुम कभी भी इस ऊर्जा की परम खिलावट को नहीं जान पाओगे। और दमित होने पर यह कुरूप हो जाती है। और यही दुस्चक्र है।
पुरोहित, नीतिवादी, तथाकथित धार्मिक लोग, पोप, शंकराचार्य, और
दूसरे लोग काम की सतत निंदा करते है। वे कहते है कि यह एक कुरूप चीज है। और तुम इसका दमन करते होत तो यह सचमुच कुरूप हो जाती है। तब वे कहते है कि देखो, जो हम कहते थे वह सच निकला। तुमने ही इसे सिद्ध कर दिया। तुम जो भी कर रहे हो वह कुरूप है, और तुम जानते हो कि वह कुरूप है।
लेकिन काम स्वयं में कुरूप नहीं है। पुरोहितों ने उसे कुरूप कर
दिया है। और जब वे इसे कुरूप कर चूकते है तब वे सही साबित होते है। ओर जब वे सही साबित होते है तो तुम उसे कुरूप से कुरूप तर किए देते हो। काम तो निर्दोष ऊर्जा है। तुम में प्रवाहित होता जीवन है, जीवंत अस्तित्व है। उसे पंगु मत बनाओ। उसे उसके शिखरों की यात्रा करने दो। उसका अर्थ है कि काम को प्रेम बनना चाहिए। फर्क क्या है?
जब तुम्हारा मन कामुक होता है तो तुम दूसरे का शोषण कर रहे हो।
दूसरा मात्र एक यंत्र होता है। जिसे इस्तेमाल करके फेंक देना है। और जब काम प्रेम बनता है तब दूसरा यंत्र नहीं होता, दूसरे का शोषण नहीं किया जाता, दूसरा सच में दूसरा नहीं होता। तब तुम प्रेम करते हो तो यह स्व-केंद्रित नहीं है। उस हालत में तो दूसरा ही महत्वपूर्ण होता है। अनूठा होता है। तब तुम एक दूसरे का शोषण नहीं करते, तब दोनों एक गहरे अनुभव में सम्मिलित हो जाते हो। साझीदार हो जाते हो। तुम शोषक और शोषित न होकर एक दूसरे को प्रेम की और ही दुनिया में यात्रा करने में सहायता करते हो। काम शोषण है, प्रेम एक भिन्न जगत में यात्रा है।
अगर यह यात्रा क्षणिक न रहे, अगर यह यात्रा ध्यान पूर्ण हो जाए,
अर्थात अगर तुम अपने को बिलकुल भूल जाओ और प्रेमी प्रेमिका विलीन हो जाएं और केवल प्रेम प्रवाहित होता रहे, तो शिव कहते है—‘’शाश्वत जीवन तुम्हारा है।‘’

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र
(तंत्र-सूत्र—भाग-1)
प्रवचन-7

□□□□□□-□□□□□□—□□□□□-11

□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□:

□□ □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□ □□ □□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□

यह बहुत सरल दिखता है। लेकिन उतना सरल है नहीं। मैं इसे फिर से पढ़ता हूं , ‘’ जब चींटी के रेंगने की अनुभूति हो तो इंद्रियों के द्वार बंद कर दो। तब। ‘’ यक एक उदाहरण मात्र है। किसी भी चीज से काम चलेगा। इंद्रियों के द्वार बंद कर दो जब चींटी के रेंगने की अनुभूति हो। और तब —तब घटना घट जाएगी। शिव कह क्या रहे है ?

तुम्हारे पाँव में कांटा गड़ा है। वह दर्द देता है , तुम तकलीफ में हो। या तुम्हारे पाँव पर एक चींटी रेंग रही है। तुम्हें उसका रेंगना महसूस होता है। और तुम अचानक उसे हटाना चाहते हो। किसी भी अनुभव को ले सकते है। तुम्हें धाव है जो दुखता है। तुम्हारे सिर में दर्द है , या कहीं शरीर में दर्द है। विषय के रूप में किसी से भी काम चलेगा। चींटी का रेंगना उदाहरण भर है।

शिव कहते है : ‘’जब चींटी के रेंगने की अनुभूति हो तो इंद्रियों के द्वारा बंद कर दो। ‘’

जो भी अनुभव हो , इंद्रियों के सब द्वार बंद कर दो करना क्या है ? आंखें बंद कर लो और सोचो कि मैं अंधा हूं और देख नहीं सकता। अपने कान बंद कर लो और सोचो कि मैं सुन नहीं सकता। पाँच इंद्रियाँ है , उन सब को बंद कर लो। लेकिन उन्हें बंद कैसे करोगे।

यह आसान नहीं है। क्षण भर के लिए श्वास लेना बंद कर दो , और तुम् हारी सब इंद्रियाँ बंद हो जायेगी। और जब श्वास रुकी है और इंद्रियाँ बंद है , तो रेंगना कहां है ? चींटी कहां है ? अचानक तुम दूर , बहुत दूर हो जाते हो।

मरे एक मित्र है , वृद्ध है। वे एक बार सीढ़ी से गिर पड़े। और

डॉक्टरों ने कहा कि अब वे तीन महीनों तक खाट से नहीं हिल सकेंगे। तीन महीने विश्राम में रहना है। और वे बहुत अशांत व्यक्ति थे। पड़े रहना उनके लिए कठिन था। मैं उन्हें देखने गया। उन्होंने कहा कि मेरे लिए प्रार्थना करें और मुझे आशीष दें कि में मर जाऊं। क्योंकि तीन महीने पड़े रहना मौत से भी बदतर है। मैं पत्थर की तरह कैसे पडा रह सकता हूं। और सब कहते है कि हिलिए मत।
मैंने उनसे कहा, यह अच्छा मौका है। आंखें बंद करें और सोचें कि मैं पत्थर हूं, मूर्तिवत। अब आप हिल नहीं सकते। आखिर कैसे हिलेंगे। आँख बंद करें और पत्थर की मूर्ति हो जाएं। उन्होंने पूछा कि उससे क्या होगा। मैंने कहा की प्रयोग तो करें। मैं यहां बैठा हूं। और कुछ किया भी नहीं जा सकता। जैसे भी हो आपको तो यहां तीन महीने पड़े रहना है। इसलिए प्रयोग करें।
वैसे तो वे प्रयोग करने वाले जीव नहीं थे। लेकिन उनकी यह स्थिति
ही इतनी असंभव थी कि उन्होंने कहा कि अच्छा मैं प्रयोग करूंगा। शायद कुछ हो। वैसे मुझे भरोसा नहीं आता कि सिर्फ यह सोचने से कि मैं पत्थरवत हूं, कुछ होने वाला है। लेकिन मैं प्रयोग करूंगा। और उन्होंने किया। मुझे भी भरोसा नहीं था कि कुछ होने वाला है। क्योंकि वे आदमी ही
ऐसे थे। लेकिन कभी-कभी जब तुम असंभव और निराश स्थिति में होते हो तो चीजें घटित होने लगती है। उन्होंने आंखें बंद कर ली। मैं सोचता था कि दो तीन मिनट में वे आंखे खोलेंगे। और कहेंगे कि कुछ नहीं हुआ। लेकिन उन् होंने आंखें नहीं खोली। तीस मिनट गुजर गए। और मैं देख सका कि वे पत्थर हो गए है। उनके माथे पर से सभी तनाव विलीन हो गए। उनका चेहरा बदल गया। मुझे कही और जाना था, लेकिन वे आंखे बंद किए पड़े थे। और वे इतने शांत थे मानो मर गए है। उनकी श्वास शांत हो चली थी। लेकिन क्योंकि मुझे जाना था, इसलिए मैंने उनसे कहा कि अब आंखे खोलें और बताएं कि क्या हुआ। उन्होंने जब आंखे खोली तब वे एक दूसरे ही आदमी थे। उन्होंने कहा,
यह तो चमत्कार है। आपने मेरे साथ क्या किया, मैंने कुछ भी नहीं किया। उन्होंने फिर कहा कि आपने जरूर कुछ किया, क्योंकि यह तो चमत्कार है। जब मैंने सोचना शुरू किया कि मैं पत्थर जैसा हूं तो अचानक यह भाव आया कि यदि मैं अपने हाथ हिलाना भी चाहता हूं तो उन्हें हिलाना भी असंभव है। मैंने कर्इ बार अपनी आंखें खोलनी चाही, लेकिन वे पत्थर जैसी हो गई थी। और नहीं खुल पा रही थी। और उन्होंने कहा, मैं चिंतित भी होने लगा कि आप क्या कहेंगे, इतनी देर हुई जाती है, लेकिन मैं असमर्थ था। मैं तीस मिनट तक हिल नहीं सका। और जब सब गति बंद हो गई तो अचानक संसार विलीन हो गया। और मैं अकेला रह गया। अपने आप में गहरे चला गया। और उसके साथ दर्द भी जाता रहा।
उन्हें भारी दर्द था। रात को ट्रैंक्विलाइजर के बिना उन्हें नींद नहीं आती थी। और वैसा दर्द चला गया। मैंने उनसे पूछा कि जब दर्द विलीन हो रहा था तो उन्हें कैसा अनुभव हो रहा था। उन्होंने कहा कि पहले तो लगा कि दर्द है, पर कहीं दूर पर है, किसी और को हो रहा है। और धीरे-धीरे वह दूर और दूर होता गया। और फिर एक दम से ला पता हो गया। कोई दस मिनट तक दर्द नहीं था। पत्थर के शरीर को दर्द कैसे हो सकता है।
यह विधि कहती है: ‘’इंद्रियों के द्वारा बंद कर दो।‘’
पत्थर की तरह हो जाओ। जब तुम सच में संसार के लिए बंद हो जाते हो तो
तुम अपने शरीर के प्रति भी बंद हो जाते हो। क्योंकि तुम्हारा शरीर तुम् हारा हिस्सा न होकर संसार का हिस्सा है। जब तुम संसार के प्रति बिलकुल बंद हो जाते हो तो अपने शरीर के प्रति भी बंद हो गए। और तब शिव कहते है, तब घटना घटेगी।
इसलिए शरीर के साथ इसका प्रयोग करो। किसी भी चीज से काम चल जाएगा।

रेंगती चींटी ही जरूरी नहीं है। नहीं तो तुम सोचोगे कि जब चींटी रेंगेगी तो ध्यान करेंगे। और ऐसी सहायता करने वाली चींटियाँ आसानी से नहीं मिलती। इसलिए किसी सी भी चलेगा। तुम अपने बिस्तर पर पड़े हो और ठंडी चादर महसूस हो रही है। उसी क्षण मृत हो जाओ। अचानक चादर दूर होने लगेगी। विलीन हो जाएगी। तुम बंद हो, मृत हो, पत्थर जैसे हो, जिसमे कोई भी रंध्र नहीं है, तुम हिल नहीं सकते।

और जब तुम हिल नहीं सकते तो तुम अपने पर फेंक दिये जाते हो। अपने में केंद्रित हो जाते हो। और तब पहली बार तुम अपने केंद्र से देख सकते हो। और एक बार जब अपने केंद्र से देख लिया तो फिर तुम वही व्यक्ति नहीं रह जाओगे जो थे।

[illegible]

[illegible]

([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)

[illegible]-7

[illegible]-[illegible]—[illegible]-12

[illegible]:

[illegible]—[illegible]

तुम यहां बैठे हो; बस भाव करो कि तुम वजनशून्य हो गए हो। तुम्हारा वज़न न रहा। तुम्हें पहले लगेगा कि कहीं यहां वज़न है। वजनशून्य होने का भाव जारी रखो। वह आता है। एक क्षण आता है। जब तुम समझोगे कि तुम वज़न शून्य हो। वज़न नहीं है। और जब वज़न शून्य नहीं रहा तो तुम शरीर नहीं रहे। क्योंकि वज़न शरीर का है; तुम्हारा नहीं, तुम तो वज़न शून्य हो।

इस संबंध में बहुत प्रयोग किए गये है। कोई मरता है तो संसार भर में अनेक वैज्ञानिकों ने मरते हुए व्यक्ति का वज़न लेने की कोशिश की है। अगर कुछ फर्क हुआ, अगर कुछ चीज शरीर के बहार निकली है, कोई आत्मा या कुछ अब वहां नहीं है। क्योंकि विज्ञान के लिए कुछ भी बिना वज़न के नहीं है।

सब पदार्थ के लिए वज़न बुनियादी है। सूर्य की किरणों का भी वज़न है। वह अत्यंत कम है, न्यून है, उसको मापना भी कठिन है; लेकिन

वैज्ञानिकों ने उसे भी मापा है। अगर तुम पाँच वर्ग मील के क्षेत्र पर फैली सब सूर्य किरणों को इकट्ठा कर सको तो उनका वज़न एक बाल के वज़न के बराबर होगा। सूर्य किरणों का भी वज़न है। वे तौली जा सकती है। विज्ञान के लिए कुछ भी वज़न के बिना नहीं है। और अगर कोई चीज वज़न के बिना है तो वह पदार्थ नहीं, उप पदार्थ। और विज्ञान पिछले बीस पच्चीस वर्षो तक विश् वास करता था कि पदार्थ के अतिरिक्त कुछ नहीं है। इसलिए जब कोई मरता है और कोई चीज शरीर से निकलती है तो वज़न में फर्क पड़ना चाहिए।
लेकिन यह फर्क कभी न पडा, वज़न वही का वही रहा। कभी-कभी थोड़ा बढ़ा
ही है। और वह समस्या है। जिंदा आदमी का वज़न कम हुआ, मुर्दा का ज्यादा। उसमे उलझने बढ़ी, क्योंकि वैज्ञानिक तो यह पता लेने चले थे कि मरने पर वज़न घटता है। तभी तो वे कह सकते है कि कुछ चीज बाहर गई। लेकिन वहां तो लगता है। कि कुछ चीज अंदर ही आई। आखिर हुआ क्या।
वज़न पदार्थ का है, लेकिन तुम पदार्थ नहीं हो। अगर वजन शून्यता की
हम विधि का प्रयोग करना है तो तुम्हें सोचना चाहिए। सोचना ही नहीं, भाव करना चाहिए कि तुम्हारा शरीर वजनशून्य हो गया है। अगर तुम भाव करते ही गए। भाव करते ही गए। तो तुम वजनशून्य हो, तो एक क्षण आता है कि तुम अचानक अनुभव करते हो कि तुम वज़न शुन्य हो गये। तुम वजनशून्य ही हो। इसलिए तुम किसी समय भी अनुभव कर सकते हो। सिर्फ एक स्थिति पैदा करनी है। जिसमें तुम फिर अनुभव करो कि तुम वजनशून्य हो। तुम्हें अपने को सम्मोहन मुक्त करना है।
तुम्हारा सम्मोहन क्या है? सम्मोह न यह है कि तुमने विश्वास किया
है कि मैं शरीर हूं, और इसलिए वज़न अनुभव करते हो। अगर तुम फिर से भाव करों, विश्वास करो कि मैं शरीर नहीं हूं, तो तुम वज़न अनुभव नहीं करोगे। यही सम्मोहन मुक्ति है कि जब तुम वज़न अनुभव नहीं करते तो तुम मन के पार चले गए।
शिव कहते है: ‘’जब किसी बिस्तर या आसन पर हो तो अपने को वजनशून्य हो जाने दो—मन के पार।‘’ तब बात घटती है।
मन का भी वज़न है। प्रत्येक आदमी के मन का वज़न है। एक समय कहा
जाता था कि जितना वज़नी मस्तिष्क हो उतना बुद्धिमान होता है। और आमतौर से यह बात सही है। लेकिन हमेशा सही नहीं है। क्योंकि कभी-कभी छोटे मस् तिष्क के भी महान व्यक्ति हुए है। और महा मूर्ख मस्तिष्क भी वज़नी होते है।
कुछ बातें। कभी-कभी मुर्दो का वज़न क्यों बढ़ जाता है। ज्यों ही
चेतना शरीर को छोड़ती है कि शरीर असुरक्षित हो जाता है। बहुत सी चीजें उसमें प्रवेश कर जा सकती है। तुम्हारे कारण वे प्रवेश नहीं कर सकती है। एक शिव में उनके तरंगें प्रवेश कर सकती है। तुममें नहीं कर सकती है। तुम यहां थे, शरीर जीवित था। वह अनेक चीजों से बचाव कर सकता था। यही कारण है कि तुम एक बार बीमार पड़े कि यह एक लंबा सिलसिला हो जाता है। एक के बाद दूसरी बीमारी आती चली जाती है। एक बार बीमार होकर तुम असुरक्षित हो जाते हो। हमले के प्रति खुल जाते हो। प्रतिरोध जाता रहता है। तब कुछ भी प्रवेश कर सकता है। तुम्हारी उपस्थिति शरीर की रक्षा करती है। इसलिए कभी-कभी मृत शरीर का वज़न बढ़ सकता है। क्योंकि जिस क्षण तुम उससे हटते हो, उसमे कुछ भी प्रवेश कर सकता है।
दूसरी बात है कि जब तुम सुखी होते हो तो तुम वजनशून्य अनुभव करते
हो। और दुःखी होते हो तो वज़न अनुभव करते हो। लगता है कि कुछ तुम्हें नीचे को खींच रहा है। तब गुरुत्वाकर्षण बहुत बढ़ जाता है। दुःख की हालत में वज़न बढ़ जाता है। जब तुम सुखी होते हो तो हलके होते हो, तुम ऐसा अनुभव करते हो। क्यों? क्योंकि जब तुम सुखी हो, जब तुम आनंद का क्षण अनुभव करते हो। तो तुम शरीर को बिलकुल भूल जाते हो। और जब उदास होते हो,

दुःखी होते हो तब, शरीर के अति निकट आ जाते हो। उसे भूल नहीं पाते। उससे जूड़ जाते हो। तब तुम भार अनुभव करते हो। ये भार तुम्हारा नहीं है, तुम् हारे शरीर से चिपकने का है, शरीर का है। वह तुम्हें नीचे की और खींच रहा है। जमीन की तरफ खींचता है, मानों तुम जमीन में गड़े जा रहे हो। सुख में तुम निर्भार होते हो। शोक में, विषाद में वज़नी हो जाते हो।
इसलिए गहरे ध्यान में, जब तुम अपने शरीर को बिलकुल भूल जाते हो,
तुम जमीन से ऊपर हवा में उठ सकते हो। तुम्हारे साथ तुम्हारा शरीर भी ऊपर उठ सकता है। कई बार ऐसा होता है।
बोलिविया में वैज्ञानिक एक स्त्री का निरीक्षण कर रहे है। ध्यान
करते हुए वह जमीन से चार फीट ऊपर उठ जाती है। अब तो यह वैज्ञानिक निरीक्षण की बात है। उसके अनेक फोटो और फिल्म लिए जा चुके हे। हजारों दर्शकों के सामने वह स्त्री अचानक ऊपर उठ जाती है। उसके लिए गुरुत्वाकर्षण व्यर्थ हो जाता है। अब तक इस बात की सही व्याख्या नहीं की जा सकी है कि क्यों होता है। लेकिन वह स्त्री गैर-ध्यान की अवस्था में ऊपर नहीं उठ सकती। या अगर उसके ध्यान में बाधा हो जाए तो भी वह ऊपर से झट नीचे आ जाती है। क्या होता है?
ध्यान की गहराई में तुम अपने शरीर को बिलकुल भूल जाते हो। तादात्
म्य टूट जाता है। शरीर बहुत छोटी चीज है और तुम बहुत बड़े हो। तुम्हारी शक्ति अपरिसीम है। तुम्हारे मुकाबले में शरीर तो कुछ भी नहीं है। यह तो ऐसा ही है कि जैसे एक सम्राट ने अपने गुलाम के साथ तादात्म्य स्थापित कर लिया है। इसलिए जैसे गुलाम भीख मांगता है। वैसे ही सम्राट भी भीख मांगता है। जैसे गुलाम रोता है। वैसे ही सम्राट भी रोता है। और जब गुलाम कहता है कि मैं ना कुछ हूं तो सम्राट भी कहता है। मैं ना कुछ हूं लेकिन एक बार सम्राट अपने अस्तित्व को पहचान ले, पहचान ले कि वह सम्राट है और गुलाम बस गुलाम है, से कुछ बदल जाएगा। अचानक बदल जाएगा।
तुम वह अपरिसीम शक्ति हो जो क्षुद्र शरीर से एकात्म हो गई है। एक
बार यह पहचान हो जाए, तुम अपने स्व को जान लो, तो तुम्हारी वजन शून्यता बढ़ेगी। और शरीर का वज़न घटेगा। तब तुम हवा मैं उठ सकते हो, शरीर ऊपर जा सकता है।
ऐसी अनेक घटनाएं है जो अभी साबित नहीं की जा सकती। लेकिन वे साबित होंगी। क्योंकि जब एक स्त्री चार फीट ऊपर उठ सकती है। तो फिर बाधा नहीं। दूसरा हजार फीट ऊपर उठ सकता है। तीसरा अनंत अंतरिक्ष में पूरी तरह जा सकता है। सैद्धांतिक रूप से यह काई समस्या नहीं है। चार फीट ऊपर उठे कि चार सौ फीट कि चार हजार फीट, इससे क्या फर्क पड़ता है।
राम तथा कई अन्य के बारे में कथाएं है कि वे शरीर विलीन हो गए थे।
अनेक मृत शरीर इस धरती पर कहीं नहीं पाए गए। मोहम्मद बिलकुल विलीन हो गए थे। शरीर ही नहीं आपने घोड़ के साथ। वे कहानियां असंभव मालूम पड़ती है। पौराणिक मालूम पड़ती है। लेकिन जरूरी नहीं है कि वे मिथक ही हों। एक बार तुम वज़न शून्य शक्ति को जान जाओ। तो तुम गुरुत्वाकर्षण के मालिक हो गए। तुम उसका उपयोग भी कर सकते हो, यह तुम पर निर्भर करता हे। तुम सशरीर अंतरिक्ष में विलीन हो सकत हो।
लेकिन हमारे लिए वज़न शून्यता समस्या रहेगी। सिद्घासन की विधि
है। जिस में बुद्ध बैठते है, वजनशून्य होने की सर्वोतम विधि है। जमीन पर बैठो, किसी कुर्सी या अन्य आसन पर नहीं। मात्र जमीन पर बैठो। अच्छा हो कि उस पर सीमेंट या कोई कृत्रिमता नहीं हो। जमीन पर बैठो कि तुम प्रकृति के निकटतम रहो। और अच्छा हो कि तुम नंगे बैठो। जमीन पर नंगे बैठो— बुद्धासन में, सिद्घासन में।
वज़न शून्य होने के लिए सिद्घासन सर्वश्रेष्ठ आसन है। क्यों? क् योंकि जब तुम्हारा शरीर इधर-उधर झुका होता है तो तुम ज्यादा वज़न अनुभव

करते हो। तब तुम्हारे शरीर को गुरुत्वाकर्षण से प्रभावित होने के लिए ज्यादा क्षेत्र है। यदि मैं इस कुर्सी पर बैठा हूं तो मेरे शरीर का बड़ा क्षेत्र गुरुत्वाकर्षण से प्रभावित होता है। जब तुम खड़े हो तो प्रभावित क्षेत्र कम हो जाता है। लेकिन बहुत देर तक खड़ा नहीं रहा जा सकता है। महावीर सदा खड़े-खड़े ध्यान करते थे, क्योंकि उस हालत में गुरुत्वाकर्षण का न्यूनतम क्षेत्र घेरता है। तुम्हारे पैर भर जमीन को छूते है। जब पाँव पर खड़े हो तो गुरुत्वाकर्षण तुम पर न्यूनतम प्रभाव करता है। और गुरुत्वाकर्षण की वज़न है।

पाँवों और हाथों को बांधकर सिद्धासन में बैठना ज्यादा कारगर होता है। क्योंकि तब तुम्हारी आंतरिक विद्युत एक वर्तुल बन जाती है। रीढ़ सीधी रखो। अब तुम समझ सकते हो कि सीधी रीढ़ रखने पर इतना जोर क्या दिया जाता है। क्योंकि सीधी रीढ़ से कम से कम जगह घेरी जाती है। तब गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव कम रहता है। आंखे बंद रखते हुए अपने को पूरी तरह संतुलित कर लो, अपने को केंद्रित कर लो। पहले दाई और झुककर गुरुत्वाकर्षण का अनुभव करो। फिर बाई और झुककर गुरुत्वाकर्षण का अनुभव करो। तब उस केंद्र को खोजों जहां गुरुत्वाकर्षण या वज़न कम से कम अनुभव होता है। और उस स्थिति में थिर हो जाओ।

और तब शरीर को भूल जाओ और भाव करो कि तुम वज़न नहीं हो। तुम वज़न शून्य हो। फिर इस वज़न शून्यता का अनुभव करते रहो। अचानक तुम वज़न शून्य हो जाते हो। अचानक तुम शरीर नहीं रह जाते हो, अचानक तुम शरीर शून्यता के एक दूसरे ही संसार में होते हो।

वज़न शून्यता शरीर शून्यता है। तब तुम मन का भी अतिक्रमण कर जाते हो। मन भी शरीर का हिस्सा है, पदार्थ का हिस्सा है। पदार्थ का वज़न होता है। तुम्हारा कोई वज़न नहीं है। इस विधि का यही आधार है।

किसी भी एक विधि को प्रयोग में लाओ। लेकिन कुछ दिनों तक उसमे लगे रहो। ताकि तुम्हें पता हो क वह तुम्हारे लिए कारगर है या नहीं।

[illegible]
[illegible] [illegible] [illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-7

[illegible]-[illegible]—[illegible]-13

‘’[illegible] … [illegible]‘’

ये सारे सूत्र, भीतर के केंद्र को कैसे पाया जाए, उससे संबंधित है। उसके लिए जो बुनियादी तरकीब, जो बुनियादी विधि काम में लायी गयी है, वह यह है कि तुम अगर बाहर कहीं भी, मन में, ह्रदय में या बाहर की किसी दीवार में एक केंद्र बना सके और उस पर समग्रता से अपने अवधान को केंद्रित कर सके और उस बीच समूचे संसारा को भूल सके और एक वहीं बिंदू

तुम्हारी चेतना में रह जाए। तो तुम अचानक अपने आंतरिक केंद्र पर फेंक दिए जाओगे। यह कैसे काम करता है, इसे समझो। तुम्हारा मन एक भगोड़ा है, एक भाग दौड़ ही है। वह कभी एक बिंदु पर नहीं टिकता है। वह निरंतर कहीं जा रहा है। गति कर रहा है। पहूंच रहा है। लेकिन वह कभी एक बिंदू पर नहीं टिकता है। वह एक विचार से दूसरे विचार की और, अ से ब की और यात्रा करता रहता है। लेकिन कभी वह अ पर नहीं टिकता है, कभी वह ब पर नहीं टिकता है। वह निरंतर गतिमान है।
यह याद रहे कि मन सदा चलायमान है। वह कहीं पहुंचने की आशा तो करता
है, लेकिन कहीं पहुंचता नहीं है। वह पहुंच नहीं सकता। मन की संरचना ही गीतिमय है। मन केवल गति करता है। वह मन का अंतर्भूत स्वभाव है। गति ही उसकी प्रक्रिया है। अ से ब को, ब से अ को, वह चलता ही जाता है।
अगर तुम अ या ब या किसी बिंदु पर ठहर गए, तो मन तुमसे संघर्ष करेगा।
वह कहेगा कि आगे चलो। क्योंकि अगर तुम रूक गए, मन तुरंत मर जायेगा। वह गति में रहकर ही जीता है। मन का अर्थ ही प्रक्रिया है। अगर तुमने गति नहीं की तुम रूक गये तो मन अचानक समाप्त हो जायेगा। वह नहीं बचेगा। केवल चेतना बचेगी।
चेतना तुम्हारी स्वभाव है। मन तुम्हारा कर्म है। चलने जैसा। इसे समझना कठिन है। क्योंकि हम समझते है कि मन कोई ठोस वास्तविक वस्तु है। वह नहीं है। मन महज एक क्रिया है। यह कहना बेहतर होगा कि यह मन नहीं, मनन है। चलने की तरह यह एक प्रक्रिया है। चलना प्रक्रिया है; अगर तुम रूक जाओ, तो चलना समाप्त हो जायेगा। तुम तब नहीं कह सकते कि चलना बैठना है। तुम रूक जाओ, तो चलना समाप्त है। तुम रूक जाओ तो चलना कहां है। चलना बंद। पैर है, पर चलना नहीं है। पैर चल सकते है। लेकिन अगर तुम रूक जाओ तो, चलना नहीं होगा।
चेतना पैर जैसी है, वह तुम्हारा स्वभाव है। मन चलने जैसा है, वह एक प्रक्रिया है। जब चेतना एक जगह से दूसरी जगह जाती है तब वह प्रक्रिया मन है। जब चेतना अ से ब और ब से स को जाती है तब यह गति मन है। अगर तुम गति को बंद कर दो, तो मन नहीं रहेगा। तुम चेतन हो, लेकिन मन नहीं है। जैसे पैर तो है, लेकिन चलना नहीं है। चलना क्रिया है। कर्म है; मन भी क्रिया है, कर्म है।
अगर तुम कहीं रूक जाओ तो मन संघर्ष करेगा, मन कहेगा, बढ़े चलो। मन
हर तरह से तुम्हें आगे या पीछे या कहीं भी धकाने की चेष्टा करेगा। कहीं भी सही, लेकिन चलते रहो। अगर तुम जीद्द करो, अगर तुम मन की नहीं मानना चाहों, तो वह कठिन होगा। कठिन होगा, क्योंकि तुमने सदा मन का हुक्म माना है। तुमने कभी मन पर हुक्म नहीं किया है। तुम कभी उसके मालिक नहीं रहे हो। तुम हो नहीं सकते, क्योंकि तुमने कभी अपने को मन से तादात्म्य रहित नहीं किया है। तुम सोचते हो कि तुम मन ही हो। यह भूल कि तुम मन ही हो मन को पूरी स्वतंत्रता दिए देती है। क्योंकि तब उस पर मलकियत करने वाला, उसे नियंत्रण में रखने वाला कोई न रहा। तब कोई रहा ही नहीं, मन ही मालिक रह जाता है।
लेकिन मन की यह मलकियत तथाकथित है। वह स्वामित्व झूठा है। एक बार प्रयोग करो और तुम उसके स्वामित्व को नष्ट कर सकते हो। वह झूठा है। मन महज गुलाम है जो मालिक होने का दावा करता है। लेकिन उसकी यह दावेदारी इतनी पुरानी है, इतने जन्मों से है कि वह अपने को मालिक मानने लगा है। गुलाम मालिक हो गया है। वह एक महज विश्वास है, धारणा है। तुम उसके विपरीत प्रयोग करके देखो और तुम्हें पता चलेगा। कि यह धारणा सर्वथा निराधार थी।
यह पहला सूत्र कहता है: ‘’या कल्पना करो कि मोर की पूंछ के पंचरंगे वर्तुल निस्सीम अंतरिक्ष में तुम्हारी पाँच इंद्रियाँ है। अब उनके

सौंदर्य को भीतर ही घुलने दो।‘’
भाव करो की तुम्हारी पाँच इंद्रियाँ पाँच रंग है। और वे पाँच रंग समस्त अंतरिक्ष को भर रहे है। सिर्फ कल्पना करो कि तुम्हारी पंचेंद्रियां पाँच रंग है। सुंदर-सुंदर रंग। सजीव रंग और वे अनंत आकाश में फैले है। और तब उन रंगों के बीच भ्रमण करो, उनके बीच गति करो और भाव करो कि तुम्हारे भीतर एक केंद्र है, जहां ये रंग मिलते है। यह मात्र कल् पना है, लेकिन यह सहयोगी है। भाव करो कि ये पांचों रंग तुम्हारे भीतर प्रवेश कर रहे है और किसी बिंदु पर मिल रहे है।
ये पाँच रंग सच ही किसी बिंदु पर मिलेंगे और सारा जगत विलीन हो
जाएगा। तुम्हारी कल्पना में पाँच ही रंग है। और तुम्हारी कल्पना के रंग आकाश को भर देंगे। तुम्हारे भीतर गहरे उतर जाएंगे, किसी बिंदु पर मिल जाएंगे।
किसी भी बिंदु से काम चलेगा। लेकिन हारा बेहतर रहेगा। भाव करो कि
सारा जगत रंग ही रंग हो गया है। और वे रंग तुम्हारे नाभि केंद्र पर, तुम् हारे हारा केंद्र-बिंदु पर मिल रहे है। उस बिंदु को देखो, उस बिंदु पर अवधान को एकाग्र करो और तब एकाग्र करो तब ति वह बिंदु विलीन न हो जाए। वह विलीन हो जाता है। क्योंकि वह भी कल्पना है। याद रहे कि जो कुछ भी हमने किया है सब कल्पना है। अगर तुम उस पर एकाग्र होओ, तो तुम अपने केंद्र पर स्थिर हो जाओगे। तब संसार विलीन हो जायेगा। तुम्हारे लिए संसार नहीं रहेगा।
इस ध्यान में केवल रंग है। तुम समूचे संसार को भूल गये हो। तुम
सारे विषयों को भूल गए हो। तुमने केवल पाँच रंग चुने है। कोई पाँच रंग चून जो। ये ध्यान उन लोगों के लिए है जिनकी दृष्टि पैनी है, जिनकी रंग की संवेदना गहरी है। यह सबके लिए नहीं है। ये उन्हें लोगों के लिए सहयोगी है, जिसके पास चित्रकार की नजर हो। यदि तुम्हें हरे रंग एक हजार हरे नजर नहीं आते तो तुम भूल जाओ इस ध्यान को और आगे बढ़ो। ये काम उनके काम का है, जो चित्रकार की पैन निगाह रखते है।
और जो आदमी रंग के प्रति संवेदनशील है उसको तुम कहो कि समूचे आकाश
को रंग से भरा होने की कल्पना करो, तो वह यह कल्पना नहीं कर पाएगा। वह यदि कल्पना करने की कोशिश भी करेगा। वह लाल रंग की सोचेगा। तो लाल शब्द को देखेगा, लेकिन उसे कल्पना में लाल रंग दिखाई नहीं पड़ेगा। वह हरा शब् द तो कहेगा। शब्द भी वहां होगा, लेकिन हरियाली वहां नहीं होगी।
तो तुम अगर रंग के प्रति संवेदनशील हो, तो इस विधि का प्रयोग करो।
पाँच रंग है। समूचा जगत पाँच रंग है। और वे रंग तुममें मिल रहे है। तुम् हारे भीतर कही गहरे में वे पांचों रंग मिल रहे है। उस बिंदु पर चित को एकाग्र करो और एकाग्र करो। उससे हटो नहीं, उस पर डटे रहो। मन को मत आने दो। रंगों के संबंध में हरे। लाल और पीले रंगों के बारे में विचार मत करो। सोचो। ही मत। बस, उन्हें अपने भीतर मिलते हुए देखो उनके बारे में विचार मत करो। अगर तुम विचार किया, तो मन प्रवेश कर गया। सिर्फ रंगों के भर जाओ। उन रंगों को अपने भीतर मिलने दो और तब उस मिलन बिंदु पर अवधान को केंद्रित करो। सोचो मत। एकाग्रता सोचना नहीं है। विचारणा नहीं है। मनन नहीं है।
तुम अगर सचमुच रंगों से भर जाओ और तुम एक इंद्रधनुष एक मोर ही बन
जाओ और तुम्हारा आकाश रंगमय हो जाए, तो उसमें तुम्हें एक सौंदर्य-बोध होगा। गहरा, गहरा सौंदर्य बोध। लेकिन उसके संबंध में विचार मत करो। यह मत कहो कि यह सुंदर है। विचारणा में मत चले जाओ। उस बिंदु पर एकाग्र होओ जहां, ये रंग मिल रहे है। और एकाग्रता। को बढ़ाते जाओ, गहराते हो, तो कल् पना नहीं टिक सकती। वह विलीन हो जाएगी।
संसार पहले ही विलीन हो चुका है। सिर्फ रंग रह गए थे। वे रंग तुम्

हारी कल्पना थे और वे काल्पनिक रंग एक बिंदु पर मिल रहे है। वह बिंदु भी काल्पनिक था। अब गहरी एकाग्रता से वह बिंदु भी विलीन हो जाएगा। अब तुम कहां रहोगे। अब तुम कहां हो। तुम अपने केंद्र में स्थित हो जाओगे।
इस लिए सूत्र कहता है: ‘’शून्य में या दीवार में किसी बिंदू
पर.......।
यह सहयोगी होगा। अगर तुम रंगों की कल्पना नहीं कर सकते, तो दीवार
पर किसी बिंदु से काम चलेगा। काई भी चीज एकाग्रता के विषय के रूप में ले लो। अगर वह आंतरिक हो, अंतस का हो तो बेहतर।
लेकिन फिर दो तरह के व्यक्तित्व होते है। जो लोग अंतर्मुखी है
उनके लिए उनके भीतर ही सब रंगों के मिलने की धारण आसान है। लेकिन जो बहिर्मुखी लोग है वे भीतर की धारणा नहीं बना सकते। वे बाहर की ही कल्पना कर सकते है। उनकी चित बाहर ही यात्रा करता है। वे भीतर नहीं गति कर सकते उनके भीतर कोई आंतरिकता नहीं है।
अंग्रेज दार्शनिक डेविड ह्मूम ने कहा है, जब भी मैं भीतर जाता हूं वहां मुझे कोई आत्मा नहीं मिलती। जो भी मिलता है वह बाहर के प्रतिबिंब है—कोई विचार, कोई भाव। कभी किसी आंतरिकता का दर्शन नहीं होता। सदा बाहरी जगत ही वहां प्रतिबिंबित मिलता है। यह श्रेष्ठतम बहिर्मुखी चित है। और डेविड ह्मूम सर्वाधिक बहिर्मुखी चित वालों से एक है।
इसलिए अगर तुम्हें भी तर कुछ धारणा के लिए न मिले और तुम्हारा मन
पूछे कि यह आंतरिकता क्या है। तो अच्छा है कि दीवार पर किसी बिंदु का प्रयोग करो।
लोग मेरे पास आते है और पूछते है कि भीतर कैसे जाया जाए। उनके लिए
यह समस्या है। क्योंकि अगर तुम बहिर्गामिता ही जानते हो, तुम्हें अगर बाहर-बाहर गति करना ही आता है। तो तुम्हारे लिए भीतर जाना कठिन होगा। और अगर तुम बहिर्मुखी हो, तो भीतर इस बिंदु का प्रयोग मत करो। उसे बाहर करो। नतीजा वही होगा। दीवार पर एक बिंदु बनाओ और उस पर चित को एकाग्र करो। लेकिन तब खुली आँख से एकाग्रता साधनी होगी। अगर तुम भीतर केंद्र बनाते हो, तो बंद आँखो से एकाग्रता साधनी है।
दीवार पर बिंदु बनाओ और उस पर एकाग्र होओ। असली बात एकाग्रता के
कारण घटती है। बिंदु के कारण नहीं। बाहर है या भीतर यक प्रासंगिक नहीं है। यह तुम पर निर्भर है। अगर दीवार पर देख रहे हो, एकाग्र हो रहे हो, तो तब तक एकाग्रता साधो जब तक वह बिंदु विलीन न हो जाए।
इस बात को ख्याल में रख लो: जब तक बिंदु विलीन न हो जाए।‘’
पलकों को बंद मत करो। क्योंकि उससे मन को फिर गति करने के लिए जगह
मिल जाती है। इसलिए अपलक देखते रहो। क्योंकि पलक के गिरने से मन विचार में संलग्न हो जाता है। पलक के गिराने से अंतराल पैदा होता है। और एकाग्रता नष्ट हो जाती है। इसलिए पलक झपकना नहीं है।
तुमने बोधिधर्म के विषय में सुना होगा। मनुष्य के पूरे इतिहास
में जो बड़े ध्यानी हुए है वह उनमें से एक था। उसके संबंध में एक प्रीतिकर कथा कही जाती है। वह बाहर की किसी वस्तु पर ध्यान कर रहा था। उसकी आंखें झपक जाती थी। और ध्यान टूट-टूट जाता था। तो उसने अपनी पलकों को उखाड़कर फेंक दिया। बहुत सुंदर कथा है कि उसने अपनी पलकों को उखाड़कर फेंक दिया और फिर ध्यान करना शुरू किया। कुछ हफ्तों के बाद उसने देखा कि जहां उसकी पलकें गिरी थी उस स्थान पर कोई पौधे उग आए थे। यह घटना चीन के एक पहाड़ पर घटित हुई थी। उस पहाड़ का नाम टा था।
इसलिए जो पौधे वहां उग आए थे उनका नाम टी पडा। और यही कारण है कि चाय जागरण में सहयोगी होती है। इसलिए जब तुम्हारी पलकें झपकने लगें और तुम नींद में उतरने लगो, तो एक प्याली चाय पी लो। वे बोधिधर्म की पलकें है।
इसी वजह से झेन संत चाय को पवित्र मानते है। चाय कोई मामूली चीज नहीं

है। वह पवित्र है, बोधिधर्म की आँख की पलक है।
जापान में तो वे चायोत्सव करते है। प्रत्येक परिवार में एक चायघर
होता है। जहां धार्मिक अनुष्ठान के साथ चाय पी जाती है। यह पवित्र है। और बहुत ही ध्यान पूर्ण मुद्रा में चाय पी जाती है। जापान ने चाय के इर्द-गिर्द बड़े सुंदर अनुष्ठान निर्मित किये है। वे चाय घर में ऐसे प्रवेश करते है जैसे वे किसी मंदिर में प्रवेश करते हो। तब चाय तैयार की जाएगी। और हरेक व्यक्ति मौन होकर बैठेगा। और समोवार के उबलते स्वर को सुनेगा। उबलती चाय का, उसके वाष्प का गीत सब सुनेंगे। वह कोई अदना वस्तु नहीं है। बोधिधर्म की आँख की पलक है। और चूंकि बोधिधर्म खुली आंखों से जागने की कोशिश में लगा था। इसलिए चाय सहयोगी है। और चूंकि यह कथा टा पर्वत पर घटित हुई इसलिए वह टी कहलाती है।
सच हो या न हो, यह कहानी सुंदर है। अगर तुम बाहर एकाग्रता साध रहे
हो, तो अपलक देखना जरूरी है। समझो कि तुम्हारे पलकें नहीं है। पलकों को उखाड़ फेंकने का यही अर्थ है। तुम्हें आंखें तो है, लेकिन उनके ऊपर झपकने को पलकें नहीं है। और तब एकाग्रता साधो जब तक बिंदु विलीन नहीं हो जाता।
बिंदु विलीन हो जाता है। अगर तुम लगे रहे, अगर तुमने संकल्प के साथ
मन को चलायमान नहीं होने दिया। तो बिंदु विलीन हो जाता है। अगर तुम उस बिंदु पर एकाग्र थे और तुम्हारे लिए संसार में इस बिंदु के अलावा कुछ भी नहीं था। अगर सारा संसार पहले ही विलीन हो चुका था और वहीं बिंदु बचा था और यह बिंदु भी विदा हो गया। तो अब चेतना कहीं और गति नहीं कर सकती। उसके लिए जाने को कहीं न रहा; सारे आयाम बंद हो गए। अब चित अपने ऊपर फेंक दिया जाता है। अब चेतना अपने आप में लौट आती है। और तब तुम केंद्र में प्रविष्ट हो गए।
तो चाहे भीतर हो या बाहर, तब तक एकाग्रता साधो जब तक बिंदु
विसर्जित नहीं होता। यह बिंदु दो कारणों से विसर्जित होगा। अगर वह भीतर है, तो काल्पनिक है और इसलिए विलीन हो जाएगा। और अगर यह बाहर है, तो वह काल्पनिक नहीं असली है। तुमने दीवार पर बिंदु बनाया है और उस पर अवधान को एकाग्र किया है। तो यह बिंदु क्यों विलीन होगा। भीतर के बिंदु का विलीन होना तो समझा जा सकता है। क्योंकि वह वहां था नहीं। तुमने उसे कल् पित कर लिया था। लेकिन दीवार पर तो वह है। वह क्यों विलीन होगा।
वह एक विशेष कारण से विलीन होता है। अगर तुम किसी बिंदु पर चित को एकाग्र करते हो, तो यथार्थ में वह बिंदु विसर्जित नहीं होता है। तुम् हारा मन ही विसर्जित होता है। अगर तुम किसी बह्म बिंदु पर एकाग्र हो रहे हो, तो मन की गति बंद हो जाती है। और मन गति के बिना जी नहीं सकता। वह रूक जाता है। वह मर जाता है। और जब मन रूक जाता है। तुम बाहर की किसी भी चीज के साथ संबंधित नहीं हो सकते हो। तब अचानक सभी सेतु टूट जाते है, क् योंकि मन ही तो सेतु है।
जब तुम दीवार पर, किसी बिंदु पर मन को एकाग्र कर रहे हो, तो तुम्
हारा मन क्या करता है। वह निरंतर तुमसे बिंदु तक और बिंदु से तुम तक उछलकूद करता रहता है। एक सतत उछलकूद की प्रक्रिया चलती है। जब मन विचलित होता है, तो तुम बिंदु को नहीं देख सकते। क्योंकि तुम यथार्थ आँख में से नहीं मन से और आँख से बिंदु को देखते हो। अगर मन वहां न रहे, तो आंखें काम नहीं कर सकती। तुम दीवार को घूरते रह सकते हो। लेकिन बिंदु नहीं दिखाई पड़ेगा। क्योंकि मन न रहा, सेतु टूट गया। बिंदु तो सच है, वह है। इसलिए जब मन लौट आएगा। तो फिर उसे देख सकोगे। लेकिन अभी नहीं देख सकते, अभी तुम बाहर गति नहीं कर सकते। अचानक तुम अपने केंद्र पर हो।
यह केंद्रस्थता तुम्हें तुम्हारे अस्तित्वगत आधार के प्रति
जागरूक बना देगी। तब तुम जानोंगे कि कहां से तुम अस्तित्व के साथ

संयुक्त हो , जुड़े हो। तुम्हारे भीतर ही वह बिंदु है जो समस्त अस्तित्व के साथ जुड़ा हुआ है। जो उसके साथ एक है। और जब एक बार इस केंद्र को जान गए। तो तुम घर आ गए। तब यह संसार परदेश नहीं रहा। और तुम परदेशी नहीं रहे। तब जान गए। तो तुम घर आ गए। तब तुम संसार के हो गए। तब किसी संघर्ष की, किसी लड़ाई की जरूरत नहीं रही। तब तुम्हारे और अस्तित्व के बीच शत्रुता न रही , अस्तित्व तुम्हारी मां हो गई।

यह अस्तित्व ही है जो तुम्हारे भीतर प्रविष्ट हुआ और बोधपूर्ण हुआ है। यह अस्तित्व ही है जो तुम्हारे भीतर प्रस्फुटित हुआ है। यह अनुभूति , यह प्रतीति , यह घटना और फिर दुःख नहीं रहेगा। तब आनंद कोई घटना नहीं है —ऐसी घटना , जो आती है। और चली जाती है। तब आनंद तुम्हारा स्वभाव है। जब कोई अपने केंद्र में स्थित होता है। तो आनंद स्वाभाविक है। तब कोई आनंदपूर्ण हो जाता है।

फिर धीरे -धीरे उसे यह बोध भी जाता रहता है कि वह आनंदपूर्ण है। क्योंकि बोध के लिए विपरीत का होना जरूरी है। अगर तुम दुःखी हो , तो आनंदित होने पर तुम्हें आनंद की अनुभूति होगी। लेकिन जब दुःख नहीं है। तो धीरे - धीरे तुम दुःख को पूरी तरह भूल जाते हो। और तब तुम अपने आनंद को भी भूल जाते हो। और जब तुम अपने आनंद को भी भूलते हो तभी तुम सच में आनंदित हो। तब वह स्वाभाविक है। जैसे तारे चमकते है , नदिया बहती है। वैसे ही तुम आनंदपूर्ण हो। तुम्हारा होना ही आनंदमय है। तब यह कोई घटना नहीं है। तब तुम ही आनंद हो।

[illegible]
[illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-9

[illegible]-[illegible]—[illegible]-14

[illegible], [illegible], [illegible]
[illegible]:

[illegible]-[illegible]
[illegible]

इस सूत्र के लिए , ध्यान की इस विधि के लिए तुम्हें अपनी आंखे बंद कर लेनी चाहिए। और अपने मेरुदंड को , अपनी रीढ़ की हड्डी को देखना चाहिए , देखने का भाव करना चाहिए। अच्छा हो कि किसी शरीर शास्त्र की पुस्तक में या किसी चिकित्सालय या मेडिकल कालेज में जाकर शरीर की संरचना को देखो - समझ लो, तब आंखे बंद करो और मेरुदंड पर अवधान लगाओ। उसे भीतर की आँखो से देखो और ठीक उसके मध्य से जाते हुए कमल तंतु जैसे कोमल स्नायु का भाव करो।

‘’और इसमे रूपांतरित हो जाओ। ‘’

अगर संभव हो तो इस मेरुदंड पर अवधान को एकाग्र करो और तब भीतर से , मध्य से जाते हुए कमल तंतु जैसे स्नायु पर एकाग्र होओ। और यही एकाग्रता तुम्हें तुम्हारे केंद्र पर आरूढ़ कर देगी। क्यों ?

मेरुदंड तुम्हारी समूची शरीर -संरचना का आधार है। सब कुछ उससे संयुक्त है , जुड़ा हुआ है। सच तो यह है कि तुम्हारा मस्तिष्क इसी मेरुदंड का एक छोर है। शरीर शास्त्री कहते है कि मस्तिष्क मेरुदंड का

ही विस्तार है। तुम्हारा मस्तिष्क मेरुदंड को विकास है। और तुम्हारी रीढ़ तुम्हारे सारे शरीर से संबंधित है, सब कुछ उससे संबंधित है। यही कारण है कि उसे रीढ़ कहते है। आधार कहते है।
इस रीढ़ के अंदर एक तंतु जैसी चीज है। लेकिन शरीर शास्त्री इसके
संबंध में कुछ नहीं कह सकते। यह इसलिए कि यह पौदगलिक नहीं है। इस मेरुदंड में, इसके ठीक मध्य में एक रजत-रज्जु है, एक बहुत कोमल नाजुम स् नायु है। शारीरिक अर्थ में वह स्नायु भी नहीं है। तुम उसे काट-पीट कर नहीं निकाल सकते। वह वहां नहीं मिलेगा। लेकिन गहरे ध्यान में वह देखा जाता है। यह है, लेकिन वह अपदार्थ है, अवस्तु है। वह पदार्थ नहीं, उर्जा है। और यथार्थत: तुम्हारे मेरुदंड की वही ऊर्जा-रज्जु तुम्हारा जीवन है। उसके द्वारा ही तुम अदृश्य अस्तित्व के साथ संबंधित हो। वही दृश्य और अदृश्य के बीच सेतु है। उस तंतु के द्वारा ही तुम अपने शरीर से संबंधित हो, और उस तंतु के द्वारा ही तुम आत्मा से संबंधित हो।
तो पहल तो मेरुदंड की कल्पना करो, उसे मन की आंखों से देखो। और
तुम्हें अद्भुत अनुभव होगा। अगर तुम मेरुदंड का मनोदर्शन करने की कोशिश करोगे, तो यह दर्शन बिलकुल संभव है। और अगर तुम निरंतर चेष्टा में लगे रहे, तो कल्पना में ही नहीं, यथार्थ में भी तुम अपने शरीर से संबंधित हो, और उस तंतु के द्वारा ही तुम आत्मा से संबंधित हो।
मैं एक साधक को इस विधि का प्रयोग करवा रहा था। मैंने उसे शरीर-संस्थान का एक चित्र देखने को दिया। ताकि वह उसके जरिए अपने भीतर के मेरुदंड को मन की आंखों से देखने में समर्थ हो सके। उसने प्रयोग शुरू किया और सप्ताह भर के अंदर आकर उसने मुझसे कहा, आश्चर्य की बात है कि मैने आपके दिए चित्र को देखने की कोशिश की, लेकिन अनेक बार वह चित्र मेरी आंखों के सामने से गायब हो गया और एक दूसरा मेरुदंड मुझे दिखाई दिया। यह मेरुदंड चित्र वाले मेरुदंड जैसा नहीं था। मैंने उस साधक को कहां की अब तुम सही रास्ते पर हो। अब चित्र को बिलकुल भूल जाओ। और उस मेरुदंड को देखा करो जो तुम्हारे लिए दृश्य हुआ है।
मनुष्य भीतर से अपने शरीर संस्थान को देख सकता है। हम इसको देखने
की कोशिश नहीं करते। क्योंकि वह दृश्य डरावना है, वीभत्स है। जब तुम् हें तुम्हारे रक्त मांस और अस्थिपंजर दिखाई पड़ेंगे तो तुम भयभीत हो जाओगे। इसलिए हमने अपने मन को भीतर देखने से बिलकुल रोक रखा है। हम भी अपने शरीर को उसी तरह बहार से देखते है जैसे दूसरे लोग देखते है।
वह वैसा ही है जैसे तुम इस कमरे को इसके बहार जाकर देखो; तुम सिर्फ इसकी बहारी दीवारों को देखोगें। फिर तुम भीतर आ जाओ और देखो, तब तुम्हें भीतरी दीवारें दिखाई देंगी। तुम तो सिर्फ बाहर से अपने शरीर को इस तरह देखते हो जिस तरह कोई दूसरा आदमी उसे देखता हो। भीतर से तुमने अपने शरीर को नहीं देखा है। हम देख सकते है। लेकिन इस भय के कारण वह हमारे लिए आश् चर्य की चीज बना है।
भारतीय योग की पुस्तकें शरीर के संबंध में ऐसी बातें बताती है। जो
नए वैज्ञानिक शोध से हूबहू सही है। लेकिन विज्ञान यह समझने में असमर्थ है कि योग को इनका पता कैसे चला। वह इन्हें कैसे जान सका। शल्य-चिकित्सा और मानव शरीर का ज्ञान बहुत हाल की घटनाएं है। इस हालत में योग इन सारी स्नायुओं को सभी केंद्रों को, शरीर के पूरी आंतरिक संस्थान को कैसे जान गया। जो अत्यंत हाल की खोज है। आश्चर्य कि वे उन्हें भी जानते थे, उन् होने उसकी चर्चा भी कि थी। उन पर काम भी किया था। योग को शरीर की बुनियादी और महत्वपूर्ण चीजों के विषय में सब कुछ मालूम रहा है। लेकिन योग चीर फाड़ नहीं करता था। फिर उसे उसकी इतनी सारी बातें कैसे मालूम हुई थी।
सच तो यह है कि शरीर को देखने जानने का एक दूसरा ही रास्ता है। वह

उसे अंदर से देखना है। अगर तुम भीतर एकाग्र हो सको। तो तुम अचानक अंदरूनी शरीर को, उसके भीतर रेखा चित्र को देखने लगोगे।
यह विधि उन लोगो के लिए उपयोगी है जो शरीर से जुडे है। अगर तुम भौतिकवादी हो, अगर तुम सोचते हो कि तुम शरीर के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो, तो यह विधि तुम्हारे बहुत काम की होगी। अगर तुम चार्वाक या मार्क्स के मानने वाले हो, अगर तुम मानते हो कि मनुष्य शरीर के अलावा कुछ नहीं है, तो तुम्हें यह विधि बहुत सहयोगी होगी। तो तुम जाओ और मनुष्य के अस् थि संस्थान को देखो।
तंत्र या योग की पुरानी परंपराओं में वे अनेक तरह की हड्डियों का उपयोग करते थे। अभी भी तांत्रिक अपने पास कोई न कोई हड्डी या खोपड़ी रखता है। दरअसल वह भीतर से एकाग्रता साधने का उपाय है। पहले वह उस खोपड़ी पर एकाग्रता साधता है। फिर आंखें बंद करता है। और अपनी खोपड़ी का ध्यान करता है। वह बाहर की खोपड़ी की कल्पना भीतर करता जाता है। और इस तरह धीरे-धीर अपनी खोपड़ी की प्रतीति उसे होने लगती है। उसकी चेतना केंद्रित होने लगती है।
वह बाहरी खोपड़ी उसका मनोदर्शन, उस पर ध्यान, सब उपाय है। और अगर
तुम एक बार अपने भीतर केंद्रीभूत हो गए तो तुम अपने अंगूठे से सिर तक यात्रा कर सकते हो। तुम भीतर चलो, वहां एक बड़ा ब्रह्मांड है। तुम्हारा छोटा शरीर एक बड़ा ब्रह्मांड है।
यह सूत्र मेरुदंड का उपयोग करता है, क्योंकि मेरुदंड के भीतर ही
जीवन रज्जु छिपा है। यही कारण है कि सीधी रीढ़ पर इतना जोर दिया जाता है। क्योंकि अगर रीढ़ सीधी न रही तो तुम भीतरी रज्जु को नहीं देख पाओगे। वह बहुत नाजुक है। बहुत सूक्ष्म है। वह ऊर्जा का प्रवाह है। इसलिए अगर तुम्हारी रीढ़ सीधी है, बिलकुल सीधी, तभी तुम्हें उस सूक्ष्म जीवन रज् जु की झलक मिल सकती है।
लेकिन हमारे मेरुदंड सीधे नहीं है। हिंदू बचपन सेही मेरुदंड को
सीधा रखने का उपाय करते है। उनके बैठने, उठने चलने सोने तक के ढंग सीधी रीढ़ पर आधारित थे। और अगर रीढ़ सीधी नहीं है तो उसके भीतर तत्वों को देखना बहुत कठिन बहुत कठिन होगा। वह नाजुम है, सूक्ष्म है, वास्तव में पौदगलिक नहीं है। वह अपौदगलिक है, वह शक्ति है। इसलिए जब मेरुदंड बिलकुल सीधा होता है तो वह रज्जुवत शक्ति देखने में आती है।
‘’और इसमे रूपांतरित हो जाओ।‘’
और अगर तुम इस रज्जु पर एकाग्र हुए, तुमने उसकी अनुभूति और उपलब्
धि की, तब तुम एक नए प्रकाश से भर जाओगे। वह प्रकाश तुम्हारे मेरुदंड से आता होगा। वह तुम्हारे पूरे शरीर पर फैल जाएगा। वह तुम्हारे शरीर के पास भी चला जाएगा।
और जब प्रकाश शरीर के पार जाता है तब प्रभामंडल दिखाई देते है।
हरेक आदमी का प्रभामंडल है। लेकिन साधारणत: तुम्हारे प्रभामंडल छाया की तरह है। जिनमे प्रकाश नहीं होता। वे तुम्हारे चारों और काली छाया की तरह फैले होते है। और वे प्रभामंडल तुम्हारे प्रत्येक मनोभाव को अभिव् यक्त करते है। तब तुम क्रोध में होते हो तो तुम्हारा प्रभामंडल रक्त रंजित जैसा हो जाता है। उसमे क्रोध लाल रंग में अभिव्यक्त होता है। जब तुम उदास, बुझे-बुझे हतप्रभ होते हो तो तुम्हारा प्रभामंडल काले तंतुओं से भरा होता है। मानों तुम मृत्यु के निकट हो—सब मृत और बोझिल। और जब यह मेरुदंड के भीतर का तंतु उपलब्ध होता है तब तुम्हारा प्रभामंडल सचमुच में प्रभा मंडित होता है।
इस लिए बुद्ध, महावीर, कृष्ण क्राइस्ट, महज सजावट के लिए
प्रभामंडल से नहीं चित्रित किए जाते है। वे प्रभामंडल सच में होता है। तुम्हारा मेरुदंड प्रकाश विकिरणित करने लगता है। भीतर तुम बुद्धत्व को

प्राप्त होते हो, बहार तुम्हारा सारा शरीर प्रकाश, प्रकाश शरीर हो उठता है। और तब उसकी प्रभा बहार भी फैलने लगती है। इसलिए किसी बुद्ध पुरूष के लिए किसी से यह पूछना जरूरी नहीं है कि तुम क्या हो। तुम्हारा प्रभामंडल सब बता देगा। और जब कोई शिष्य बुद्धत्व प्राप्त करता है तो गुरु को पता हो जाता है। क्योंकि प्रभामंडल सब प्रकट कर देता है।
मैं तुम्हें एक कहानी बताऊ। एक चीनी संत, हुई नेंग, जब पहले-पहल
अपने गुरु के पास पहुंचा तो गुरु ने कहा कि तुम किस लिए आए हो। तुम्हें मेरे पास आने की जरूरत नहीं थी। हुई नेंग की समझ में कुछ नहीं आया। उसने सोचा कि अभी गुरु द्वारा स्वीकृत होने की उसकी पात्रता नहीं है। लेकिन गुरु कुछ और ही चीज देख रहा था, वह द्वारा स्वीकृत होने की उसकी पात्रता नहीं है। लेकिन गुरु कह रहा था कि अगर तुम मेरे पास नहीं भी आओ तो भी देर-अबेर यह घटना घटने ही वाली है। तुम उसमे ही हो। इसलिए मेरे पास आने की जरूरत नहीं है।
लेकिन हुई नेंग ने प्रार्थना की कि मुझे अस्वीकार न करें। तो गुरु
ने उसे प्रवेश दिया और कहा कि आश्रम के पिछवाड़े में जो रसोईघर है उसमे जाकर काम करो। और फिर दूसरी बार मेरे पास मत आना। जब जरूरत होगी, मैं ही तुम्हारे पास आऊँगा।
हुई नेंग को कोई ध्यान करने को नहीं बताया गया न कोई शास्त्र
पढ़ने को कहा गया। उसे कुछ भी नहीं सिखाया गया। उसे बस रसोईघर में रख दिया गया। वह एक बहुत बड़ा आश्रम था। जिसमें कोई पाँच सौ भिक्षु रहते थे। उनमें पंडित विद्घान ध्यानी योगी सब थे। और सब साधना में लगे थे। लेकिन हुई नेंग केवल चावल साफ कतरा, या कुटता था। और रसोई के भीतर ही काम करता रहा। इस तरह से बारह वर्ष बीत गये। हुई नेंग इस बीच गुरु के पास दुबारा नहीं गया। क्योंकि इजाजत नहीं थे। वह प्रतीक्षा करता रहा। वह सिर्फ प्रतीक्षा ही करता रहा और लोग उसे महज नौकर समझते थे। कोई उस पर ध्यान भी नहीं देता था। उस आश्रम में पंडितों और ध्यानियों की कमी नहीं थी। उनके बीच एक चावल कूटनें वाले की क्या बिसात थी।
और फिर एक दिन गुरु ने घोषणा की कि मेरी मृत्यु निकट हे और मैं अब चाहता हूं कि किसी को अपना उत्तराधिकारी बनाऊं। इसलिए जो समझते हों कि वे बुद्धत्व को प्राप्त है, वे चार पंक्तियों की एक कविता रचे। जिसमे वह सब व्यक्त कर दें जो उन्होंने जाना है। गुरु ने यह भी कहा कि जिसकी कविता में सच में बुद्धत्व व्यक्ति होगा, उसे में अपना उतराधिकारी चुनूंगा।
उस आश्रम में एक महापंडित था। इसलिए उस प्रतियोगिता में किसी ने
भाग नहीं लिया। सब यही सोचते थे कि महापंडित जीतेगा। वह शास्त्रों का बड़ा ज्ञाता था। सो उसने चार पंक्तियां लिखी। उन चार पंक्तियों में उसने लिखा-
मन एक दर्पण है, जिस पर धूल जम जाती है।
धूल को साफ कर दो, सत्य अनुभव में आ जाता है।
बुद्धत्व प्राप्ति हो जाती है।

लेकिन वह महापंडित भी डरता था। क्योंकि गुरु को पता था कि कौन
ज्ञान को उपल्बध है। कौन नहीं। यद्यपि महापंडित ने जो लिखा था वह बहुत सुंदर था। सब शास्त्रों का सार-निचोड था। यही तो सब वेदों का सार था। लेकिन पंडित डरता था कि यह उसने शास्त्रों से लिया था। इसमे उसका अपना कुछ भी नहीं है। इस लिए वह सीधा गुरु के पास नहीं गया। वह रात के अंधेरे में गुरु की झोपड़ी पर गया, और उनकी दीवार पर वे चार पंक्तियां लिख दी। उसने नीचे हस्ताक्षर भी नहीं किया। उसने सोचा कि अगर गुरु ने उन्हें स् वीकृति दी तो मैं कहूंगा कि मैंने लिखा है। और अगर गुरु ने ठीक नहीं

कहां तो चुप रहूंगा।
लेकिन गुरु ने स्वीकृति दे दी। सुबह उन्होंने कहां कि जिस व्यक्
ति ने ये पंक्ति लिखी है वह ज्ञानी है। समूचे आश्रम में उसकी चर्चा होने लगी। सब तो जानते थे कि किसने लिखा है। वे चर्चा करने लगे कि पंक्तियां तो सुंदर है। सचमुच सुंदर थी।
इसी चर्चा में लगे कुछ भिक्षु रसोईघर में पहुंचे। ये चाय पीते थे।
और चर्चा करते थे। हुई नेंग उन्हें चाय पील रहा था। उसने सह बात सुनी। जब वे चार पंक्तियां उसने सुनी तब वह हंसा। इस पर किसी ने उससे पूछा कि तुम क्यों हंस रहे हो। तुम तो कुछ जानते भी नहीं हो। बारह वर्षों से तुम तो चोंके से बहार भी नहीं निकले हो। तुम्हें किस बात को पता है। तुम क् यों हंस रहे हो।
किसी ने इससे पहले उस भिक्षु को हंसते नहीं देखा था। वह तो महा
मूढ़ समझा जाता था। जिसे बात करनी भी नहीं आती थी। उसने कहा कि मैं लिखना नहीं जानता हूं और मैं ज्ञानी भी नहीं हूं। लेकिन वे चार पंक् तियां गलत है। अगर कोई व्यक्ति मेरे साथ आये तो मैं चार पंक्तियां बना सकता हूं। और वह उसे दीवार पर लिख दे। मैं लिखना नहीं जानता हूं।
एक भिक्षु मजाक में उसके साथ चल दिया। उसने पीछे ऐ भीड़ भी वहां
पहूंच गई। सब के लिए ये कुतूहल भर बात थी कि एक चावल कूटनें वाला, ब्रह्म ज्ञान की चार लाईनें बातयेगा। नेंग ने लिखवाया:

कैसा दर्पण, कैसी धूल।
न कोई मन है,
न कोई दर्पण,
फिर धूल जमेगी कहां?
जो यह जान गया
वह उपल्बध हो गया धर्म को।
लेकिन जब गुरु आया तो उसने कहा की ये गलत है। हुई नेंग ने गुरु के
पैर छुए और वह रसोई घर में लोट गया।
रात में जब सब सोए थे, गुरु नेंग के पास आया। और चुप से कहां, तुम
सही हो, लेकिन मैं तुम्हारी बात को उन मूर्खों के सामने सही नहीं कह सकता। वे विद्घान मूर्ख है। और अगर मैं कहता हूं कि मेरे उत्तराधिकारी तुम हो तो वह तुम्हें मार देंगे। और यह बात दूसरों को मत कहाना। तुम यहां से भाग जाओ। जिस दिन तुम यहां आये थे। उसी दिन मैं जान गया था तुम् हारे प्रभामंडल को देख कर। कि तुम ही मेरे उतराधिकारी हो। और बारह वर्ष के मौन ने, जिसमे तुम्हारा प्रभामंडल पूर्ण हो चला। तुम पूर्ण चंद्र हो गए हो। लेकिन यहां से निकल जाओ वरना वे लोग तुम्हें मार देंगे। तुम यहां बारह वर्ष से हो, निरंतर तुम्हारे प्रकाश विकिरण हो रहा है। लेकिन कोई उसे देख नहीं सका। यद्यपि हर दिन कोई न कोई तुम्हें दो या तीन बार दिन में देखता है। इसी लिए मेंने तुम्हें रसोई घर में रखा था। कोई तुम्हारे प्रभामंडल को नहीं देख सका। इस लिए तुम यहां से भाग जाओ।
जब मेरुदंड का यह तंतु देख लिया जाता है, उपलब्ध होता है, तब तुम्
हारे चारों और एक प्रभामंडल बढ़ने लगता है। इसमें रूपांतरित हो जाओ। उस प्रकाश से भर जाओ और रूपांतरित हो जाओ। यह भी केंद्रित होना है, मेरुदंड में केंद्रित होना।
अगर तुम शरीर वादी हो तो यह तुम्हारे काम आयेगी। अगर नहीं तो यह
कठिन है। तब भीतर से शरीर को देखना कठिन होगा। यह विधि पुरूषों की बजाएं स्त्रियों के लिए ज्यादा कारगर होगी। स्त्रियां ज्यादा शरीवादी होती है। वे शरीर में अधिक रहती है। और कल्पनाशील भी होती है। शरीर का मनोदर्शन उनके लिए आसान है। स्त्रियां पुरूषों से ज्यादा शरीर

केंद्रित होती है। लेकिन जो कोई भी शरीर को महसूस कर सकता है। जो कोई भी आँख बंद कर अंदर शरीर को देख सकता है। उसके लिए यह विधि बहुत सहयोगी है। पहले अपने मेरुदंड को देखो, फिर उसके बीच से जाती हुई रजत-रज्जु
को। पहले तो वह कल्पना ही होगी। लेकिन धीरे-धीरे तुम पाओगे कि कल्पना विलीन हो गई है। और जिस क्षण तुम आंतरिक तत्व को देखोगें, अचानक तुम्हें तुम्हारे भीतर प्रकाश का विस्फोट अनुभव होगा।
कभी-कभी यह घटना प्रयास के बिना भी घटती है। यह होता है। फिर तुम्
हें कहुं, किसी गहरे संभोग के क्षण में यह होता है। तंत्र जानता है कि गहरे काम-कृत्य में तुम्हारी सारी ऊर्जा रीढ़ के पास इकट्ठी हो जाता है। असल में गहरे काम कृत्य में रीढ़ बिजली छोड़ने लगती है। कभी-कभी तो ऐसा होता है। कि रीढ़ को छूने से तुम्हें धक्का लगता है। और अगर संभोग गहरा हो, प्रेमपूर्ण हो, लंबा हो, अगर दो प्रेमी प्रगाढ़ प्रेमालिंगन में हों, शांत और निश्चल, एक दूसरे को भरते हुए। तो घटना घटती है। कई बार ऐसा हुआ है कि अँधेरा कमरा अचानक रोशनी से भर जाता है। और दोनों शरीरों काक एक नीली प्रभामंडल घेर लेता है।
ऐसी अनेक घटनाएं हुई है। तुम्हारे अनुभव में भी ऐसा हुआ होगा। कि अंधेरे कमरे में गहरे प्रेम में उतरने पर तुम्हारे दो शरीरों के चारों और एक रोशनी सी हो गई है। और फैल कर पूरे कमरे में भर गई हो। कई बार ऐसा हुआ है कि किसी दृश्य कारण के बिना ही कमरे की मेज पर से अचानक चीजें उछल कर नीचे गिर गई है। ओर अब मानस्विद बताते है कि गहरे काम-कृत्य में बिजली की तरंगें छूटती है। और उसके कई प्रभाव और परिमाण हो सकते है। चीजें अचानक गिर सकती है। हिल सकती है। टूट सकती है। ऐसे प्रकाश के फोटो भी लिए गए है। लेकिन यह प्रकाश सदा मेरुदंड के इर्द-गिर्द इकट्ठा होता है।
तो कभी-कभी काम-कृत्य के दौरान भी तुम जाग सकते हो। अगर तुम अपने मेरुदंड के बीच से जाती हुई रजत-रज्जु को देख सको। तंत्र को यह बात भलीभंति पता है और उसने इस पर काम भी किया है। तंत्र नपे इस उपलब्धि के लिए संभोग का भी उपयोग किया है। लेकिन उसके लिए काम कृत्य को सर्वथा भिन्न ढंग का होना पड़ेगा। उसका गुण धर्म भिन्न होगा। उस हालत में काम कृत्य किसी तरह निबट लेने की, महज स्खलन क द्वारा छुट्टी पा लेने की, झट-पट उससे गुजर जाने की बात नहीं रहेगी। तब वह एक शारीरिक कर्म नहीं रहेगा। तब वह एक गहरा आध्यात्मिक मिलन होगा। तब यथार्थ में वह दो देहों के द्वारा दो आंतरिकताओं का, दो आत्माओं का एक दूसरे में प्रवेश होगा। इसलिए मेरा सुझाव है कि जब तुम गहरे काम कृत्य में होओ तो इस विधि
को प्रयोग में लाओ। यह आसान हो जायेगी। यौन को भूल जाओ। जब गहरे आलिंगन में उतरो बस भीतर रहो। और दूसरे व्यक्ति को भूल जाओ। भीतर जाओ और अपने मेरुदंड को देखो। उस समय मेरू दंड के पास अधिक उर्जा प्रवाहित होती है। क्योंकि तुम शांत होते हो और तुम्हारा शरीर विश्राम में होता है। प्रेम गहरे से गहरा विश्राम है, लेकिन हमने उसे भी तनाव बना लिया है। हमने उसे एक चिंता एक बोझ में बदल लिया है।
प्रेम की ऊष्मा में, जब तुम भरे-भरे और शिथिल हो, आंखें बंद कर लो। सामान्यत: पुरूष आंखें बंद नहीं करते। स्त्रियां करती है। इसलिए मैंने कहा कि पुरूषों की बजाएं स्त्रियां अधिक शरीर वादी है। काम-कृत्य के गहरे आलिंगन में उतरने पर स्त्रियां आंखें बंद कर लेती है। दरअसल वे खुली आंखों से प्रेम नहीं कर सकती। आंखों के बंद रहने पर वे भीतर से शरीर को अधिक महसूस कर पाती है।
तो आंखें बंद कर लो और शरीर को महसूस करो। विश्राम में उतर जाओ और मेरूदंड पर चित एकाग्र करो। और यह सूत्र बहुत सरल ढंग से कहता है:

‘’इसमें रूपांतरित हो जाओ। ‘’ तुम इसके द्वारा रूपांतरित हो जाओगे।

□□□

□□□□□□□□ □□□□□ □□□□□□

(□□□□□□-□□□□□□—□□□□-1)

□□□□□□□-9

□□□□□□-□□□□□□—□□□□□-15

□□□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□:

‘’□□□□ □□ □□□□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□ □□ □□□□ □□□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□‘’

यह एक पुरानी से पुरानी विधि है और इसका प्रयोग भी बहुत हुआ है। यह सरलतम विधियों में एक है। सिर के सभी द्वारों को, आँख, कान, नाक, मुंह, सबको बंद कर दो। जब सिर के सब द्वार दरवाजे बंद हो जाते है तो तुम्हारी चेतना तो सतत बहार बह रही है। एकाएक रूक जाती है। ठहर जाती है। वह अब बाहर नहीं जा सकती।

तुमने ख्याल नहीं किया कि अगर तुम क्षण भर के लिए श्वास लेना बंद कर दो तो तुम्हारा मन भी ठहर जाता है। क्यों? क्योंकि श्वास के साथ मन चलता है। वह मन का एक संस्कार है। तुम्हें समझना चाहिए कि यह संस्कार क्या है। तभी इस सूत्र को समझना आसान होगा।

रूस के अति प्रसिद्ध मानस्विद पावलफ ने संस्कारजनित प्रतिक्रिया को, कंडीशंड रिफ्लेक्स को दुनियाभर में आम बोलचाल में शामिल करा दिया है। जो व्यक्ति भी मनोविज्ञान से जरा भी परिचित है, इस शब्द को जानता है। विचार की दो श्रृंखलाएं कोई भी दो श्रृंखलाएं इस तरह एक दूसरे से जुड़ सी जाती है। कि अगर तुम उनमें से एक को चलाओ तो दूसरी अपने आप शुरू हो जाती है।

पावलफ ने एक कुत्ते पर प्रयोग किया। उसने देखा कि तुम अगर कुत्ते के सामने खाना रख दो वक उसकी जीभ से लार बहने लगती है। जीभ बहार निकल आती है। और वह भोजन के लिए तैयार हो जाता है। कुत्ता जब भोजन देखता है या उसकी कल्पना करता है तो लार बहने लगती है। लेकिन पावलफ ने इस प्रक्रिया के साथ दूसरी बात जोड़ दी। जब भी भोजन रखा जाए और कुत्ते की लार टपकने लगे। वह दूसरी चीज करता; उदाहरण के लिए, वह एक घंटी बजाता और कुत्ता उस घंटी को सुनता।

पंद्रह दिन तक जब भी भोजन रखा जाता, घंटी भी बजती। और तब सोलहवें दिन कुत्ते के सामने भोजन नहीं रखा गया, केवल घंटी बजाई गई। लेकिन तब भी कुत्ते के मुहँ से लार बहने लगी। और जीभ बाहर आ गई, मानो भोजन सामने रखा हो।

वहां भोजन नहीं था, सिर्फ घंटी थी। अब घंटी बजने और लार टपकने के बीच कोई स्वाभाविक संबंध नहीं था। लार का स्वाभाविक संबंध भोजन के साथ है। लेकिन अब घंटी का रोज-रोज बजना लार के साथ जुड़ गया था, संबंधित हो गया था। और इसलिए मात्र घंटी के बजने पर भी लार बहने लगी।

पावलफ के अनुसार—और पावलफ सही है—हमारा समूचा जीवन एक कंडीशंड प्रोसेस है। मन संस्कार है। इसलिए अगर तुम उस संस्कार के भीतर कोई एक चीज बंद कर दो तो उससे जूड़ी और सारी चीजें भी बंद हो जाती है।

उदाहरण के लिए विचार और श्वास है। विचारणा सदा ही श्वास के साथ
चलती है। तुम बिना श्वास विचार नहीं कर सकते। तुम श्वास के प्रति सजग नहीं रहते, लेकिन श्वास सतत चलती रहती है। दिन-रात चलती रहती है। और प्रत्येक विचार, विचार की प्रक्रिया ही श्वास की प्रक्रिया से जुड़ी है। इसलिए अगर तुम अचानक अपनी श्वास रोक लो तो विचार भी रूक जाएगा। वैसे ही अगर सिर के सातों छिद्र, उसके सातों द्वार बंद कर दिए जाएं
तो तुम्हारी चेतना अचानक गति करना बंद कर देगी। तब चेतना भीतर थिर हो जाती है। और उसका यह भीतर थिर होना तुम्हारी आंखों के बीच के बीच स्थान बना देता है। वह स्थान ही त्रिनेत्र, तीसरी आँख कहलाती है। अगर सिर के सभी द्वार बंद कर दिये जाये तो तुम बाहर गति नहीं कर सकते। क्योंकि तुम सदा इन्हीं द्वारों से बाहर जाते रहे हो। तब तुम भीतर थिर हो जाते हो। और वह थिर होना, एकाग्र इन दो आंखों, साधारण आंखों के बीच घटित होता है। चेतना इन दो आंखों के बीच के स्थान पर केंद्रित हो जाती है। उस स्थान को ही त्रिनेत्र कहते है।
यह स्थान सर्वग्राही सर्वव्यापक हो जाता है। यह सूत्र कहता है कि
इस स्थान में सब सम्मिलित है सारा आस्तित्व समाया है। अगर तुम इस स्थान को अनुभव कर लो तो तुमने सब को अनुभव कर लिया। एक बार तुम्हें इन दो आंखों के बीच के आकाश की प्रतीति हो गई तो तुमने पूरे अस्तित्व को जाने लिया, उसकी समग्रता को जान लिया, क्योंकि यह आंतरिक आकाश सर्वग्राही है, सर्वव्यापक है, कुछ भी उसके बाहर नहीं है।
उपनिषाद कहते है: ‘’एक को जानकर सब जान लिया जाता है।‘’
ये दो आंखें तो सीमित को ही देख सकती है; तीसरी आँख असीम को देखती
है। ये दो आंखे तो पदार्थ को ही देख सकती है; तीसरी आँख अपदार्थ को, अध् यात्म को देखती है। इन दो आंखों से तुम कभी ऊर्जा की प्रतीति नहीं कर सकते, ऊर्जा को नहीं देख सकते, सिर्फ पदार्थ को देख सकते हो। लेकिन तीसरी आँख से स्वयं ऊर्जा देखी जाती है।
द्वारों का बंद किया जाना केंद्रित होने का उपाय है। क्योंकि एक
बार जब चेतना के प्रवाह का बाहर जाना रूक जाता है। वह अपने उदगम पर थिर हो जाती है। और चेतना का यह उदगम ही त्रिनेत्र है। अगर तुम इस त्रिनेत्र पर केंद्रित हो जाओ तो बहुत चीजें घटित होती है। पहली चीज तो यह पता चलती है कि सारा संसार तुम्हारे भीतर है।
स्वामी राम कहा करते थे कि सूर्य मेरे भीतर चलता है। तारे मेरे
भीतर चलते है, चाँद मेरे भीतर उदित होता है; सारा ब्रह्मांड मेरे भीतर है। जब उन्होंने पहली बार यह कहा तो उनके शिष्यों कि वे पागल हो गए है। राम तीर्थ के भीतर सितारे कैसे हो सकते है।
वे इसी त्रिनेत्र की बात कर रहे थे। इसी आंतरिक आकाश के संबंध
में। जब पहली बार यह आंतरिक आकाश उपलब्ध होता है तो यही भाव होता है। जब तुम देखते हो कि सब कुछ तुम्हारे भी तर है तब तुम ब्रह्मांड ही हो जाते हो।
त्रिनेत्र तुम्हारे भौतिक शरीर का हिस्सा नहीं है। वह तुम्हारे भौतिक शरीर का अंग नहीं है। तुम्हारी आंखों के बीच का स्थान तुम्हारे शरी तक ही सीमित नहीं है। वह तो वह अनंत आकाश है जो तुम्हारे भीतर प्रवेश कर गया है। और एक बार यह आकाश जान लिया जाए तो तुम फिर वही व्यक् ति नहीं रहते। जिस क्षण तुमने इस अंतरस्थ आकाश को जान लिया उसी क्षण तुमने अमृत को जान लिया तब कोई मृत्यु नहीं है।
जब तुम पहली बार इस आकाश को जानोंगे, तुम्हारा जीवन प्रामाणिक और प्रगाढ़ हो जाएगा; तब पहली बार तुम सच में जीवंत होओगे। तब किसी सुरक्षा की जरूरत नहीं रहेगी। अब कोई भय संभव नहीं है। अब तुम्हारी हत्या नहीं हो सकती। अब तुमसे कुछ भी छीना नहीं जा सकता। अब सारा ब्रह्मांड तुम्

हारा है, तुम ही ब्रह्मांड हो। जिन लोगों ने इस अंतरस्थ आकाश को जाना है उन्होंने ही आनंदमग्न होकर उरदघोषणा की है: अहं ब्रह्मास्मि। मैं ही ब्रह्मांड हूं, मैं ही ब्रह्मा हूं........।

सूफी संत मंसूर को इसी तीसरी आँख के अनुभव के कारण कत्ल कर दिया गया। जब उसने पहली बार इस आंतरिक आकाश को जाना, वह चिल्लाकर कहने लगा: अनलहक़, मैं ही परमात्मा हूं, भारत में वह पूजा जाता। क्योंकि भारत ने ऐसे अनेक लोग देखे है जिन्हें इस तीसरी आँख आंतरिक आकाश का बोध हुआ। लेकिन मुसलमानों के देश में यह बात कठिन हो गई। और मंसूर का यह वक्तव्य कि मैं परमात्मा हूं, अनलहक़, अहं ब्रह्मास्मि, धर्मविरोधी मालूम हुआ। क्योंकि मुसलमान यह सोच भी नहीं सकते कि मनुष्य और परमात्मा एक है। मनुष्य–मनुष्य है। मनुष्य सृष्टि है, और परमात्मा सृष्टा। सृष्टि स्त्रष्टा कैसे हो सकता है।

इस लिए मंसूर का यह वक्तव्य नहीं समझा जा सका। और उसकी हत्या कर दी गई। लेकिन जब उसको कत्ल किया जा रहा था तब वह हंस रहा था। तो किसी ने पूछा कि हंस क्यों रहे हो। मंसूर। कहते है कि मंसूर ने कहा मैं इसलिए हंस रहा हूं कि तुम मुझे नहीं मार रहे हो। तुम मेरी हत्या नहीं कर सकते। तुम्हें मेरे शरीर से धोखा हुआ है। लेकिन मैं शरीर नहीं हूं। मैं इस ब्रह्मांड को बनाने वाला हूं; यह मेरी अंगुलि थी जिसने आरंभ में समूचे ब्रह्मांड को चलाया था।

भारत में मंसूर आसानी से समझा जाता, सदियों-सदियों से यह भाषा जानी पहचानी है। हम जानते हे कि एक घड़ी आती है जब यह आंतरिक आकाश जाना जाता है। तब जानने वाला पागल हो जाता है। और यह ज्ञान इतना निश्चित है कि यदि तुम मंसूर की हत्या भी कर दो तो वह अपना वक्तव्य नहीं बदलेगा। क्योंकि हकीकत में, जहां तक उसका संबंध है,

तुम उसकी हत्या नहीं कर सकते। अब वह पूर्ण हो गया है। उसे मिटाने का उपाय नहीं है।

मंसूर के बाद सूफी सीख गए कि चुप रहना बेहतर है। इसलिए मंसूर के बाद सूफी परम्परा में शिष्यों को सतत सिखाया गया कि जब भी तुम तीसरी आँख को उपल्बध करो चुप रहो, कुछ कहो मत। जब भी घटित हो, चुप्पी साध लो। कुछ भी मत कहो। या वे ही चीजें औपचारिक ढंग से कहे जाओ जो लोग मानते है।

इसलिए अब इस्लाम में दो परंपराएं है। एक सामान्य परंपरा है—बाहरी, लौकिक। और दूसरी परंपरा असली इसलाम है, सूफीवाद जो गुह्म है। लेकिन सूफी चुप रहते है। क्योंकि मंसूर के बाद उन्होंने सीख लिया कि उस भाषा में बोलना जो कि तीसरी आँख के खुलने पर प्रकट होती है। व्यर्थ की कठिनाई में पड़ना है, और उससे किसी को मदद भी नहीं होती।

यह सूत्र कहता है: ‘’सिर के सात द्वारों को अपने हाथों से बंद करने पर आंखों के बीच का स्थान सर्वग्राही, सर्वव्यापी हो जाता है।‘’

तुम्हारा आंतरिक आकाश पूरा आकाश हो जाता है।

□□□
□□□□□□□ □□□□ □□□□□
(□□□□□-□□□□□—□□□-1)
□□□□□□-9

□□□□□-□□□□□—□□□□-16

□□□□□□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□:

‘’□□ □□□□□, □□ □□□□□□□□□ □□□□□ □□□ □□□□□ □□□, □□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□□□□□‘’

प्रत्येक विधि किसी मन-विशेष के लिए उपयोगी है। जि विधि की अभी हम चर्चा कर रहे थे—तीसरी विधि, सिर के द्वारों को बंद करने वाली विधि—उसका उपयोग अनेक लोग कर सकते है। वह बहुत सरल है और बहुत खतरनाक नहीं है। उसे तुम आसानी से काम में ला सकते हो।

यह भी जरूरी नहीं है कि द्वारों को हाथ से बंद करो; बंद करना भी जरूरी है। इसलिए कानों के लिए डाट और आंखों के लिए पट्टी से काम चल जाएगा असली बात यह कि कुछ क्षणों के लिए ये कुछ सेंकेंड के लिए सिर के द्वारों को पूरी तरह से बंद कर लो।

इसका प्रयोग करो, अभ्यास करो। अचानक करने से ही यह कारगर है, अचानक में ही राज छिपा है। बिस्तर में पड़े-पड़े अचानक सभी द्वारों को कुछ सेकेंड के लिए बंद कर लो। और तब भीतर देखो क्या होता है।

जब तुम्हारा दम घुटने लगे, क्योंकि श्वास भी बंद हो जाएगी, तब भी इसे जारी रखे और तब तक जारी रखो जब तक कि असह्य न हो जाये। और जब असह्य हो जाएगा, तब तुम द्वारों को ज्यादा देर बंद नहीं रख सकोगे, इसलिए उसकी फिक्र छोड़ दो। तब आंतरिक शक्ति सभी द्वारों के खुद खोल देगी। लेकिन जहां तक तुम्हारा संबंध है, तुम बंद रखो। जब दम घुटने लगे, तब वह क्षण आता है, निर्णायक क्षण, क्योंकि घुटन पुराने एसोसिएशन तोड़ डालती है। इसलिए कुछ और क्षण जारी रख सको तो अच्छा।

यह काम कठिन होगा, मुश्किल होगा, और तुम्हें लगेगा कि मौत आ गई। लेकिन डरों मत। तुम मर नहीं सकते। क्योंकि द्वारों को बंद भर करने से तुम नहीं मरोगे। लेकिन जब लगे कि में मर जाऊँगा, तब समझो कि वह क्षण आ गया।

अगर तुम उस क्षण में धीरज से लगे रहे तो अचानक हर चीज प्रकाशित हो जाएगी। तब तुम उस आंतरिक आकाश को महसूस करोगे। जो कि फैलता ही जाता है, और जिसमें समग्र समाया हुआ है। तब द्वारों को खोल दो और तब इस प्रयोग को फिर-फिर करो। जब भी समय मिले, इसका प्रयोग में लाओ।

लेकिन इसका अभ्यास मत बनाओ। तुम श्वास को कुछ क्षण के लिए रोकने का अभ्यास कर सकते हो। लेकिन उससे कुछ लाभ नहीं होगा। एक आकस्मिक, अचानक झटक की जरूरत है। उस झटके में तुम्हारी चेतना के पुराने स्रोतों का प्रवाह बंद हो जाता है। और कोई नयी बात संभव हो जाती है।

भारत में अभी भी सर्वत्र अनेक लोग इस विधि का अभ्यास करते है।

लेकिन कठिनाई यह है कि वे अभ्यास करते है। जब कि यह एक अचानक विधि हे। अगर तुम अभ्यास करो तो कुछ भी नहीं होगा। कुछ भी नहीं होगा। अगर मैं तुम्हें अचानक इस कमरे से बाहर निकाल फेंकूंगा तो तुम्हारे विचार बंद हो जाएंगे। लेकिन अगर हम रोज-रोज इसका अभ्यास करें तो कुछ नहीं होगा। तब वह एक यांत्रिक आदत बन जाएगी।
इसलिए अभ्यास मत करो; जब भी हो सके प्रयोग करो। तो धीरे-धीरे तुम्
हें अचानक एक आंतरिक आकाश का बोध होगा। वह आंतरिक आकाश तुम्हारी चेतना में तभी प्रकट होता है जब तुम मृत्यु के कगार पर होते हो। तब तुम्हें लगता है कि अंग में एक क्षण भी नहीं जीऊूंगा। अब मृत्यु निकट है; तभी वह सही क्षण आता है। इसलिए लगे रहो, डरों मत।
मृत्यु इतनी आसान नहीं है। कम से कम इस विधि को प्रयोग में लाते
हुए कोई व्यक्ति अब तक मरा नहीं है। इसमे अंतर्निहित सुरक्षा के उपाय है, यही कारण है कि तुम नहीं मरोगे। मृत्यु के पहले आदमी बेहोश हो जाता है। इसलिए होश में रहते हुए यह भाव आए कि मैं मर रहा हूं तो डरों मत। तुम अब भी होश में हो, इसलिए मरोगे नहीं। और अगर तुम बेहोश हो गए तो तुम्हारी श्वास चलने लगेगी। तब तुम उसे रोक नहीं पाओगे।
और तुम कान के लिए डाट काम में ला सकते हो। आंखों के पट्टी बाँध
सकते हो। लेकिन नाक और मुंह के लिए कोई डाट उपयोग नहीं करने है। क्योंकि तब वह संघातक हो सकता है। कम से कम नाक को छोड़ रखना ठीक है। उसे हाथ से ही बंद करो। उस हालत में जब बेहोश होने लगोगे तो हाथ अपने आप ही ढीला हो जाएगा। और श्वास वापस आ जाएगी। तो इसमे अंतर्निहित सुरक्षा है। यह विधि बहुतों के काम की है।
चौथी विधि उनके लिए है जिनका ह्रदय बहुत विकसित है, जो प्रेम और
भाव के लोग है, भाव-प्रवण लोग है।
‘’हे भगवती, जब इंद्रियाँ ह्रदय में विलीन हों, कमल के केंद्र पर पहु्ंचो।‘’
यह विधि ह्रदय-प्रधान व्यक्ति के द्वारा काम में लायी जा सकती है। इसलिए पहले यह समझने की कोशिश करो कि ह्रदय प्रधान व्यक्ति कौन है। तब यह विधि समझ सकोगे।
जो ह्रदय-प्रधान है, उस व्यक्ति के लिए सब कुछ ह्रदय ही है। अगर
तुम उसे प्यार करोगे तो उसका ह्रदय उस प्यार को अनुभव करेगा, उसका मस् तिष्क नहीं। मस्तिष्क-प्रधान व्यक्ति प्रेम किए जाने पर भी प्रेम का अनुभव मस्तिष्क से लेता है। वह उसके संबंध में सोचता है, आयोजन करता है; उसका प्रेम भी मस्तिष्क का ही सुचिंतित आयोजन होता है, लेकिन भावपूर्ण व्यक्ति तर्क के बिना जीता है। वैसे ह्रदय के भी अपने तर्क है, लेकिन ह्रदय सोच-विचार नहीं करता है।
अगर कोई तुम्हें पूछे कि क्यों प्रेम करते हो और तुम उसे क्यों का जवाब दे सको तो तुम मस्तिष्क प्रधान व्यक्ति हो। और अगर तुम कहां कि मैं नहीं जानता, मैं सिर्फ प्रेम करता हूं, तो तुम ह्रदय प्रधान व्यक्ति हो। अगर तुम इतना भी कहते हो कि मैं उसे इसलिए प्यार करता हूं, कि वह सुंदर है, तो वहां बुद्धि आ गई। ह्रदयोन्मुख व्यक्ति के लिए कोई सुंदर इसलिए है कि वह उसे प्रेम करता है। मस्तिष्क वाला व्यक्ति किसी को इसलिए प्रेम करता है कि वह सुंदर है। बुद्धि पहले आती है और तब प्रेम आता है। ह्रदय प्रधान व्यक्ति के लिए प्रेम प्रथम है और शेष चीजें प्रेम के पीछे-पीछे चली आती है। वह ह्रदय में केंद्रित है, इसलिए जो भी घटित होता है वह पहले उसके ह्रदय को छूता है।
जरा अपने को देखो। हरेक क्षण तुम्हारे जीवन में अनेक चीजें घटित
हो रही है। वे किसी स्थल को छूती है। तुम जा रहे हो और एक भिखारी सड़क पार करता है। वह भिखारी तुम्हें कहां छूता है। क्या तुम आर्थिक परिस्

थिति पर सोच विचार करते हो। या क्या तुम यह विचारने लगते हो कि कैसे कानून के द्वारा भिखमंगी बंद की जाए। या कि कैसे एक समाजवादी समाज बनाया जाए। जहां भिखमँगे न हो।
यह एक मस्तिष्क प्रधान आदमी है। जो ऐसा सोचने लगता है। उसके लिए भिखारी महज विचार करने का आधार बन जाता हे। उसका ह्रदय अस्पर्शित रह जाता है। सिर्फ मस्तिष्क स्पर्शित होता है। वह इस भिखारी के लिए अभी और यहां कुछ नहीं करने जा रहा है। नहीं, वह साम्यवाद के लिए कुछ करेगा। वह भविष्य के लिए, किसी ऊटोपिया के लिए कुछ करेगा। वह उसके लिए अपना पूरा जीवन भी दे-दे, लेकिन अभी तत्क्षण वह कुछ नहीं कर सकता है। मस्तिष्क सदा भविष्य में रहता है। ह्रदय सदा यहां और अभी रहता है।
एक ह्रदय प्रधान व्यक्ति अभी ही भिखारी के लिए कुछ करेगा। यह
भिखारी आदमी है, आंकड़ा नहीं। मस्तिष्क वाले आदमी के लिए वह गणित का आंकड़ा भर है। उसके लिए भिखमंगी बंद करना समस्या है, इस भिखारी की मदद की बात अप्रासंगिक है।
तो अपने को देखो, परखो। देखो कि तुम कैसे काम करते हो, देखो कि तुम ह्रदय की फिक्र करते हो या मस्तिष्क की। ह्रदयोन्मुख व्यक्ति हो तो यह विधि तुम्हारे काम की है। लेकिन यह बात भी ध्यान रखो कि हर आदमी आने को यह धोखा देने में लगा है कि मैं ह्रदयोन्मुख व्यक्ति हूं। हर आदमी सोचता है कि मैं बहुत प्रेमपूर्ण व्यक्ति हूं, भावुक किस्म का हूं। क् योंकि प्रेम एक ऐसी बुनियादी जरूरत है। कि अगर किसी को पता चले कि मेरे पास प्रेम करने वाला ह्रदय नहीं है। तो वह चैन से नहीं रह सकता। इसलिए हर आदमी ऐसा सोचे और माने चला जाता है।
लेकिन विश्वास करने से क्या होगा? निष्पक्षता के साथ अपना
निरीक्षण करो। ऐसे जैसे कि तुम किसी दूसरे का निरीक्षण कर रहे हो और तब निर्णय लो। क्योंकि अपने को धोखा देने की जरूरत क्या है? और उससे लाभ भी क्या है? और अगर तुम अपने को धोखा भी दे दो तो तुम विधि को धोखा नहीं दे सकते। क्योंकि तब विधि को प्रयोग करने पर तुम पाओगे कि कुछ भी नहीं होता है।
लोग मेरे पास आते है। मैं उनसे पूछता हूं कि तुम किस कोटि के हो। उन्हें यथार्थत: कुछ पता नहीं है। उन्होंने कभी इस संबंध में सोचा ही नहीं कि वे किस कोटि के है। उन्हें अपने बारे में धुँधली धारणाएं है। दरअसल मात्र कल्पनाएं है। उनके पास कुछ आदर्श है, कुछ प्रतिमाएं है और वे सोचते है—सोचते क्या चाहते है—कि हम वे प्रतिमाएं होते। सच में वे है नहीं। और अक्सर तो यह होता है कि वे उसके ठीक विपरीत होते है।
इसका कारण है। जो व्यक्ति जोर देकर कहता है कि मैं ह्रदय प्रधान
आदमी हूं, हो सकता है। वह ऐसा इसलिए कह रहा हो कि उसे अपने ह्रदय का अभाव खलता है। और वह भयभीत है। वह इस तथ्य को नहीं जान सकेगा। कि उसके पास ह्रदय नहीं है।
इस संसार पर एक नजर डालों। अगर अपने ह्रदय के बारे में हरेक आदमी
का दावा सही है तो वह संसार इतना ह्रदय हीन नहीं हो सकता। यह संसार हम सबका कुछ जोड़ है। इसलिए कहीं कुछ अवश्य गलत है। वहां ह्रदय नहीं है। सच तो यह है कि कभी ह्रदय को प्रशिक्षित ही नहीं क्या गया। मन प्रशिक्षित किया गया है। इसलिए मन है। मन को प्रशिक्षित करने के लिए स् कूल, कालेज, और विश्व विद्यालय है। लेकिन ह्रदय के प्रशिक्षण के लिए कोई जगह नहीं है। और मन का प्रशिक्षण लाभ दायी है, लेकिन ह्रदय का प्रशिक्षण खतरनाक है। क्योंकि अगर तुम्हारा ह्रदय प्रशिक्षित किया जाए तो तुम इस संसार के लिए बिलकुल व्यर्थ हो जाओगे। यह सारा संसार तो बुद्धि से चलता है। अगर तुम्हारा ह्रदय प्रशिक्षित हो तो तुम पूरे ढांचे से बाहर हो जाओगे। जब सारा संसार दाएं जाता होगा। तुम बाएं

चलोगे। सभी जगह तुम अड़चन में पड़ोगे।
सच तो यह है कि मनुष्य जितना अधिक सुसभ्य बनता है। ह्रदय का
प्रशिक्षण उतना ही कम हो जाता है। हम ता उसे भूल ही गए है। भूल गए है कि ह्रदय भी है या उसके प्रशिक्षण की जरूरत है। यही कारण है कि ऐसी विधियां जो आसानी से काम कर सकती थी, कभी काम नहीं करती।
अधिकांश धर्म ह्रदय-प्रधान विधियों पर आधारित है। ईसाइयत, इस्
लाम, हिंदू तथा अन्य कई धर्म ह्रदयोन्मुख लोगो पर आधारित है। जितना ही पुराना कोई धर्म है वह उतना ही अधिक ह्रदय आधारिक है। तब वेद लिखे गए और हिंदू धर्म विकसित हो रहा था। तब लोग ह्रदयोन्मुख थे। उस समय मन प्रधान लोग खोजना मुश्किल था। लेकिन अभी समस्या उलटी है। तुम प्रार्थना नहीं कर सकते। क्योंकि प्रार्थना ह्रदय-आधारित विधि है।
यही कारण है कि पश्चिम में, जहां ईसाइयत का बोलबाला है—और
ईसाइयत, खासकर कैथोलिक ईसाइयत प्रार्थना का धर्म है—प्रार्थना कठिन हो गई है। ईसाइयत में ध्यान के लिए कोई स्थान नहीं है। लेकिन अब पश्चिम में भी लोग ध्यान के लिए पागल हो रहे है। कोई अब चर्च नहीं जाता है। और अगर कोई जाता भी है तो वह महज औपचारिकता है। रविवारीय धर्म। क्यों? क् योंकि आज पश्चिम का जो आदमी है उसके लिए प्रार्थना सर्वथा असंगत हो गई है।
ध्यान ज्यादा मनोन्मुख है, प्रार्थना ज्यादा ह्रदयोन्मुख व्यक्
ति की ध्यान-विधि है। यह विधि भी ह्रदय वाले व्यक्ति के लिए ही है। ‘’हे भगवती, जब इंद्रियाँ ह्रदय में विलीन हों, कमल के केंद्र पर पहु्ंचो।‘
इस विधि के लिए करना क्या है? ‘’जब इंद्रियाँ ह्रदय में विलीन हों.......।‘’ प्रयोग करके देखो। कई उपाय संभव है। तुम किसी व्यक्ति को स् पर्श करते हो; अगर तुम ह्रदय वाले आदमी हो तो वह स्पर्श शीध्र ही तुम् हारे ह्रदय में पहुंच जाएगा। और तुम्हें उसकी गुणवत्ता महसूस हो सकती है। अगर तुम किसी मस्तिष्क वाले व्यक्ति का हाथ अपने हाथ में लोगे तो उसका हाथ ठंडा होगा—शारीरिक रूप से नहीं, भावात्मक रूप से। उसके हाथ में एक तरह का मुर्दा पन होगा। और अगर वह व्यक्ति ह्रदय वाला है तो उसके हाथ में एक ऊष्मा होगी; तब उसका हाथ तुम्हारे साथ पिघलने लगेगा। उसके हाथ से कोई चीज निकलकर तुम्हारे भीतर बहने लगेगी। और तुम दोनों के बीच एक तालमेल होगा। ऊष्मा का संवाद होगा।
यह ऊष्मा ह्रदय से आ रही है। यह मस्तिष्क से नहीं आ सकती, क्योंकि मस्तिष्क सदा ठंडा और हिसाबी है। ह्रदय ऊष्मा वाला है। वह हिसाबी नहीं है। मस्तिष्क सदा यह सोचता है कि कैसे ज्यादा लें। ह्रदय का भाव रहता है कि कैसे ज्यादा दें। वह जो ऊष्मा है वह दान है—ऊर्जा का दान, आंतरिक तरंगों का दान, जीवन का दान। यही वजह है कि तुम्हें उसमे एक गहरे घुलने का अनुभव होगा।
स्पर्श करो, छुओ। आँख बंद करो और किसी चीज को स्पर्श करो। अपने
प्रेमी या प्रेमिका को छुओ, अपनी मां को या बच्चे को छुओ। या मित्र को, या वृक्ष फूल या महज धरती को छुओ। आंखें बंद रखो। और धरती और अपने ह्रदय के बीच, प्रेमिका और अपने बीच होते आंतरिक संवार को महसूस करो। भाव करो कि तुम्हारा हाथ ही तुम्हारा ह्रदय है। जो धरती को स्पर्श करने को बढ़ा है। स्पर्श की अनुभूति को ह्रदय से जुड़ने दो।
तुम संगीत सुन रहे हो, उसे मस्तिष्क से मत सुनो। अपने मस्तिष्क को
भूल जाओ और समझो कि मैं बिना मस्तिष्क के हूं। मेरा कोई सिर नहीं है। अच्छा है कि अपने सोने के कमरे में अपना एक चित्र रख लो जिसमें सिर न हो। उस पर ध्यान को एकाग्र करो और भाव करो कि तुम बिना सिर के हो। सिर को आने ही मत दो और संगीत को ह्रदय से सुनो। भाव करो कि संगीत तुम्हारे ह्रदय

में जा रहा है। ह्रदय को संगीत के साथ उद्वेलित होने दो। तुम्हारी इंद्रियों को भी ह्रदय से जुड़ने दो, मस्तिष्क से नहीं।

यह प्रयोग सभी इंद्रियों के साथ करो, और अधिकाधिक भाव करो। के प्रत्येक ऐंद्रिक अनुभव ह्रदय में जाता है और विलीन हो जाता है।

''हे भगवती, जब इंद्रियाँ ह्रदय में विलीन हों, कमल के केंद्र पर पहुँचों।''

ह्रदय ही कमल है। और इंद्रियाँ कमल के द्वार है, कमल का पंखुडियां है। पहली बात कि अपनी इंद्रियों को ह्रदय के साथ जुड़ने दो। और दूसरी कि सदा भाव करो कि इंद्रियाँ सीधे ह्रदय में गहरी उतरती है। और उसमे धुल मिल रही है। जब ये दो काम हो जाएंगे तभी तुम्हारी इंद्रियाँ तुम्हारी सहायता करेंगी। तब वे तुम्हें तुम्हारे ह्रदय तक पहुंचा देंगी। और तुम्हारा ह्रदय कमल बन जाएगा।

यह ह्रदय कमल तुम्हें तुम्हारा केंद्र देगा। और जब तुम अपने ह्रदय के केंद्र को जान लोगे तब नाभि केंद्र को पाना बहुत आसान हो जाएगा। यह बहुत आसान है। यह सूत्र उसकी चर्चा भी नहीं करता। उसकी जरूरत नहीं है। अगर तुम सच में और समग्रता से ह्रदय में विलय हो गए, और बुद्धि ने काम करना छोड़ दिया तो तुम नाभि केंद्र पर पहुंच जाओगे।

ह्रदय ने नाभि की और द्वारा खुलता है। सिर्फ सिर से नाभि की और जाना कठिन है। या अगर तुम कहीं सिर और ह्रदय के बीच में हो तो नाभि पर जाना कठिन है। एक बासर तुम ह्रदय में विलय हो जाओ तो तुम ह्रदय के पार नाभि-केंद्र में उतर गए। और वही बुनियादी है। मौलिक है।

यही कारण है कि प्रार्थना काम करती है। और इसी कारण से जीसस कह सके कि प्रेम ईश्वर है। यह बात पूरी-पूरी सही नहीं है, लेकिन प्रेम द्वार है। अगर तुम किसी के गहरे प्रेम में हो—किसके प्रेम में हो महत्व का नहीं है, प्रेम ही महत्व का है—इतने प्रेम में कि संबंध मस्तिष्क का न रहे, सिर्फ ह्रदय काम करे, तो यही प्रेम प्रार्थना बन जाएगा। और तुम्हारा प्रेमी या प्रेमिका भगवती बन जाएगी।

सच तो यह है कह ह्रदय की आँख और कुछ नहीं देख सकती है। यह बात तो साधारण प्रेम में भी घटित होती है। अगर तुम किसी के प्रेम में पड़ते हो तो वह तुम्हारे लिए दिव्य हो उठता है। हो सकता है कि यह भाव बहुत स्थायी न हो और बहुत गहरा भी नहीं, लेकिन तत्क्षण तो प्रेमी या प्रेमिका दिव्य हो उठती है। देर-अबेर बुद्धि आकर पूरी चीज को नष्ट कर देगी। क्योंकि बुद्धि हस्तक्षेप कर सब व्यवस्था बिठाने लगेगी। उसे प्रेम की भी व्यवस्था बिठानी पड़ती है। और एक बार बुद्धि व्यवस्थापक हुई कि सब चीजें नष्ट हो जाती है।

आगर तुम सिर की व्यवस्था के बिना प्रेम में हो सको तो तुम्हारा प्रेम अनिवार्यत: प्रार्थना बनेगा। और तुम्हारी प्रेमिका द्वार बन जाएगी। तुम्हारा प्रेम तुम्हें ह्रदय में केंद्रित कर देगा। और एक बार तुम ह्रदय में केंद्रित हुए कि तुम अपने ही आप नाभि केंद्र में गहरे उतर जाओगे।

▯▯▯

▯▯▯▯▯▯▯ ▯▯▯▯ ▯▯▯▯▯

(▯▯▯▯▯-▯▯▯▯▯—▯▯▯-1)

▯▯▯▯▯▯-9

तंत्र-सूत्र—विधि-17

केंद्रित होने की पांचवी विधि:
‘’मन को भूलकर मध्य में रहो—जब तक।‘’

यह सूत्र इतना ही है। किसी भी वैज्ञानिक सूत्र की तरह यह छोटा है, लेकिन ये थोड़ से शब्द भी तुम्हारे जीवन को समग्ररतः: बदल सकते है। ‘’मन को भूल कर मध्य में रहो—जब तक।‘’
‘’मध्य में रहो।‘’—बुद्ध ने अपने ध्यान की विधि इसी सूत्र के आधार
पर विकसित की। उनका मार्ग मज्झम निकाय या मध्य मार्ग कहलाता है। बुद्ध कहते है, सदा मध्य में रहो, प्रत्येक चीज में।
एक बार राजकुमार श्रोण दीक्षित हुआ, बुद्ध ने उसे सन्यास में
दीक्षित किया। वह राजकुमार अद्भुत व्यक्ति था। और जब वह संन्यास में दीक्षित हुआ तो सारा राज्य चकित रह गया। लोगों को यकीन नहीं हुआ कि राजकुमार श्रोण संन्यासी हो गया। किसी ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था। क्योंकि श्रोण पूरा सांसारिक था। भोग-विलास में सर्वथा लिप्त रहता था। सारा दिन सूरा और सुंदरी ही उसका संसार थी।
तभी अचानक एक दिन बुद्ध उसके नगर में आए। राजकुमार श्रोण उनके
दर्शन को गया। वह बुद्ध के चरणों में गिरा और बोला कि मुझे दीक्षित कर लें, मैं संसार छोड़ दूँगा।
जो लोग उसके साथ आए थे उन्हें भी इसकी खबर नहीं थी। ऐसी अचानक घटना
थी यह। उन्होंने बुद्ध से पूछा कि यह क्या हो रहा है। यह तो चमत्कार है। श्रोण उस कोटि का व्यक्ति नहीं है। वह तो भोग विलास में रहा है। यह तो चमत्कार है। हमने तो कल्पना भी नहीं की थी कि श्रोण संन्यासी होगा। यह क्या हो रहा है। आपने कुछ कर दिया है।
बुद्ध ने कहा कि मैंने कुछ नहीं किया है। मन एक अति से दूसरी अति
पर जा सकता है। वह मन का ढंग है। एक अति से दूसरी अति पर जाना। श्रोण कुछ नया नहीं कर रहा है। यह होना ही था। क्योंकि तुम मन के नियम नहीं जानते, इसलिए तुम चकित हो रहे हो।
मन एक अति से दूसरी अति पर गति करता रहता है। मन का यही ढंग है। यह रोज-रोज होता है। जो आदमी धन के पीछे पागल था वह अचानक सब कुछ छोड़कर नंगा फकीर हो जाता है। हम सोचते है कि चमत्कार हो गया। लेकिन यह सामान्य नियम के सिवाय कुछ नहीं है। जो आदमी धन के पीछे पागल नहीं है। उसके यह उपेक्षा नहीं की जा सकती है कि वह त्याग करेगा। क्योंकि तुम एक अति से ही दूसरी अति पर जा सकेत हो। वैसे ही जैसे घड़ी का पैंडुलम एक अति से दूसरी अति पर डोलता रहता है।
इसलिए जो आदमी धन के लिए पागल था वह पागल होकर धन के खिलाफ जाएगा। लेकिन उसका पागलपन कायम रहेगा। वही मन है। जो आदमी कामवासना के लिए जीता था वह ब्रह्मचारी हो जा सकता है। एकांत में चला जा सकता है। लेकिन उसका पागलपन कायम रहेगा। पहले वह कामवासना के लिए जीता था अब वह कामवासना के खिलाफ होकर जिएगा। लेकिन उसका रूख उसकी दृष्टि वहीं की वहीं रहेगी। इसलिए ब्रह्मचारी सच में कामवासना के पार नहीं गया है।

उसका पूरा चित काम-वासना प्रधान हे। वह सिर्फ विरूद्ध हो गया है। उसने काम का अतिक्रमण नहीं किया है। अतिक्रमण का मार्ग सदा मध्य में है। वह कभी अति में नहीं है।
तो बुद्ध ने कहा कि यह होना ही था। यह कोई चमत्कार नहीं है। मन ऐसे
ही व्यवहार करता है।
श्रोण भिक्खु बन गया, संन्यासी हो गया। शीध्र ही बुद्ध के दूसरे शिष्यों ने देखा कि वह दूसरी अति पर जा रहा था। बुद्ध ने किसी को नग्न रहने को नहीं कहा था, लेकिन श्रोण नग्न रहने लगा। बुद्ध नग्नता के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने कहा कि यह दूसरी अति है। लोग है जो कपड़ों के लिए ही जीते है, मानों वही उनका जीवन हो। और ऐसे लोग भी है जो नग्न हो जाते है। लेकिन दोनों वस्त्रों में विश्वास करते है।
बुद्ध ने कभी नग्नता की शिक्षा नहीं दी। लेकिन श्रोण नग्न हो गया।
वह बुद्ध का अकेला शिष्य था जो नग्न हुआ। श्रोण आत्म उत्पीड़न में भी गहरे अतर गया। बुद्ध ने अपने संन्यासियों को दिन में एक बार भोजन की व् यवस्था दी थी। लेकिन श्रोण दो दिनों में एक बार भोजन लेने लगा। वह बहुत दुर्बल हो गया। दूसरे भिक्षु पेड़ की छाया में ध्यान करते। लेकिन श्रोण कभी छाया में नहीं बैठता था। वह सदा कड़ी घूप में रहता था। वह बहुत सुंदर आदमी था, उसकी देह बहुत सुंदर थी। लेकिन छह महीने के भीतर पहचानना मुश्किल हो गया कि यह वही आदमी है। वह कुरूप, काला, झुलसा-झुलसा दिखने लगा।
एक रात बुद्ध श्रोण के पास गए और उससे बोले: श्रोण मैंने सूना है
कि जब तुम राजकुमार थे, तब तुम्हें वीणा बजाने का शोक था। और तुम एक कुशल वीणावादक और बड़े संगीतज्ञ थे। तो मैं तुमसे एक प्रश्न पूछने आया हूं। अगर वीणा के तार बहुत ढीले हो तो क्या होता है? अगर तार ढीले होंगे तो कोई संगीत संभव नहीं है।
और फिर बुद्ध ने पूछा कि अगर तार बहुत कसे हों तो क्या होगा? श्रोण
ने कहा कि तब भी संगीत नहीं पैदा होगा। तारों को मध्य में होना चाहिए। वे न ढीले हो और न कसे हुए, ठीक मध्य में हो। और श्रोण ने कहा कि वीणा बजाना तो आसान है। लेकिन एक परम संगीतज्ञ ही तारों को मध्य में रख सकता है।
तो बुद्ध ने कहा कि छह महीनों तक तुम्हारा निरीक्षण करने के बाद
मैं तुमसे यही कहने आया हूं, कि जीवन में भी संगीत तभी जन्मता है जब उसके तार न ढीले हो और न कसे हुए ठीक मध्य में हों। इसलिए त्याग करना आसान है, लेकिन परम कुशल ही मध्य में रहना जानता है। इसलिए श्रोण, कुशल बनो और जीवन के तारों को मध्य में, ठीक मध्यम में रखो। इस या उस अति पर मत जाओ। और प्रत्येक चीज के दो छोर है, दो अतियां है। लेकिन तुम्हें सदा मध्य में रहना है।
लेकिन मन बहुत बेहोश है। इसलिए सूत्र में कहा गया है: ‘’मन को
भूलकर।‘’ तुम यह बात सुन भी लोगे, तुम इसे समझ भी लोगे, लेकिन मन उसको नहीं ग्रहण करेगा। मन सदा अतियों को चुनता है। मन में अतियों के लिए बड़ा आकर्षण है। मोह है। क्यों? क्योंकि मध्य में मन की मृत्यु हो जाती है।
घड़ी के पैंडुलम को देखो। अगर तुम्हारे पास कोई पुरानी घड़ी हो तो उसके पैंडुलम को देखो। पैंडुलम सारा दिन चलता रहता है। यदि वह अतियों तक आता जाता रहे। जब वह बांए जाता है तब दांए जाने के लिए शक्ति अर्जित कर रहा है। जब वह दांए जा रहा है तो मत सोचो की वह दांए जा रहा है। वह बांए जाने के लिए ऊर्जा इकट्ठी कर रहा है। अतियां ही दांए-बांए है। पैंडुलम को बीच में ठहरने दो और सब गति बंद कर दो, तब पैंडुलम में उर्जा नहीं रहेगी। क्योंकि उर्जा तो एक अति से आ रही थी। एक अति से दूसरी अति

उसे दूसरी अति की और फेंकती है। उससे एक वर्तुल बनता है। और पैंडुलम गतिमान होता है। उसको बीच में होने दो और तब सब गति ठहर जाएगी।
मन पैंडुलम की भांति है। और अगर तुम इसका निरीक्षण करो तो रोज ही
इसका पता चलेगा। तुम एक अति के पक्ष में निर्णय लेते हो और तब तुम दूसरी अति की और जाने लगते हो। तुम अभी क्रोध करते हो, फिर पश्चाताप करते हो। तुम कहते हो, नहीं, बहुत हुआ, अब मैं कभी क्रोध न करूंगा। लेकिन तुम कभी अति को नहीं देखते।
यह ‘’कभी नहीं’’ अति है। तुम कैसे निशचित हो सकते हो कि तुम कभी नहीं क्रोध करोगे। तुम कह क्या रहे है? एक बार और सोचो। कभी नहीं? अतीत में जाओ और याद करो कि कितनी बार तुमने निश्चय किया है। कि मैं कभी क्रोध नहीं करूंगा। जब तुम कहते हो कि मैं कभी क्रोध नहीं करूंगा। तो तुम नहीं जानते हो कि क्रोध करते समय। ही तुमने दूसरे छोर पर जाने की ऊर्जा इकट्ठी कर ली थी। अब तुम पश्चाताप कर रहे हो। अब तुम्हें बुरा लग रहा है। तुम्हारी आत्म छवि हिल गई है। गिर गई है। अब तुम नहीं कह सकते कि मैं अच्छा आदमी हूं। धार्मिक आदमी हूं। मैंने क्रोध किया और धार्मिक व्यक् ति क्रोध नहीं करता। है। अच्छा आदमी क्रोध कैसे करेगा? तो तुम अपनी अच् छाई को वापस पाने के लिए पश्चाताप करते हो। कम से कम अपनी नजर में तुम् हें लगेगा कि मैंने पश्चाताप कर लिया, चैन हो गया और अब फिर क्रोध नहीं होगा। इससे तुम्हारी हिली हुई आत्म-छवि पुरानी अवस्था में लौट आएगी। अब तुम चैन महसूस करोगे। क्योंकि अब तुम दूसरी अति पर चले गए।
लेकिन जो मन कहता है कि अब मैं फिर कभी क्रोध नहीं करूंगा। वह फिर क्रोध करेगा। अब जब तुम फिर क्रोध में होगें तो तुम अपने पश्चाताप को, अपने निर्णय को, सब को बिलकुल भूल जाओगे। और क्रोध के बाद फिर वह निर्णय लौटेगा। और पश्चाताप वापस आएगा। और तुम कभी उसके धोखे को नहीं समझ पाओगे। ऐसा सदा हुआ है। मन क्रोध से पश्चाताप और पश्चाताप से क्रोध के बीच डोलता रहता है।
बीच में रहो। न क्रोध करो, न पश्चाताप करो। और अगर क्रोध कर गए तो
कृपा कर क्रोध ही करो। पश्चाताप मत करो। दूसरी अति पर मत जाओ। बीच में रहो। कहो कि मैंने क्रोध किया है। मैं बुरा आदमी हूं। हिंसक हूं। मैं ऐसा ही हूं। लेकिन पश्चाताप मत करो। दूसरी अति पर मत जाओ। मध्य में रहो। और अगर तुम मध्य में रह सके तो फिर तुम क्रोध करने के लिए ऊर्जा इकट्ठी नहीं कर पाओगे।
इसलिए यह सूत्र कहता है: ‘’मन को भूलकर मध्य में रहो—जब तक।‘’
इस ‘’जब तक’’ का क्या मतलब है? मतलब यह है कि जब तक तुम्हारा विस्फोट
न हो जाए। मतलब यह है कि तब तक मध्य में रहो जब तक मन की मृत्यु न हो जाए। तब तक मध्य में रहो जब तक मन अ-मन न हो जाए। अगर मन अति पर है तो अ-मन मध्य में होगा।
लेकिन मध्य में होना संसार में सबसे कठिन काम है। दिखता तो सरल
है। दिखता तो यह आसान है। तुम्हें लगेगा कि मैं कर सकता हूं, और तुम्हें यह सोचकर लगेगा कि पश्चाताप की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन प्रयोग करो। और तब तुम्हें पता चलेगा। कि जब क्रोध करोगे तो मन पश्चाताप करने पर जोर देगा।
पति-पत्नियों का झगड़ा सदा से चलता आया है। और सदियों से महापुरुष
और सलाहकार समझा रहे है कि कैसे रहें और प्रेम करें। और यह झगड़ा जारी है। पहली बार फ्रायड को इस तथ्य को बोध हुआ। कि जब भी तुम प्रेम, तथाकथित प्रेम में होओगे। तुम्हें धृणा में भी होना पड़ेगा। सुबह प्रेम करोगे और श्याम घृणा करोगे। और इस तरह पैंडुलम हिलता रहेगा। प्रत्येक पति-पत् नी को इसका पता है। लेकिन फ्रायड की अनंतदृष्टि बड़ी अद्भुत है। वह

कहता है कि अगर किसी दंपति ने झगड़ा बंद कर दिया है तो समझो कि उनका प्रेम मर गया। घृणा और लड़ाई। के साथ जो प्रेम है, वह मर गया।
अगर किसी जोड़े का तुम देखो कि वह कभी लड़ता नहीं है तो यह मत समझो
कि यह आदर्श जोड़ा है। उसका इतना ही अर्थ है कि यह जोड़ा ही नहीं है। वे समांतर रह रहे है। लेकिर साथ-साथ नहीं रहते। वे समांतर रेखाएं है। जो कहीं नहीं मिलती। लड़ने के लिए भी नहीं। वे दोनों साथ रहकर भी अकेले- अकेले है—अकेले-अकेले और समांतर।
मन विपरीत पर गति करता है। इसलिए अब मनोविज्ञान के पास दंपतियों
के लिए बेहतर निदान है—बेहतर और गहरा। वह कहता है। कि अगर तुम सचमुच प्रेम-इसी मन के साथ—करना चाहते हो तो लड़ने झगड़ने से मत डरों। सच तो यह है कि तुम्हें प्रामाणिक ढंग से लड़ना चाहिए। ताकि तुम प्रामाणिक प्रेम के दूसरे छोर को प्राप्त कर सको। इसलिए अगर तुम अपनी पत्नी के लड़ रहे हो तो लड़ने से चूको मत। अन्यथा प्रेम से भी चूक जाओगे। झगड़े से बचो मत। उसका मौका आए तो अंत तक लड़ों। तभी संध्या आते-आते तुम फिर प्रेम करने योग्य हो जाओगे। मन तब तक शक्ति जुटा लेगा।
सामान्य प्रेम संघर्ष के बिना नहीं जी सकता। क्योंकि उसमे मन की
गति संलग्न है। सिर्फ वही प्रेम संघर्ष के बिना जिएगा जो कि मन का नहीं है। लेकिन वह बात ही और है। बुद्ध का प्रेम और ही बात है।
लेकिन अगर बुद्ध तुम्हें प्रेम करें तो तुम बहुत अच्छा नहीं
महसूस करोगे। क्यों? क्योंकि उसमें कुछ दोष नहीं रहेगा। वह मीठा ही मीठा होगा। और उबाऊ होगा। क्योंकि दोष तो झगड़े से आता है। बुद्ध क्रोध नहीं कर सकते। वे केवल प्रेम कर सकते है। तुम्हें उनका प्रेम पता नहीं चलेगा। क्योंकि पता तो विरोध में विपरीतता में चलता है।
जब बुद्ध बाहर वर्षों के बाद अपने नगर वापस आए तो उनकी पत्नी उनके स्वागत को नहीं आई। सारा नगर उनके स्वागत के लिए इकट्ठा हो गया, लेकिन उनकी पत्नी नहीं आई। बुद्ध हंसे। और उन्होंने अपने मुख्य शिष्य आनंद से कहा कि यशोधरा नहीं आई, मैं उसे भली-भांति जानता हूं। ऐसा लगता है कि वह मुझे अभी भी प्रेम करती है। वह मानिनी है, वह आहत अनुभव कर रही है। मैं तो सोचता था बाहर वर्ष का लम्बा समय है, वह अब प्रेम में न होगी। लेकिन मालूम होता है कि यह अब भी प्रेम में है। अब भी क्रोध में है। वह मुझे लेने नहीं आई, मुझे ही उसके पास जाना होगा।
और बुद्ध गए। आनंद भी उनके साथ था। आनंद को एक वचन दिया हुआ था। जब आनंद ने दीक्षा ली थी तो उसने एक शर्त रखी—और बुद्ध ने मान ली। कि मैं सदा आपके साथ रहूंगा। वह बुद्ध का बड़ा चचेरा भाई था। इसलिए उन्हें मानना पडा था। सो आनंद राजमहल तक उनके साथ गया। वहां बुद्ध ने उनसे कहां। कि कम से कम यहां तुम मेरे साथ मत चलो। क्योंकि यशोधरा बहुत नाराज होगी। मैं बाहर वर्षों के बाद लौट रहा हूं। और उसे खबर किए बिना यहाँ से चला गया था। वह अब भी नाराज है। तो तुम मेरे साथ मत चलो, अन्यथा वह समझेगा कि मैंने उसे कुछ कहने का भी अवसर नहीं दिया। वह बहुत कुछ कहना चाहती होगी। तो उसे क्रोध कर लेने दो, तुम कृपा इस बार मेरे साथ मत आओ। बुद्ध भीतर गए। यशोधरा ज्वालामुखी बनी बैठी थी। वह फूट पड़ी। वह
रोने चिल्लाने लगी। बकने लगी, बुद्ध चुपचाप बैठे सुनते रहे। धीरे-धीरे वह शांत हुई और तब वह समझी कि उस बीच बुद्ध एक शब्द भी नहीं बोले। उसने अपनी आंखें पोंछी और बुद्ध की और देखा।
बुद्ध ने कहा कि मैं यह कहने आया हूं कि मुझे कुछ मिला है, मैंने
कुछ जाना है। मैंने कुछ उपल्बध किया है। अगर तुम शांत होओ तो मैं तुम् हें वह संदेश, वह सत्य दूँ, जो मुझे उपलब्ध हुआ है। मैं इतनी देर इसलिए रुका रहा कि तुम्हारा रेचन हो जाए। बारह साल लंबा समय है। तुमने बहुत घाव इकट्ठे किए होंगे। और तुम्हारा क्रोध समझने योग्य है। मुझे इसकी

प्रतीक्षा थी। उसका अर्थ है कि तुम अब भी मुझे प्रेम करती हो। लेकिन इस प्रेम के पार भी एक प्रेम है, और उसी प्रेम के कारण मैं तुम्हें कुछ कहने वापस आया हूं।

लेकिन यशोधरा उस प्रेम को नहीं समझ सकी। इसे समझना कठिन है। क्योंकि यह इतना शांत है। यह प्रेम इतना शांत है। कि अनुपस्थित सा लगता है।

जब मन विसर्जित होता है तो एक और ही प्रेम घटित होता है। लेकिन उस प्रेम का कोई विपरीत पक्ष नहीं है। विरोधी पक्ष नहीं है। जब मन विसर्जित होता है तब जो भी घटित होता है उसका विपरीत पक्ष नहीं रहता। मन के साथ सदा उसका विपरीत खड़ा रहता है। और मन एक पैंडुलम की भांति गति करता है।

यह सूत्र अद्भुत है। उससे चमत्कार घटित हो सकता है।

''मन को भूलकर मध्य में रहो—जब तक।''

इस प्रयोग में लाओ। और यह सूत्र तुम्हारे पूरे जीवन के लिए है। ऐस नहीं है कि उसका अभ्यास यदा-कदा किया और बात खत्म हो गई। तुम्हें निरंतर इसका बोध रखना होगा। होश रखना होगा। काम करते हुए चलते हुए, भोजन करते हुए। संबंधों में, सर्वत्र मध्य में रहो। प्रयोग करके देखो और तुम देखोगें कि एक मौन, एक शांति तुम्हें घेरने लगी है और तुम्हारे भीतर एक शांत केंद्र निर्मित हो रहा है।

अगर ठीक मध्य में होने में सफल न हो सको तो भी मध्य में होने की कोशिश करो। धीरे-धीरे तुम्हें मध्य की अनुभूति होने लगेगी। जो भी हो, घृणा या प्रेम, क्रोध या पश्चाताप, सदा ध्रुवीय विपरीतताओं को ध्यान में रखो और उनके बीच मे रहो। और देर अबेर तुम ठीक मध्य को पा लोगे।

और एक बार तुमने इसे जान लिया तो फिर तुम उसे नहीं भूलोगे। क्योंकि मध्य बिंदू मन के पार है। और वह मध्य बिंदु अध्यात्म का सार सूत्र है

[illegible]
[illegible] [illegible] [illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-9

[illegible]-[illegible]—[illegible]-18

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]:

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]; [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—[illegible]

मैं फिर दोहराता हूं: ‘’किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो, दूसरे
विषय पर मत जाओ, किसी दूसरे विषय पर ध्यान मत ले जाओ, यही विषय के माध्य में—आनंद।
‘’किसी विषय को प्रेम पूर्ण देखो........।‘’
प्रेमपूर्वक में कुंजी है। क्या तुमने कभी किसी चीज को
प्रेमपूर्वक देखा है? तुम हां कह सकते हो, क्योंकि तुम नहीं जानते कि किसी चीज को प्रेमपूर्वक देखने का क्या अर्थ है। तुमने किसी चीज को लालसा-भरी आंखों से देखा होगा। कामना पूर्वक देखा होगा। वह दूसरी बात है। वह बिलकुल भिन्न विपरीत बात है। पहले इस भेद को समझो।
तुम एक सुंदर चेहरे को, सुंदर शरीर को देखते हो और तुम सोचते हो कि
तुम उसे प्रेमपूर्वक देख रहे हो। लेकिन तुम उसे क्यों देख रहे हो? क्या तुम उससे कुछ पाना चाहते हो? तब वह वासना है, कामना है, प्रेम नहीं है। क्या तुम उसका शोषण करना चाहते हो? तब वह वासना है, प्रेम नहीं। तब तुम सच में यह चाहते हो कि मैं कैसे इस शरीर को उपयोग में लाऊं, कैसे इसका मालिक बनूं। कैसे इसे अपने सुख का साधन बना लूं।
वासना का अर्थ है कि कैसे किसी चीज को अपने सुख के लिए उपयोग में लाऊं। प्रेम का अर्थ है कि उससे मेरे सुख का कुछ लेना देना नहीं है। सच तो यह है कि वासना कुछ लेना चाहती है। और प्रेम कुछ देना चाहता है। वे दोनों सर्वथा एक दूसरे के प्रतिकूल है।
अगर तुम किसी सुंदर व्यक्ति को देखते हो और उसके प्रति प्रेम
अनुभव करते हो तो तुम्हारी चेतना में तुरंत भाव उठेगा। कि कैसे इस व् यक्ति को, इस पुरूष या स्त्री को सुखी करूं। यह फिक्र अपनी नहीं, दूसरे की है। प्रेम में दूसर महत्वपूर्ण है; वासना में तुम महत्वपूर्ण हो। वासना में तुम दूसरें को साधन बनाने की सोचते हो; और प्रेम में तुम स् वयं साधन बनने की सोचते हो। वासना में तुम दूसरे को पोंछ देना चाहते हो। प्रेम में तुम स्वयं मिट जाना चाहते हो। प्रेम का अर्थ है देना। वासना का अर्थ है लेना। प्रेम समर्पण है; वासना आक्रमण है।
तुम क्या कहते हो, उसका कोई अर्थ नहीं है। वासना में भी तुम प्रेम
की भाषा काम में लाते हो। तुम्हारी भाषा का बहुत मतलब नहीं है। इसलिए धोखे में मत पड़ो। भीतर देखो और तब तुम समझोगे कि तुमने जीवन में एक बार भी किसी व्यक्ति या वस्तु को प्रेमपूर्वक नहीं देखा है।
एक दूसरा भेद भी समझ लेने जैसा है।
सूत्र कहता है: ‘’किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो......।‘’
असल में तुम किसी पार्थिव, जड़ वस्तु को भी प्रेमपूर्वक देखो तो
वह वस्तु व्यक्ति बन जाती है। तुम्हारा प्रेम वस्तु को भी व्यक्ति में रूपांतरित करने की कुंजी है। अगर तुम वृक्ष को प्रेमपूर्वक देखो तो वृक्ष व्यक्ति बन जाता है।
उस दिन मैं विवेक से बात करता था। मैंने उससे कहा कि जब हम नए
आश्रम में जाएंगे तो वहां हम हरेक वृक्ष को नाम देंगे। क्योंकि हरेक वृक्ष व्यक्ति है। क्या कभी तुमने सुना है कि कोई वृक्षों को नाद दे? कोई वृक्षों को नाम नहीं देता। क्योंकि कोई वृक्षों को प्रेम नहीं करता। अगर प्रेम करे तो व्यक्ति बन जाए। तब वह भीड़ का, जंगल का हिस्सा नहीं रहा। वह अनूठा हो गया।
तुम कुत्तों और बिल्लियों को नाम देते हो। जब तुम कुत्ते को नाम
देते हो, उसे ‘’टाइगर’’ कहते हो, तो कुत्ता व्यक्ति बन जाता है। तब वह बहुत से कुत्तों में एक कुत्ता नहीं रहा। तब उसको व्यक्तित्व मिल गया। तुमने निर्मित कर दिया। जब भी तुम किसी चीज को प्रेमपूर्वक देखते हो वह चीज व्यक्ति बन जाती है।
और इसका उलटा भी सही है। जब तुम किसी व्यक्ति को वासना पूर्वक

देखते हो तो वह व्यक्ति वस्तु बन जाता है। यही कारण है कि वासना भरी आंखों में विकर्षण होता है। क्योंकि कोई भी वस्तु होना नहीं चाहता। जब तुम अपनी पत्नी को, या किसी दूसरी स्त्री को, या पुरूष को, वासना की दृष् टि से देखते हो, तो उसके दूसरे को चोट पहुँचती है। तुम असल में क्या कर रह हो? तुम एक जीवित व्यक्ति को मृत साधन में, यंत्र में बदल रहे हो। ज् यों ही तुमने सोचा कि कैसे उसका उपयोग करें कि तुमने उसकी हत्या कर दी। यही कारण है कि वासना भरी आंखें विकर्षण होती है। कुरूप होती है।
और जब तुम किसी को प्रेम से भरकर देखते हो। तो दूसरा ऊँचा उठ जाता है। वह अनूठा हो जाता है। अचानक वह व्यक्ति हो उठता है।
एक वस्तु बदली जा सकती है। ठीक उसकी जगह वैसी ही चीज लाई जा सकती
है। लेकिन उसी तरह एक व्यक्ति नहीं बदला जा सकता। वस्तु का अर्थ है जो बदली जा सके; व्यक्ति का अर्थ है जो नहीं बदला जा सके। किसी पुरूष या स् त्री के स्थान पर ठीक वैसा ही पुरूष या स्त्री नहीं लायी जा सकती है। हर एक व्यक्ति अनूठा है। वस्तु नहीं।
प्रेम किसी को भी अनूठा बना देता है। यही कारण है कि प्रेम के बिना
तुम नहीं महसूस करते कि मैं व्यक्ति हूं। जब तक कोई तुम्हें गहन प्रेम न करे, तुम्हारे अनूठेपन का एहसास ही नही होता। तब तक तुम भीड़ के हिस्से हो—एक नंबर, एक संख्या। और तुम बदले जा सकते हो।
यह सूत्र कहता है: ‘’किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो..........।‘’
यह किसी विषय या व्यक्ति में कोई फर्क नहीं करता। उसकी जरूरत नहीं
है। क्योंकि जब तुम प्रेमपूर्वक देखते हो तो कोई भी चीज व्यक्ति हो उठती है। यह देखना ही बदलता है, रूपांतरित करता है।
तुमने देखा हो या न देखा हो, जब तुम किसी खास कार को, समझो वह फिएट
है, चलाते हो तो क्या होता है। एक ही जैसे हजारों-हजार फिएट है, लेकिन तुम्हारी कार, अगर तुम पनी कार को प्रेम करते हो, अनूठी हो जाती है। व् यक्ति बन जाती है। उसे बदला नहीं जा सकता; एक नाता-रिश्ता निर्मित हो गया। अब तुम इस कार को एक व्यक्ति समझते हो।
अगर कुछ गड़बड़ हो जाए, जरा सी आवाज आने लगे, तो तुम्हें तुरंत उसका एहसास होता है। और कारें बहुत तुनकमिज़ाज होती है। तुम अपनी कार के मिज़ाज से परिचित हो कि कब वह अच्छा महसूस करती है। और कब बुरा। धीरे- धीर कार व्यक्ति बन जाती है। क्यो?
अगर प्रेम का संबंध है तो कोई भी चीज व्यक्ति बन जाती है। और अगर
वासना का संबंध हो तो व्यक्ति भी वस्तु बन जाता है। और यह बड़े से बड़ा अमानवीय कृत्य है जो आदमी कर सकता है कि वह किसी को वस्तु बना दे। ‘’किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो......।‘’
इसके लिए कोई क्या करे? प्रेम से जब देखते हो तो क्या होता है?
पहली बात: अपने को भूल जाओ। अपने को बिलकुल भूल जाओ। एक फूल को देखो और अपने को बिलकुल भूल जाओ। फूल तो हो, लेकिन तुम अनुपस्थित हो जाओ। फूल को अनुभव करो और तुम्हारी चेतना से गहरा प्रेम फूल की और प्रवाहित होगा। और तब अपनी चेतना को एक ही विचार से भर जाने दो कि कैसे मैं इस फूल के ज् यादा खिलनें में, ज्यादा सुंदर होने में, ज्यादा आनंदित होने में सहयोगी हो सकता हूं। मैं क्या कर सकता हूं।
यह महत्व की बात नहीं है कि तुम कुछ कर सकते हो या नहीं। यह
प्रासंगिक नहीं है। यह भाव कि मैं क्या कर सकता हूं, यह पीड़ा, गहरी पीड़ा कि इस फूल को ज्यादा सुंदर, ज्यादा जीवंत और ज्यादा प्रस्फुटित बनाने के लिए मैं क्या करू, ज्यादा महत्व की है। इस विचार को आने पूरे प्राणों में गूंजने दो। अपने शरीर और मन के प्रत्येक तंतु को इस विचार से भीगने दो। तब तुम समाधिस्थ हो जाओगे। और फूल एक व्यक्ति बन जाएगा। ‘’दूसरे विषय पर मत जाओ.....।‘’

तुम जा नहीं सकते। अगर तुम प्रेम में हो तो नहीं जा सकते। अगर तुम
इस समूह में बैठे किसी व्यक्ति को प्रेम करते हो तो तुम्हारे लिए सब भीड़ भूल जाती है और केवल यही चेहरा बचता है। सच में तुम और किसी को नहीं देखते, उस एक चेहरे को ही देखते हो। सब वहां है, लेकिन वे नहीं के बराबर है, वे तुम्हारी चेतना की महज परिधि पर होते है। वे महज छायाएं है। मात्र एक चेहरा रहता है। अगर तुम किसी को प्रेम करते हो तो मात्र वही चेहरा रहता है। इसलिए दूसरे पर तुम नहीं जा सकते।
दूसरे विषय पर मज जाओ। एक के साथ ही रहो। गुलाब के फूल के साथ या
अपनी प्रेमिका के चेहरे के साथ रहो। ओर उसके साथ प्रेमपूर्वक रहो। प्रवाहमान रहो। समग्र ह्रदय से उसके साथ रहो। और इस विचार के साथ रहो कि मैं अपनी प्रेमिका को ज्यादा सुखी और आनंदित बनाने के लिए क्या कर सकता हूं।
‘’यहीं विषय के मध्य में—आनंद।‘’
और जब ऐसी स्थिति बन जाए कि तुम अनुपस्थित हो, अपनी फिक्र नहीं
करते, अपनी सुख संतोष की चिंता नहीं लेते। अपने को पूरी तरह भूल गए हो, जब तुम सिर्फ दूसरे के लिए चिंता करते हो, दूसरा तुम्हारे प्रेम का केंद्र बन गया है। तुम्हारी चेतना दूसरे में प्रवाहित हो रही है। जब गहन करूणा और प्रेम के भाव से तुम सोचते हो कि मैं अपनी प्रेमिका को आनंदित करने के लिए क्या कर सकता हूं। तब इस स्थिति में अचानक, ‘’यहीं विषय के मध्य में—आनंद, अचानक उप-उत्पति की तरह तुम्हें आनंद उपलब्ध हो जाता है। तब अचानक तुम केंद्रित हो गए।
यह बात विरोधाभासी लगती है। क्योंकि सूत्र कहता है कि अपने को
बिलकुल भूल जाओ, आत्म केंद्रित मत बनो। दूसरे में पूरी तरह प्रवेश करो। बुद्ध निरंतर कहते थे कि जब भी तुम प्रार्थना करो तो दूसरों के
लिए करों—अपने लिए नहीं। अन्यथा प्रार्थना व्यर्थ जायेगी।
एक आदमी बुद्ध के पास आया और उसने कहा कि मैं आपके उपदेश को स्
वीकार करता हूं, लेकिन उसकी एक बात मानना बहुत कठिन है। आप कहते है जब भी तुम प्रार्थना करो तो अपनी मत सोचो। अपने लिए मत कुछ मांगो। सदा यही कहो कि मेरी प्रार्थना से जो फल आए वह सबको मिले, कोई आनंद उतरे तो वह सब में बंट जाए। उस आमदी ने कहा यह बात भी ठीक है। लेकिन कोई आनंद उतरे तो वह सब में बंट जाए। उस आदमी ने कहा, यह बात भी ठीक है, लेकिन मैं इसमे एक अपवाद, एक ही अपवाद करना चाहूंगा। और वह यह कि यह कृपा मेरे पड़ोसी को न मिले। क्योंकि वह मेरा शत्रु है। यह आनंद मेरे पड़ोसी को छोड़कर सबको प्राप्त हो।
मन आत्म केंद्रित है। बुद्ध ने उस आदमी से कहा कि तब तुम्हारी प्रार्थना व्यर्थ है। अगर तुम सब कुछ सबको बांटने को तैयार नहीं हो तो कुछ भी फल नहीं होगा। और सबमें बांट दोगे तो सब तुम्हारा होगा।
प्रेम में तुम्हें अपनी को भूल जाना है। लेकिन तब यह बात
विरोधाभासी लगने लगती है। तब केंद्रित होना कब और कैसे घटित होगा? दूसरे में समग्ररूपेण संलग्न होने से। जब तुम स्वयं को पूरी तरह भूल जाते हो और जब दूसरा ही बचता है, तुम आनंद से आशीर्वाद से भर दिये जाते हो।
क्यो? क्योंकि जब तुम अपनी फिक्र नहीं रहती तो तुम खाली, रिक्त हो जाते हो। तब आंतरिक आकाश निर्मित हो जाता है। जब तुम्हारा मन पूरी तरह दूसरे में संलग्न है तो तुम अपने भीतर मन रहित हो जाते हो। तब तुम्हारे भीतर विचार नहीं रह जाता है। और तब यह विचार भी कि मैं दूसरे को अधिक सूखी अधिक आनंदित बनाने के लिए क्या कर सकता हूं। जाता रहता है, क्योंकि सच में तुम कछ नहीं कर सकते। तब यह विचार विराम बन जाता है। तुम कुछ नहीं

कर सकते। क्या कर सकते हो? क्योंकि अगर सोचते हो कि मैं कुछ कर सकता हूं तो अब भी अहंकार की भाषा में सोच रहे हो।
स्मरण रहे, प्रेमपात्र के साथ व्यक्ति बिलकुल असहाय हो जाता है।
जब भी तुम किसी को प्रेम करते हो, तुम असहाय हो जाते हो। यही प्रेम की पीड़ा है, कि तुम्हें पता नहीं चलता कि मैं क्या कर सकता हूं। तुम सब कुछ करना चाहोगे, तुम अपने प्रेमी या प्रेमिका को सारा ब्रह्मांड दे देना चाहोगे। लेकिन तुम कर क्या सकते हो? अगर तुम सोचते हो कि यह या वह कर सकते हो तो तुम अभी प्रेम में नहीं हो। प्रेम बहुत असहाय है, बिलकुल असहाय है। और वह असहायपन सुंदर है, क्योंकि उसी असहायपन में तुम समर्पित हो जाते हो।
किसी को प्रेम करो और तुम असहाय अनुभव करोगे। किसी को धृणा करो और तुम्हें लगेगा कि तुम कुछ कर सकते हो। प्रेम करो और तुम बिलकुल असमर्थ हो। तुम क्या कर सकते हो? जो भी तुम कर सकते हो वह इतना क्षुद्र लगता है, इतना अर्थहीन। वह कभी भी पर्याप्त नहीं मालूम होता। कुछ नहीं किया जा सकता। और जब कोई समझता है कि कुछ नहीं किया जा सकता तब वह असहाय अनुभव करता है। जब कोई सब कुछ करना चाहता है और समझता है कि कुछ नहीं किया जा सकता। तब मन रूक जाता है। और इसी असहायावस्था में समर्पण घटित होता है। तुम खाली हो गए।
यही कारण है कि प्रेम गहन ध्यान बन जाता है। अगर सच में तुम किसी
को प्रेम करते हो तो किसी अन्य ध्यान की जरूरत न रही। लेकिन क्योंकि कोई भी प्रेम नहीं करता है। इसलिए एक सौ बारह विधियों की जरूरत पड़ी। और वे भी काफी कम है।
उस दिन कोई यहां था। वह कहा रहा था कि इससे मुझे बहुत आशा बंधी है। मैंने पहली दफा आप से ही सुना है कि एक सौ बारह विधियां है। इससे बहुत आशा होती है। लेकिन मन में कही एक विषाद भी उठता है कि क्या कुल एक सौ बारह विधियों से काम चल सकता है। अगर मेरे लिए वह सब की सब व्यर्थ हुई तो क्या होगा? क्या कोई एक सौ तेरहवीं विधि नहीं है?
और वह आदमी सही है। वह सही है। अगर ये एक सौ बारह विधियां तुम्हारे
काम न आ सकी तो कोई उपाय नहीं है। इसलिए उसका कहना ठीक है। कि आशा के पीछे-पीछे विषाद भी घेरता है। लेकिन सच तो यह है कि विधियों की जरूरत इसलिए पड़ती है कि बुनियादी विधि खो गई है। अगर तुम प्रेम कर सको तो किसी विधि की जरूरत नहीं है। प्रेम स्वयं सबसे बड़ी विधि है।
लेकिन प्रेम कठिन है, एक तरह से असंभव। प्रेम का अर्थ है अपने को
ही अपनी चेतना से निकाल बाहर करना। और उसकी जगह अपने अहंकार की जगह दूसरे को स्थापित करना। प्रेम का अर्थ है अपनी जगह दूसरे को स्थापित करना। मानों कि अब तुम नहीं है। सिर्फ दूसरा है।
ज्याँ पाल सार्त्र कहता है कि दूसर नरक है। और वह सही है। क्योंकि दूसरा तुम्हारे लिए नरक ही बनाता है। लेकिन सार्त्र गलत भी हो सकता है। क्योंकि दूसरा अगर नरक है तो वह स्वर्ग भी हो सकता है।
अगर तुम वासना से जीते हो तो दूसरा नरक है। क्योंकि तुम उस व्यक्
ति की हत्या करने में लगे हो, तुम उसे वस्तु में बदलने में लगे हो। तब वह व्यक्ति भी प्रतिक्रिया में तुम्हें वस्तु बनाना चाहेगा। और उससे ही नरक पैदा होता है।
तो सब पति-पत्नी एक दूसरे के लिए नरक पैदा कर रहे है। क्योंकि हरेक दूसरे पर मलकियत करने में लगा है। मलकियत सिर्फ चीजें की हो सकती है। व् यक्तियों की नहीं। तुम किसी वस्तु को तो अधिकार में कर सकते हो, लेकिन किसी व्यक्ति को अधिकार में नहीं कर सकते। लेकिन तुम व्यक्ति पर अधिकार करने की कोशिश करते हो। और उस कोशिश में व्यक्ति बन जाता है। तब तुम भी मुझे वस्तु बनाने की कोशिश करोगे। उससे ही नरक बनता है।

तुम अपने कमरे में अकेले बैठे हो। और तभी तुम्हें अचानक पता चलता
है कि कोई चाबी के छेद से भीतर झांक रहा है। गौर से देखो कि क्या होता है। तुम्हें कोई बदलाहट महसूस हुई? तुम क्यों इस झांकने वाले पर नाराज होते हो। उसने तुम्हें वस्तु में बदल दिया। वह झांक रहा है और झांक कर उसने तुम्हें वस्तु बना दिया। आब्जेक्ट्स बना दिया। उसने ही तुम्हें बेचैनी होती है।
और वही बात उस आदमी के साथ होगी। अगर तुम उस चाबी के छेद के पास आकर बाहर देखने लगो तो दूसरा व्यक्ति घबरा जाएगा। एक क्षण पहले वह द्रष्टा था और तुम दृश्य थे। अब वह अचानक पकड़ा गया। और तुम्हें देखते हुए पकड़ा गया। और अब वही वस्तु बन गया है।
जब कोई तुम्हें देख रहा है तो तुम्हें लगता है कि मेरी स्वतंत्रता बाधित हुई। नष्ट हुई। यही कारण है कि प्रेमपात्र को छोड़कर तुम किसी को घूर नहीं सकते, टकटकी लगाकर देख नहीं सकते। अगर तुम प्रेम में नहीं हो तो वह घूरना कुरूप होगा। हिंसक होगा। हां, अगर तुम प्रेम में हो तो वह घूरना सुंदर है। क्योंकि तब तुम घूरकर किसी को वस्तु में नहीं बदल रहे हो। तब तुम दूसरे की आँख से सीधे झांक सकते हो। तब तुम दूसरे की आँख में गहरे प्रवेश कर सकते हो। तुम उसे वस्तु में नहीं बदलते बल्कि तुम्हारा प्रेम उसे व्यक्ति बना देता है। यही कारण है कि सिर्फ प्रेमियों को घूरना सुंदर होता है। शेष सब घूरना कुरूप है, गंदा है।
मानस्विद कहते है कि तुम किसी व्यक्ति को, अगर वह अजनबी है, कितनी
देर तक घूरकर देख सकते हो। इसकी सीमा है।
तुम इसका निरीक्षण करो और तुम्हें पता चल जाएगा। कि इसकी अवधि
कितनी है। इस समय की सीमा है। उससे एक क्षण ज्यादा घूरों और दूसरा व्यक् ति क्रुद्ध हो जायेगा। सार्वजनिक रूप से एक चलती हुई नजर क्षमा की जा सकती है। क्योंकि उससे लगेगा कि तुम देख भर रहे थे, घूर नहीं रहे थे। दृष्टि गड़ा कर देखना दूसरी बात है।
अगर मैं तुम्हें चलते-चलते देख लेता हूं तो उससे कोई संबंध नहीं
बनता है। या मैं गुजर रहा हूं और तुम मुझ पर निगाह डालों तो उससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है। वह अपराध नहीं है। ठीक है। लेकिन अगर तुम अचानक रुककर मुझे देखने लगो तो तुम निरीक्षक हो गए। तब तुम्हारी दृष्टि से मुझे अड़चन होगी। और मैं अपमानित अनुभव करूंगा। तुम कर क्या रहे हो? मैं व्यक्ति हूं, वस्तु नहीं। यह कोई देखने का ढंग है?
इसी वजह से कपड़े महत्वपूर्ण हो गए है। अगर तुम किसी के प्रेम में
हो तभी तुम उसके समक्ष नग्न हो सकते हो। क्योंकि जिस क्षण तुम नग्न होते हो। तुम्हारा समूचा शरीर दृष्टि का विषय बन जाता है। कोई तुम्हारे पूरे शरीर को निहार रहा है। और अगर वह तुम्हारे प्रेम में नहीं है तो उसकी आंखे तुम्हारे पूरे शरीर को, तुम्हारे पूरे अस्तित्व को वस्तु में बदल देंगी। लेकिन अगर तुम किसी के प्रेम में हो, तो तुम उसके सामने लज्जा महसूस किए बिना ही नग्न हो सकते हो। बल्कि तुम्हें नग्न होना रास आएगा। क्योंकि तुम चाहोगे कि यह रूपांतरकारी प्रेम तुम्हारे पूरे शरीर को व् यक्ति में रूपांतरित कर दे।
जब भी तुम किसी को वस्तु में बदलते हो तो वह कृत्य अनैतिक है।
लेकिन अगर तुम प्रेम से भरे हो तो उस प्रेम भरे क्षण में घटना, यह आनंद किसी भी विषय के साथ संभव हो जाता है।
‘’यही विषय के मध्य में—आनंद।‘’
अचानक तुम अपने को भूल गए हो। दूसरा ही है। और तब वह सही क्षण
आएगा। जब कि तुम पूरे के पूरे अनुपस्थित हो जाओगे, तब दूसरा भी अनुपस् थित हो जाएगा। और तब दोनों के बीच वह धन्यता घटती है। प्रेमियों की यही अनुभूति है।

यह आनंद एक अज्ञात और अचेतन ध्यान के कारण घटता है। जहां दो
प्रेमी है वहां धीरे-धीरे दोनों अनुपस्थित हो जाते हो। और वहां एक शुद्ध असतित्व बचता है। जिसमें कोई अहंकार नहीं है। कोई द्वंद्व नहीं है। वहां मात्र संवाद है, साहचर्य है, सहभागिता है। उस संभोग में ही आनंद उतरता है। वह समझना गलत है कि यह आनंद तुम्हें किसी दूसरे से मिला है। वह आनंद आया है। क्योंकि तुम अनजाने ही एक गहरे ध्यान विधि में उतर गये हो।
तुम यह सचेतन भी कर सकते हो। और जब सचेतन करते हो तो तुम और गहरे
जाते हो। क्योंकि तब तुम विषय से बंधे नहीं हो। यह रोज ही होता है। जब तुम किसी को प्रेम करते हो तो तुम जो आनंद अनुभव करते हो उसका कारण दूसरा नहीं है। उसका कारण बस प्रेम है। और प्रेम क्यों कारण है? क् योंकि यह घटना है, यह सूत्र घटता है।
लेकिन तब तुम एक गलतफहमी से ग्रस्त हो जाते हो। तुम सोचते हो कि अ
या ब के सान्निध्य के कारण यह आनंद घटा। और तुम सोचते हो कि मुझे अ को अपने कब्जे में करना चाहिए। क्योंकि अ की उपस्थिति के बिना मुझे यह आनंद नहीं मिलता। और तुम ईर्ष्यालु हो जाते हो। तुम्हें डर लगने लगता है। कि अ किसी दूसरे के कब्जे में न चला जाये। क्योंकि तब दूसरा आनंदित होगा और तुम दुःखी होओगे। इसलिए तुम पक्का कर लेना चाहते हो कि अ किसी और के कब्ज में न जाए। अ को तुम्हारे ही कब्जे में होना चाहिए। क्योंकि उसके द्वारा तुम्हें किसी और लोक की झलक मिली।
लेकिन जिस क्षण तुम मालिकीयत की चेष्टा करते हो उसी क्षण उस घटना
का सब सौंदर्य, सब कुछ नष्ट हो जाता है। जब प्रेम पर कब्जा हो जाता है। प्रेम समाप्त हो जाता है। तब प्रेमी सहज एक वस्तु होकर रह जाता है। तुम उसका उपयोग कर सकते हो। लेकिन फिर वह आनंद नहीं घटित होगा। वह आनंद तो दूसरे के व्यक्ति होने से आता है। दूसरा तो निर्मित हुआ था; तुमने उसके भीतर व्यक्ति को निर्मित किया था। उसने तुम्हारे भीतर वहीं किया था। तब कोई आब्जेक्ट्स नहीं था। तब दोनों दो जीवंत निजात थे। ऐसा नहीं था एक व् यक्ति था और दूसरा वस्तु। लेकिन ज्यों ही तुमने मालकियत की कि आनंद असंभव हो गया।
और मन सदा स्वामित्व करना चाहेगा। क्योंकि मन सदा लोभ की भाषा में सोचता है। सोचता है कि एक दिन जो आनंद मिला वह रोज-रोज मिलना चाहिए, इसलिए मुझे स्वामित्व जरूरी है। लेकिन यह आनंद ही तब घटता है जब स् वामित्व की बात नहीं रहती। और आनंद दूसरे के कारण नहीं, तुम्हारे कारण घटता है। यह स्मरण रहे कि आनंद तुम्हारे कारण घटता है। क्योंकि तुम दूसरे में इतना समाहित हो गए कि आनंद घटित हुआ।
यह घटना गुलाब के फूल के साथ भी घट सकती है। चट्टान या वृक्ष या
किसी भी चीज के साथ घट सकती है। एक बार तुम उस स्थिति से परिचित हो गए जिसमें यह आनंद घटता है। तो वह कहीं भी घट सकता है। यदि तुम जानते हो कि तुम नहीं हो ओ किसी गहन प्रेम में तुम दूसरे की और प्रवाहित हो जाए तो अहंकार तुम्हें छोड़ देता है। और अहंकार की उस अनुपस्थिति में आनंद फलित होता है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र
(तंत्र-सूत्र—भाग-1)
प्रवचन-13

□□□□□-□□□□□—□□□□-19

□□□□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□ □□□□:

‘’□□□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□‘’

चीन में ताओ वादियों ने सदियों से इस विधि को प्रयोग किया है। यह एक अद्भुत विधि है और बहुत सरल भी।

इसे प्रयोग करो : ‘’पाँवों या हाथों को सहारा दिए बिना सिर्फ नितंबों पर बैठो। अचानक केंद्रित हो जाओगे। ‘’

इसमें करना क्या है ? इसके लिए दो चीजें जरूरी है। एक तो बहुत संवेदनशील शरीर चाहिए , जो कि तुम्हारे पास नहीं है। तुम्हारा शरीर मुर्दा है। वह एक बोझ है। संवेदनशील बिलकुल नहीं है। इसलिए पहले तो उसे संवेदनशील बनाना होगा , अन्यथा यह विधि काम नहीं करेगी। मैं पहले तुम्हें बताऊंगा कि शरीर को संवेदनशील कैसे बनाया जाए —खासकर नितंब को।

तुम्हारी जो नितंब है वह तुम्हारे शरीर का सब से संवेदनशील अंग है। उसे संवेदनहीन होना पड़ता है। क्योंकि तुम सारा दिन नितंब पर ही बैठे रहते हो। अगर वह बहुत संवेदनशील हो तो अड़चन होगी। तुम्हारे नितंब को संवेदनहीन होना जरूरी है। पाँव के तलवे जैसी उसकी दशा है। निरंतर उन पर बैठे -बैठे पता नहीं चलता कि तुम नितंबों पर बैठे हो। इसके पहले क्या कभी तुमने उन्हें महसूस किया है ? अब कर सकते हो , लेकिन पहले कभी नहीं किया। और तुम पूरी जिंदगी उन पर ही बैठते हो —बिना जाने। उनका काम ही ऐसा है कि वे बहुत संवेदनशील नहीं हो सकते।

तो पहले तो उन्हें संवेदनशील बनाना होगा। एक बहुत सरल उपाय काम में लाओ। यह उपाय शरीर के किसी भी अंग के लिए काम आ सकता है। तब शरीर संवेदनशील हो जाएगा। एक कुर्सी पर विश्राम पूर्वक , शिथिल होकर बैठो। आंखे बंद कर लो और शिथिल होकर कुर्सी पर बैठो। और बाएं हाथ को दाहिने हाथ पर महसूस करो। कोई भी चलेगा। बाएं हाथ को महसूस करो। शेष शरीर को भूल जाओ। और बांए हाथ को महसूस करो।

तुम जितना ही उसे महसूस करोगे वह उतना ही भारी होगा। ऐसे बाएं हाथ को महसूस करते जाओ। पूरे शरीर को भूल जाओ। बाएं हाथ को ऐसे महसूस करो जैसे तुम बायां हाथ ही हो। हाथ ज्यादा से ज्यादा भारी होता जाए। जैसे - जैसे वह भारी होता जाए वैसे -वैसे उसे और भारी महसूस करो। और तब देखो कि हाथ में क्या हो रहा है।

जो भी उत्तेजना मालूम हो उसे मन में नोट कर लो —कोई उत्तेजना। कोई झटका, कोई हलकी गति , सबको मन में नोट करते जाओ। इस तरह रोज तीन सप्ताह तक प्रयोग जारी रखो। दिन के किसी समय भी दस -पंद्रह मिनट तक यह प्रयोग करो। बाएं हाथ को महसूस करो और सारे शरीर को भूल जाओ।

तीन सप्ताह के भीतर तुम्हें अपने एक नए बाएं हाथ का अनुभव होगा।
और वह इतना संवेदनशील होगा, इतना जीवंत। और तब तुम्हें हाथ की सूक्ष्म और नाजुक संवेदनाओं का भी पता चलने लगेगा।
जब हाथ सध जाए तो नितंब पर प्रयोग करो। तब यह प्रयोग करो: आंखें
बंद कर लो और भाव करो कि सिर्फ दो नितंब है। तुम नहीं है। अपनी सारी चेतना को नितंब पर जाने दो। यही कठिन नहीं है। अगर प्रयोग करो तो यह आश् चर्यजनक है, अद्भुत है। उससे शरीर में जा जीवंतता का भाव आता है वह अपने आप में बहुत आनंददायक है। और जब तुम्हें अपने नितंबों का एहसास होने लगे, जब वे खूब संवेदनशील हो जाएं। जब भीतर कुछ भी हो उसे महसूस करने लगो, छोटी सी हलचल, नन्हीं सी पीड़ा भी महसूस करने लगो। तब तुम निरीक्षण कर सकते हो। जान सकते हो। तब समझो कि तुम्हारी चेतना नितंबों से जुड़ गयी।
पहले हाथ से प्रयोग शुरू करो, क्योंकि हाथ बहुत संवेदनशील है। एक
बार तुम्हें यह भरोसा हो जाए कि तुम अपने हाथ को संवेदनशील बना सकते हो। तब वहीं भरोसा तुम्हें तुम्हारे नितंब को संवेदनशील बनाने में मदद करेगा। और तब इस विधि को प्रयोग में लाओ। इसलिए इस विधि को प्रयोग में लाओ। इसलिए इस विधि में प्रवेश करने के लिए तुम्हें कम से कम छह सप्ताह की तैयारी करनी चाहिए। तीन सप्ताह हाथ के साथ और तीन सप्ताह नितंबों के साथ। उन्हें ज्यादा से ज्यादा संवेदनशील बनाना है।
बिस्तर पर पड़े-पड़े शरीर को बिलकुल भूल जाओ, इतना ही याद रखो कि
सिर्फ दो नितंब बचे है। स्पर्श अनुभव करो—बिछावन की चादर का, सर्दी का या धीरे-धीरे आती हुई उष्णता का। अपने स्नान टब में पड़े-पड़े शरीर को भूल जाओ। नितंबों को ही स्मरण रखो।
उन्हें महसूस करो। दीवार से नितंब सटाकर खड़े हो जाओ और दीवार की ठंडक को महसूस करो। अपनी प्रेमिका, या पति के साथ नितंब से नितंब मिलाकर खड़े जाओ और एक-दूसरे को नितंबों के द्वारा महसूस करो। यह विधि महज तुम्हारे नितंब को पैदा करने के लिए है। उन्हें उस स्थिति में लाने के लिए जहां वे महसूस करने लगें।
और जब इस विधि को काम में लाओ: ‘’पाँवों या हाथों को सहारा दिए बिना.....।‘’
जमीन पर बैठो, पाँवों या हाथों के सहारे के बिना सिर्फ नितंबों के सहारे बैठो। इसमें बुद्ध का पद्मासन काम करेगा या सिद्घासन या कोई मामूली आसन भी चलेगा। लेकिन अच्छा होगा कि हाथ का उपयोग न करो। सिर्फ नितंबों के सहारे रहो। नितंबों पर ही बैठो। और तब क्या करो? आंखे बद कर लो और नितंबों का जमीन के साथ स्पर्श महसूस करो। और चूंकि नितंब संवेदनशील हो चूके है। इसलिए तुम्हें पता चलेगा कि एक नितंब जमीन को अधिक स्पर्श कर रहा है। उसका अर्थ हुआ कि तुम एक नितंब पर ज्यादा झुके हुए हो। और दूसरा जमीन से कम सटा हुआ है। और तब दूसरे नितंब पर बारी-बारी से झुकते जाओ और तब धीरे-धीरे संतुलन लाओ।
संतुलन लाने का अर्थ है कि तुम्हारे दोनों नितंब एक सा अनुभव करते
है। दोनों के ऊपर तुम्हारा भार बिलकुल समान हो। और तब तुम्हारे नितंब संवेदनशील हो जाएंगे तो यह संतुलन कठिन नहीं होगा। तुम्हें उसका एहसास होगा। और एक बार दोनों नितंब संतुलन में आ जाएं तो तुम केंद्र पर पहूंच गए। उस संतुलन में तुम अचानक अपने नाभि केंद्र पर पहुंच जाओगे और भीतर केंद्रित हो जाओगे। तब तुम अपने नितंबों को भूल जाओगे। अपने शरीर को भूल जाओगे। तब तुम अपने आंतरिक केंद्र पर स्थित होओगे।
इसी वजह से मैं कहता हूं कि केंद्र नहीं, केंद्रित होना महत्
वपूर्ण है। चाहे वह घटना ह्रदय में या सिर म या नितंब में घटित हो, उसका महत्व नहीं है। तुमने बुद्धों को बैठे देखा होगा। तुमने नहीं सोचा होगा

कि वे अपने नितंबों का संतुलन किए बैठे है। किसी मंदिर में जाओ और महावीर को बैठे देखो या बुद्ध को बैठे देखो, तुमने नहीं सोचा होगा कि यह बैठना नितंबों का संतुलन भर है। यह वही है। और जब असंतुलन न रहा तो संतुलन से तुम केंद्रित हो गए।

[illegible]
[illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-13

[illegible]-[illegible]—[illegible]-20

[illegible]:

''[illegible], [illegible]''

दूसरे ढंग से यह वही है। ''किसी चलते वाहन में **..........**।''

तुम रेलगाड़ी या बैलगाड़ी से यात्रा कर रहे हो। जब यह विधि विकसित हुई थी तब बैलगाड़ी ही थी। तो तुम एक हिंदुस्तानी सड़क पर—आज भी सडकें वैसी ही है—बैलगाड़ी में यात्रा कर रहे हो। लेकिन चलते हुए अगर तुम्हारा सारा शरीर हिल रहा है तो बात व्यर्थ हो गई।

''किसी चलते वाहन में लयवद्ध झुलने के कारण **........**।''

लयवद्ध ढंग से झूलों। इस बात को समझो, बहुत बारीक बात है। जब भी तुम किसी बैलगाड़ी या किसी वाहन में चलते हो तो तुम प्रतिरोध करते होते हो। बैलगाड़ी बाई तरफ झुकती है, लेकिन तुम उसका प्रतिरोध करते हो, तुम संतुलन रखने के लिए दाई तरफ झुक जाते हो। अन्यथा तुम गिर जाओगे। इसलिए तुम निरंतर प्रतिरोध कर रहे हो। बैल गाड़ी में बैठे-बैठे तुम बैलगाड़ी के हिलने-डुलते से लड़ रहे हो। वह इधर जाती है तो तुम उधर जाते हो। यही वजह है कि रेलगाड़ी में बैठे-बैठे तुम थक जाते हो। तुम कुछ करते नहीं हो तो थक क्यों जाते हो। अन्यथा ही तुम बहुत कुछ कर रहे हो। तुम निरंतर रेलगाड़ी से लड़ रहे हो, प्रतिरोध कर रहे हो।

प्रतिरोध मत करो, यह पहली बात है। अगर तुम इस विधि को प्रयोग में
लाना चाहते हो तो प्रतिरोध छोड़ दो। बल्कि गाड़ी की गति के साथ-साथ गति करो, उसकी गति के साथ-साथ झूलों। बैलगाड़ी का अंग बन जाओ, प्रतिरोध मत करो। रास्ते पर बैलगाड़ी जो भी करे, तुम उसके अंग बनकर रहो। इसी कारण यात्रा में बच्चे कभी नहीं थकते है।
पूनम हाल ही में लंदन से अपने दो बच्चों के साथ आई है। चलते समय वह भयभीत थी कि इतनी लंबी यात्रा के कारण बच्चें थ जाएंगे। बीमार हो जाएंगे। वह थक गई और वे हंसते हुए यहां पहुँचे। वह जब यहां पहुंची तो थक कर चूर-चूर हो गई थी। जब वह मेरे कमरे में प्रविष्ट हुई, वह थकावट से टूट रही थी। और दोनों बच्चें वहीं तुरंत खेलने लग गये। लंदन से बंबई अठारह घंटे की यात्रा है। लेकिन वे जरा भी थके नहीं। क्यों? क्योंकि अभी वे प्रतिरोध करना नहीं जानते है।
एक पियक्कड़ सारी रात बैलगाड़ी में यात्रा करेगा। और सुबह वह
ताजा का ताजा रहेगा। लेकिन तुम नहीं। कारण यह है कि पियक्कड़ भी प्रतिरोध नहीं करता है। वह गाड़ी के साथ गति करता है। वह लड़ता नहीं है। वह गाड़ी के साथ झूलता है, और एक हो जाता है।
‘’किसी चलते वाहन में लयवद्ध झुलने के द्वारा........।‘’
तो एक काम करो, प्रतिरोध मत करो। और दूसरी बात कि एक लय पैदा करो,
अपने हिलने डुलनें में लय पैदा करे, उसे लय में बांधों। उसमे एक छंद पैदा करो। सड़क को भूल जाओ। सड़क या सरकार को गालियां मत दो, उन्हें भी भूल जाओ। वैसे ही बैल और बैलगाड़ी को या गाड़ीवान को गाली मत दो। उन्हें भी भूल जाओ। आंखें बंद कर लो। प्रतिरोध मत करो। लयवद्ध ढंग से गति करो और अपनी गति में संगीत पैदा करो। उसे एक नृत्य बना लो।
‘’किसी चलते वाहन में लयवद्ध झुलने के द्वारा......अनुभव को प्राप्
त हो।‘’
सूत्र कहता है कि तुम्हें अनुभव प्राप्त हो जाएगा।
‘’या किसी अचल वाहन में....।‘’
यह मत पूछो कि बैलगाड़ी कहां मिलेगी। अपने को धोखा मत दो।
क्योंकि यह सूत्र कहता है: ‘’या किसी अचल वाहन में अपने को मंद से मंदतर होते अदृश्य वर्तुलों में झुलने देने से भी।‘’
यही बैठे-बैठे हुए वर्तुल में झूलों, घूमों। वर्तुल को छोटे से
छोटा किए जाओ—इतना छोटा कि तुम्हारा शरीर दृश्य से झूलता हुआ न रहे। लेकिन भीतर एक सूक्ष्म गति होती रहे। आंखे बंद कर लो। और बड़े वर्तुल से शुरू करे। आंखे बंद कर लो, अन्यथा जब शरीर रूक जाएगा तब तुम भी रूक जाओगे। आंखे बंद करके बड़े वर्तुल को छोटा, और छोटा किए चलो।
दृश्य रूप से तुम रूक जाओगे। किसी को नहीं मालूम होगा कि तुम अब भी हिल रहे हो। लेकिन भीतर तुम एक सूक्ष्म गति अनुभव करते रहोगे। अब शरीर नहीं चल रहा है। केवल मन चल रहा है। उसे भी मंद से मंदतर किए चलो। और अनुभव करो; वही केंद्रित हो जाओगे। किसी वाहन में, किसी चलते वाहन में एक अप्रतिरोध और लयबद्ध गति तुम्हें केंद्रित हो जाओगे।
गुरूजिएफ ने इन विधियों के लिए अनेक नृत्य निर्मित किए थे। वह इस
विधि पर काम करता था। वह अपने आश्रम में जितने नृत्यों का प्रयोग करता था वह सच में वर्तुल में झूमने से संबंधित थे। सभी नृत्य वर्तुल में चक् कर लगाने से संबंधित है। बाहर चक्कर लगाकर लगाना होता, भीतर होश पूर्ण रहना होता। फिर वे धीरे-धीरे वर्तुल को छोटा और छोटा किए जाते है। तब एक समय आता है कि शरीर ठहर जाता है। लेकिन भीतर मन गति करता रहता है।
अगर तुम लगातार बीस घंटे तक रेलगाड़ी में सफर करके घर लोटों और घर
में आंखे बंद करके देखो तो तुम्हें लगेगा। कि तुम अब भी गाड़ी में यात्रा कर रहे हो। शरीर तो ठहर गया है, लेकिन मन का लगता है कि यह गाड़ी

में ही है। वैसे ही इस विधि का प्रयोग करो। गुरजिएफ ने अद्भुत नृत्य पैदा किए और सुंदर नृत्य। इस सदी में उसने सचमुच चमत्कार किया है। वे चमत्कार सत्य साईं बाबा के चमत्कार नहीं थे। साई बाबा के चमत्कार तो कोई गली-गली फिरने वाला मदारी भी कर सकता है। लेकिन गुरूजिएफ ने असली चमत्कार पैदा किए। ध्यान पूर्ण नृत्य के लिए उसने सौ नर्तकों की एक मंडली बनाई। और पहली बार उसने न्यूयार्क के एक समूह के सामने उनका प्रदर्शन किया।
सौन नर्तक मंच पर गोल-गोल नाच रहे थे। उन्हें देखकर अनेक दर्शकों
के भी सिर घूमने लगे। ऐसे सफेद पोशाक में वे सौ नर्तक नृत्य करते थे। जब गुरूजिएफ हाथों से नृत्य का संकेत करता था तो वे नाचते थे और ज्यों ही वह रूकने का इशारा करता था, वे पत्थर की तरह ठहर जाते थे। और मंच पर सन् नाटा हो जाता था। वह रूकना दर्शकों के लिए था। नर्तकों के लिए नही; क् योंकि शरीर तो तुरंत रूक सकता है। लेकिन मन तब नृत्य को भीतर ले जाता है। और वहां नृत्य चलता रहता है।
उसे देखना भी एक सुंदर अनुभव था कि सौ लोग अचानक मृत मूर्तियों
जैसे हो जाते है। उसके दर्शकों में एक आघात पैदा होता था, क्योंकि सौ नृत्य, सुंदर और लयवद्ध नृत्य अचानक ठहरकर जाम हो जाते थे। तुम देख रहे हो, कि वे घूम रहे है, गोल-गोल नाच रह है और अचानक सब नर्तक ठहर गए। तब तुम्हारा विचार भी ठहर जाता है। न्यूयार्क में अनेक को लगा कि यह तो एक बेबूझ, रहस्यपूर्ण नृत्य है। क्योंकि उनके विचार भी उसके साथ तुरंत ठहर जाते थे। लेकिन नर्तकों के लिए नृत्य भीतर चलता रहता था। भीतर नृत्य के वर्तुल छोटे से छोटे होते जाते थे और अंत में वह केंद्रित हो जाते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि सारे नर्तक नाचते हुए मंच के किनारे पर पहुंच
गए। लोग सोचते थे कि अब गुरूजिएफ उन्हें रो देंगे। अन्यथा वे दर्शकों की भीड़ पर गिर पड़ेंगे। सौ नर्तक नाचते-नाचते मंच के किनारे पर पहुंच गए है। एक कदम और, और वे नीचे दर्शकों पर गिर पड़ेंगे। सारे दर्शक इस प्रतीक्षा में थे कि गुरूजिएफ रुको कहकर उन्हें वहीं रो देगा। लेकिन उसी क्षण गुरूजिएफ ने उनकी तरफ से मुख फैर लिया और पीठ कर के खड़ा हो कर अपना सिंगार चलाने लगा। और सौ नर्तकों की पूरी मंडली मंच से नीचे नंगे फर्श पर गिर पड़ी।
सभी दर्शक उठ खड़े हुए। उनकी चीख़ें निकल गई। गिरना इस धमाके के
साथ हुआ था कि उन्हें लगा कि अनेक दर्शकों के हाथ पैर टूट गए होंगे। लेकिन एक भी व्यक्ति को चोट नहीं लगा थी। किसी को खरोंच तक भी नहीं आई थी।
उन्होंने गुरूजिएफ से पूछा कि क्या हुआ कि एक आदमी भी घायल नहीं हुआ। जब कि नर्तकों का नीचे गिरना इतना बड़ा था। यह तो एक असंभव घटना मालूम होती है।
कारण इतना ही था कि उस क्षण नर्तक अपने शरीरों में नहीं थे। वे
अपने भीतर के वर्तुलों को मंदतर किए जा रहे थे। और जब गुरजिएफ ने देखा कि वे पूरी तरह अपने शरीरों को भूल गये है तब उसने उन्हें नीचे गिरने दिया।
तुम जब शरीर को बिलकुल भूल जाते हो तो कोई प्रतिरोध नहीं रह जाता
है। और हड्डी तो टूटती है प्रतिरोध के कारण। जब तुम गिरने लगते हो तो तुम प्रतिरोध करते हो, अपने को गिरने से रोकते हो। गिरते समय तुम गुरुत्वाकर्षण के विरूद्ध संघर्ष करते हो। और वही प्रतिरोध, वही संघर्ष समस्या बन जाता है। गुरुत्वाकर्षण नहीं, प्रतिरोध से हड्डी टूटती है। अगर तुम गुरूत्वाकर्षण के साथ सहयोग करो; उसके साथ-साथ गिरो, तो चोट लगने की कोई संभावना नहीं है।
सूत्र कहता है: ‘’किसी चलते वाहन में लयवद्ध झुलने के द्वारा,

अनुभव को प्राप्त हो। या किसी अचल वाहन में अपने को मंद से मंदतर होते अदृश्य वर्तुलों में झुलने देने से भी।‘’
यह तुम ऐसे भी कर सकते हो, वाहन की जरूरत नहीं है। जैसे बच्चें गोल-गोल घूमते है वैसे गोल-गोल घूमों। और जब तुम्हारा सिर घूमने लगे और तुम्हें लगे कि अब गिर जाऊँगा तो भी नाचना बंद मत करो। नाचते रहो। अगर गिर भी जाओ तो फिक्र मत करो। आँख बंद कर लो और नाचते रहो। तुम्हारा सिर चकर खानें लगेगा। और तुम गिर जाओगे। तुम्हारा शरीर गिर जाए तो भीतर देखो; भीतर नाचना जारी रहेगा। उसे महसूस करो। वह निकट से निकटतर होता जाएगा। और अचानक तुम केंद्रित हो जाओगे।
बच्चे इसका खूब मजा लेते है। क्योंकि इससे उन्हें बहुत ऊर्जा
मिलती है। लेकिन उनके मां-बाप उन्हें नाचने से रोकते है। जो कि अच्छा नहीं है। उन्हें नाचने देना चाहिए, उन्हें इसके लिए उत्साहित करना चाहिए। और अगर तुम उन्हें अपने भीतर के नाच से परिचित करा सको तो तुम उन्हें उसके द्वारा ध्यान सिखा दोगे।
वे इसमे रस लेते है। क्योंकि शरीर-शून्यता का भाव उनमें है। जब वे गोल-गोल नाचते है तो बच्चों को अचानक पता चलता है कि उनका शरीर तो नाचता है, लेकिन वे नहीं नाचते। अपने भीतर वे एक तरह से केंद्रित हो गए महसूस करते है। क्योंकि उनके शरीर और आत्मा में अभी दूरी नहीं बनी हे। दोनों के बीच अभी अंतराल है। हम सयाने लोगों को यह अनुभव इतनी आसानी से नहीं हो सकता।
जब तुम मां के गर्भ में प्रवेश करते हो तो तुरंत ही शरीर में नहीं प्रविष्ट हो जाते हो। शरीर में प्रविष्ट होने में समय लगता है। और जब बच्चा जनम लेता है तब भी वह शरीर से पूरी तरह नहीं जुड़ा होता है, उसकी आत्मा पूरी तरह स्थित नहीं होती है। दोनों के बीच थोड़ा अंतराल बना रहता है। यही कारण है कि कई चीजें बच्चा नहीं कर सकता। उसका शरीर तो उन् हें करने को तैयार है, लेकिन वह नहीं कर पाता।
अगर तुमने खयाल किया हो तो देखा होगा नवजात शिशु दोनों आंखों से
देखने में समर्थ नहीं होते है। वे सदा एक आँख से देखते है। तुमने गौर किया होगा कि जब बच्चे कुछ देखते है, निरीक्षण करते है, तो दोनों आंखों से नहीं करते। वे एक आँख से ही देखते है, उनकी वह आँख बड़ी हो जाती है। देखते क्षण उनकी एक आँख की पुतली फैल कर बड़ी हो जाती है। और दूसरी पुतली छोटी हो जाती है। बच्चे अभी स्थिर नहीं हुए है। उनकी चेतना अभी स् थिर नहीं है। उनकी चेतना अभी ढीली–ढीली है। धीरे-धीरे वह स्थिर होगी और तब वे दोनों आँख से देखने लगेंगे।
बच्चें अभी अपने और दूसरे के शरीर में फर्क करना नहीं जानते है।
यह कठिन है। वे अभी अपने शरीर से पूरी तरह नहीं जुडे है। यह जोड़ धीरे- धीरे आएगा।
ध्यान फिर से अंतराल पैदा करने की चेष्टा है। तुम अपने शरीर से
जुड़ गए हो, शरीर के साथ ठोस हो चुके हो। तभी तो तुम समझते हो कि मैं शरीर हूं। अगर फिर से एक अंतराल बनाया जा सके तो फिर समझने लगोगे कि मैं शरीर नहीं हूं। शरीर से परे कुछ हूं। इसलिए झूलना और गोल-गोल घूमना सहयोगी होते है। वे अंतराल पैदा करते है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र
(तंत्र-सूत्र—भाग-1)
प्रवचन-13

[illegible]-[illegible]—[illegible]-21

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]:

‘’[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]‘’

यह सूत्र कहता है : ‘’अपने अमृत भरे शरीर के किसी अंग को सुई से भेदों .....।‘’

तुम्हारा शरीर मात्र शरीर नहीं है, वह तुमसे भरा है, और यह तुम अमृत हो। अपने शरीर को भेदों, उसमें छेद करो। जब तुम अपने शरीर को छेदते, सिर्फ शरीर छिदता है। लेकिन तुम्हें लगता है कि तुम ही छिद गए। इसी से तुम्हें पीड़ा अनुभव होती है। और अगर तुम्हें यह बोध हो कि सिर्फ शरीर छिदा है, मैं नहीं छिदा हूं, तो पीड़ा के स्थान पर आनंद अनुभव करोगे।

सुई से भी छेद करने की जरूरत नहीं है। रोज ऐसी अनेक चीजें घटित होती है। जिन्हें तुम ध्यान के लिए उपयोग में ला सकते हो। या कोई ऐसी स्थिति निर्मित भी कर सकते हो।

तुम्हारे भीतर कहीं कोई पीड़ा हो रही है। एक काम करो। शेष शरीर को भूल जाओ, केवल उस भाग पर मन को एकाग्र करो जिसमे पीड़ा है। और तब एक अजीब बात अनुभव में आएगी। जब तुम पीड़ा वाले भाग पर मन को एकाग्र करोगे तो देखोगें कि वह भाग सिकुड़ रहा है, छोटा हो रहा है। पहले तुमने समझा था कि पूरे पाँव में पीड़ा है, लेकिन जब एकाग्र होकर उसे देखोगें तो मालूम होगा कि दर्द पाँव में नहीं है। वह तो अतिशयोक्ति है, दर्द सिर्फ घुटने में है।

और ज्यादा एकाग्र होओ और तुम देखोगें कि दर्द पूरे घुटने में नहीं है। एक छोटे से बिंदु में है। सिर्फ उस बिंदु पर एकाग्रता साधो, शेष शरीर को भूल जाओ। आंखें बंद रखो और एकाग्रता को बढ़ाए जाओ। और खोजों कि पीड़ा कहां है। पीड़ा का क्षेत्र सिकुड़ता जाएगा। छोटे से छोटा हो जाएगा। और एक क्षण आएगा जब वह मात्र सुई की नोक पर रह जाएगा। उस सुई की नोक पर भी एकाग्रता की नजर गड़ाओ, और अचानक वह नोक भी विदा हो जाएगी। और

तुम आनंद से भर जाओगे। पीड़ा की बजाएं तुम आनंद से भर जाओगे।
ऐसा क्यों होता है। क्योंकि तुम और तुम्हारे शरीर एक नहीं है। वे
दो है। अलग-अलग है। वह जो एकाग्र होता है। वह तुम हो। एकाग्रता शरीर पर होती है। शरीर विषय हे। जब तुम एकाग्र होते हो तो अंतराल बड़ा होता है। तादात्म्य टूटता है। एकाग्रता के लिए तुम भीतर सरक पड़ते हो। और यह दूर जाना अंतराल पैदा करता है।
जब तुम पीड़ा पर एकाग्रता साधते हो तो तुम तादात्म्य भूल जाते
हो। तुम भूल जाते हो कि मुझे पीड़ा हो रही है। अब तुम द्रष्टा हो और पीड़ा कहीं दूसरी जगह है। तुम अब पीड़ा को देखने वाले हो, भोगने वाले नहीं। भोक्ता के द्रष्टा में बदलने के कारण अंतराल पैदा होता है। और जब अंतराल बड़ा होता है तो अचानक तुम शरीर को बिलकुल भूल जाते हो। तुम्हें सिर्फ चेतना का बोध होता है।
तो तुम इस विधि का प्रयोग भी कर सकते हो।
‘’अपने अमृत भरे शरीर के किसी अंग को सुई से भेदों, और भद्रता के
साथ उस भेदन में प्रवेश करो......।‘’
अगर कोई पीड़ा हो तो पहले तुम्हें उसके पूरे क्षेत्र पर एकाग्र
होना होगा। फिर धीरे-धीर वह क्षेत्र घटकर सुई की नोक के बराबर रह जाएगा। लेकिन पीड़ा की प्रतीक्षा क्या करनी। तुम एक सुई से काम ले सकते हो। शरीर के किसी संवेदनशील अंग पर सुई चुभोओ। पर शरीर में ऐसे भी कई स्थल है जो मृत है, उनसे काम नहीं चलेगा।
तुमने शरीर के इन मृत स्थलों के बारे में नहीं सूना होगा, किसी
मित्र के हाथ में एक सुई दे दो और तुम बैठ जाओ और मित्र से कहो कि वह तुम् हारी पीठ में कई स्थलों पर सुई चुभाएं। कई स्थलों पर तुम्हें पीड़ा का एहसास नहीं होगा। तुम मित्र से कहोगे कि तुमने सुई अभी नहीं चुभोई है, मुझे दर्द नहीं हो रहा है। वे ही मृत स्थल है। तुम्हारे गाल पर ही ऐसे दो मृत स्थल है जिनकी जांच की जा सकती है।
अगर तुम भारत के गांव में जाओ तो देखोगें कि धार्मिक त्योहारों के
समय कुछ लोग अपने गालों को तीन से भेद देते है। वह चमत्कार जैसा मालूम होता है। लेकिन चमत्कार है नहीं । गाल पर दो मृत स्थल है। अगर तुम उन् हें छेदों तो न खून निकलेगा। और न पीडा ही होगी। तुम्हारी पीठ में तो ऐसे हजारों मृत स्थल है। वहां पीड़ा नहीं होती।
तो तुम्हारे शरीर में दो तरह के स्थल है—संवेदनशील, जीवित स्थल
और मृत स्थल। कोई संवेदनशील स्थल खोजों जहां तुम्हें जरा से स्पर्श का भी पता चल जायेगा। तब उसमे सुई चुभोकर चुभन में प्रवेश कर जाओ। वही असली बात है। वही ध्यान है। और भद्रता के साथ भेदन म प्रवेश कर जाओ। जैसे- जैसे सुई तुम्हारी चमड़ी के भीतर प्रवेश करेगी और तुम्हें पीड़ा होगी, वैसे-वैसे तुम भी उसमे प्रवेश करते जाओ। यह मत देखो कि तुम्हारे भीतर पीड़ा प्रवेश कर रही है। पीड़ा को मत देखो, उसके साथ तादम्यता करो। सुई के साथ, चुभन के साथ तुम भी भीतर प्रवेश करो। आंखें बंद कर लो। पीड़ा का निरीक्षण करो। जैसे पीड़ा भीतर जाए वैसे तुम भी अपने भीतर जाओ। चुभाती हुई सुई के साथ तुम्हारा मन आसानी से एकाग्र हो जाएगा। पीड़ा के तीव्र पीड़ा के उस बिंदु को गोर से देखो, वही भद्रता के साथ भेदन म प्रवेश करना हुआ।
‘’और आंतरिक शुद्धि को उपलब्ध होओ।‘’
अगर तुमने निरीक्षण करते हुए, तादात्म्य ने करते हुए अलग दूर खड़
रहते हुए, बिना यह समझे हुए कि पीड़ा तुम्हें भेद रही है। बल्कि यह देखते हुए कि सुई शरीर को भेद रही है। और तुम द्रष्टा हो प्रवेश किया तो तुम आंतरिक शुद्धता को उपल्बध हो जाओगे। तब आंतरिक निर्दोषता तुम पर प्रकट हो जाएगी। तब पहली बार तुम्हें बोध होगा कि मैं शरीर नहीं हूं।

और एक बार तुमने जाना कि मैं शरीर नहीं हूं, तुम्हारा सारा जीवन आमूल बदल जाएगा। क्योंकि तुम्हारा सारा जीवन शरीर के इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहता है। एक बार जान गए कि मैं शरीर नहीं हूं, तुम फिर इस जीवन को नहीं ढो सकते। उसका केंद्र ही खो गया। जब तुम शरीर नहीं रहे तो तुम्हें दूसरा जीवन निर्मित करना पड़ेगा। वही जीवन संन्यासी का जीवन है। यह और ही जीवन होगा। क्योंकि अब केंद्र ही और होगा। अब तुम संसार में शरीर की भांति नहीं, बल्कि आत्मा की भांति रहोगे।

जब तक तुम शरीर की तरह रहते हो तब तक तुम्हारा संसार भौतिक उपलब्धियों का, लोभ, भोग, वासना और कामुकता का संसार होगा। और वह संसार शरीर प्रधान संसार होगा। लेकिन जब जान लिया है कि मैं शरीर नहीं हूं तो तुम्हारा सार संसार विलीन हो जाता है। तुम अब उसे सम्हालकर नहीं रख सकते हो। तब एक दूसरा संसार उदय होगा जो आत्मा के इर्द-गिर्द होगा। वह संसार करूणा प्रेम, सौंदर्य, सत्य, शुभ और निर्दोषता का संसार होगा। केंद्र हट गया वह अब शरीर में नहीं है। अब केंद्र चेतना में है।

[illegible]

[illegible]

([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)

[illegible]-13

[illegible]-[illegible]—[illegible]-22

[illegible]:

‘‘[illegible], [illegible], [illegible]‘‘

तुम अपने अतीत को याद कर रहे हो। चाहे वह कोई भी घटना हो; तुम्हारा बचपन, तुम्हारा प्रेम, पिता या माता की मृत्यु, कुछ भी हो सकता है। उसे देखो। लेकिन उससे एकात्म मत होओ। उसे ऐसे देखो जैसे वह किसी और जीवन में घटा है। उसे ऐसे देखो जैसे वह घटना पर्दे पर फिर घट रही हो, फिल्माई जा रही हो, और तुम उसे देख रहे हो—उससे अलग, तटस्थ साक्षी की तरह।

उस फिल्म में, कथा में तुम्हारा बीता हुआ रूप फिर उभर जाएगा। यदि

तुम अपनी कोई प्रेम-कथा स्मरण कर रहे हो, अपने प्रेम की पहली घटना, तो तुम अपनी प्रेमिका के साथ स्मृति के पर्दे पर प्रकट होओगे और तुम्हारा अतीत का रूप प्रेमिका के साथ उभर आएगा। अन्यथा तुम उसे याद न कर सकोगे। अपने इस अतीत के रूप से भी तादात्म्य हटा लो। पूरी घटना को ऐसे देखो मानो कोई दूसरा पुरूष किसी दूसरी स्त्री को प्रेम कर रहा हो। मानो पूरी कथा से तुम्हारा कुछ लेना-देना नहीं है। तुम महज दृष्टा हो।
यह विधि बहुत-बहुत बुनियादी है। इसे बहुत प्रयोग में लाया गया— विशेषकर बुद्ध के द्वारा। और इस विधि के अनेक प्रकार है। इस विधि के प्रयोग का अपना ढंग तुम खुद खाज ले सकते हो। उदाहरण के लिए, रात में जब तुम सोने लगो, गहरी नींद में उतरने लगो तो पूरे दिन के अपने जीवन को याद करो। इस याद की दिशा उलटी होगी, यानी उसे सुबह से न शुरू कर वहां से शुरू करो जहां तुम हो। अभी तुम बिस्तरे में पड़े हो तो बिस्तर में लेटने से शुरू कर पीछे लोटों। और इस प्रकार कदम-कदम पीछे चलकर सुबह की उस पहली घटना पर पहु्ंचो जब तुम नींद से जागे थे अतीत स्मरण के इस क्रम में सतत याद रखो कि पूरी घटना से तुम पृथक हो, अछूते हो।
उदाहरण के लिए, पिछले पहर तुम्हारा किसी ने अपमान किया था; तुम
अपने रूप को अपमानित होते देखो, लेकिन द्रष्टा बने रहो। तुम्हें उस घटना में फिर नहीं उलझना है, फिर क्रोध नहीं करना है। अगर तुमने क्रोध किया तो तादात्म्य पैदा हो गया। तब ध्यान का बिंदु तुम्हारे हाथ से छूट गया।
इसलिए क्रोध मत करो। वह अभी तुम्हें अपमानित नहीं कर रहा है। वह तुम्हारे पिछले पहर के रूप को अपमानित कर रहा है। वह रूप अब नहीं है। तुम तो एक बहती नदी की तरह हो जिसमें तुम्हारे रूप भी बह रहे है। बचपन में तुम्हारा एक रूप था, अब वह नहीं रहा। वह जा चुका। नदी की भांति तुम निरंतर बदलते जा रहे हो।
रात में ध्यान करते हुए जब दिन की घटनाओं को उलटे क्रम में, प्रतिक्रम में याद करो तो ध्यान रहे कि तुम साक्षी हो, कर्ता नहीं। क्रोध मत करो। वैसे ही जब तुम्हारी कोई प्रशंसा करे तो आह्लादित मत होओ। फिल्म की तरह उसे भी उदासीन होकर देखो।
प्रतिक्रमण बहुत उपयोगी है, खासकर उनके लिए जिन्हें अनिद्रा की
तकलीफ हो। अगर तुम्हें ठीक से नींद आती है। अनिद्रा का रोग है। तो यह प्रयोग तुम्हें बहुत सहयोगी होगा। क्यों? क्योंकि यह मन को खोलने का, निर्ग्रंथ करने का उपाय है। जब तुम पीछे लौटते हो तो मन की तहें उघड़ने लगती है। सुबह में जैसे घड़ी में चाबी देते हो वैसे तुम अपने मन पर भी तहें लगाता शुरू करते हो। दिन भर में मन पर अनेक विचारों और घटनाओं के संस्कार जब जाते है; मन उनसे बोझिल हो जाता है। अधूरे और अपूर्ण संस्कार मन में झूलते रहते है। क्योंकि उनके घटित होते समय उन्हें देखने का मौका नहीं मिला था।
इस लिए रात में फिर उन्हें लौटकर देखो—प्रतिक्रम में। यह मन के निर्ग्रंथ की, सफाई की प्रक्रिया है। और इस प्रक्रिया में जब तुम सुबह बिस्तर से जागते की पहली घटना तक पहुंचोगे तो तुम्हारा मन फिर से उतना ही ताजा हो जाएगा। जितना ताजा बह सुबह था। और तब तुम्हें वैसी नींद आएगी जैसी छोटे बच्चे को आती है।
तुम इस विधि को अपने पूरे अतीत जीवन में जाने के लिए भी उपयोग कर
सकते हो। महावीर ने प्रतिक्रमण की इस विधि का बहुत उपयोग किया।
अभी अमेरिका में एक आंदोलन है, जिसे डायनेटिक्स कहते है। वे इसी
विधि का उपयोग करता है। यह रोग मानसिक मालूम होता है। तो उसके लिए क्या किया जाए। यदि किसी को कहां कि तुम्हारा रोग मानसिक मालूम होता है। तो उससे बात बनने की बजाएं बिगड़ती है। यह सुनकर कि मेरा रोग मानसिक है।

किसी भी व्यक्ति को बुरा लगता है। तब उसे लगता है कि अब कोई उपाय नहीं है। और वह बहुत अहसास महसूस करता है।
प्रतिक्रमण एक चमत्कारिक विधि है। अगर तुम पीछे लौटकर अपने मन की गाँठें खोलों तो तुम धीरे-धीरे उस पहले क्षण को पकड़ सकते हो जब यह रोग शुरू हुआ था। उस क्षण को पकड़कर तुम पता चलेगा कि यह रोग अनेक मानसिक घटनाओं और कारणों से निर्मित हुआ है। प्रतिक्रमण से वे कारण फिर से प्रकट हो जाते है।
अगर तुम उसी क्षण से गुजर सको जिसमे पहले पहल इस रोग ने तुम्हें
घेरा था, अचानक तुम्हें पता चल जाएगा। कि किन मनोवैज्ञानिक कारणों से यह रोग बना था। तब तुम्हें कुछ करना नहीं है। सिर्फ उन मनोवैज्ञानिक कारणों को बोध में ले आना है। इस प्रतिक्रमण से अनेक रोगों की ग्रंथियां टूट जाती है। और अंतत: रोग विदा हो जाता है। जिन ग्रंथियों को तुम जान लेते हो वे ग्रंथियां विसर्जित हो जाती है। और उनसे बने रोग समाप्त हो जाते है।
यह विधि गहरे रेचन की विधि है। अगर तुम इसे रोज कर सको तो तुम्हें
एक नया स्वास्थ और एक नई ताजगी का अनुभव होगा। और अगर हम अपने बच्चों को रोज इसका प्रयोग करना सिखा दें तो उन्हें उनका अतीत कभी बोझल नहीं बना सकेगा। तब बच्चों को अपने अतीत में लौटने की जरूरत नहीं रहेगी। वे सदा यहां और अब, यानी वर्तमान में रहेंगे।
तब उन पर अतीत का थोड़ा सा भी बोझ नहीं रहेगा। वे सदा स्वच्छ और ताजा रहेंगे।
तुम इसे रोज कर सकते हो। पूरे दिन को इस तरह उलटे क्रम से पुन:
खोलकर देख लेने से तुम्हें नई अंत दृष्टि प्राप्त होती है। तुम्हारा मन तो चाहेगा कि यादों को सिलसिला सुबह से शुरू करें। लेकिन उससे मन निर्ग्रंथक नहीं होता। उलटे पूरी चीज दुहरा कर और मजबूत हो जाती है। इस लिए सुबह से शुरू करना गलत होगा।
भारत में ऐसे अनेक तथाकथित गुरु है। जो सिखाते है कि पूरे दिन का पुनरावलोकन करो और इस प्रक्रिया को सुबह से शुरू करो। लेकिन यह गलत और नुकसानदेह है। उससे मन मजबूत होगा और अतीत का जाल बड़ा और गहरा हो जाएगा। इसलिए सुबह से श्याम की तरफ कभी मत चलो, सदा पीछे की और गति करो। और तभी तुम मन को पूरी तरह निर्ग्रंथ कर पाओगे, खाली कर पाओगे। स्वच्छ कर पाओगे।
मन तो सुबह से शुरू करना चाहेगा। क्योंकि वह आसान है। मन उस क्रम
को भलीभाँति जानता है। उसमें कोई अड़चन नहीं है। प्रतिक्रमण में भी मन उछल कर सुबह पर चला जाता है। और फिर आगे चला चलेगा। वह गलत है, वैसा मत करो। सजग हो जाओ और प्रतिक्रम से चलो।
इसमें मन को प्रशिक्षित करने के लिए अनय उपाय भी काम में लाए जा
सकते है। सौ से पीछे की तरह गिनना शुरू करो—निन्यानवे, अट्ठानवे, सत्तानवे,। प्रतिक्रम से सौ से एक तक गिनो। इसमे भी अड़चन होगी। क् योंकि मन की आदत है एक से सौ कि और जाने की है। सौ से एक की और जाने की नहीं। इसी क्रम में घटनाओं को पीछे लौटकर स्मरण करना है।
क्या होगा? पीछे लौटते हुए मन को फिर से खोलकर देखते हुए तुम
साक्षी हो जाओगे। अब तुम उन चीजों को देख रहे हो जो कभी तुम्हारे साथ घटित हुई थी, लेकिन अब तुम्हारे साथ घटित नहीं हो रही है। अब तो तुम सिर्फ साक्षी हो, और वे घटनाएं मन के पर्दे पर घटित हो रही है।
अगर इस ध्यान को रोज जारी रखो तो किसी दिन अचानक तुम्हें दुकान पर
या दफ्तर में काम करते हुए ख्याल होगा कि क्यों नहीं अभी घटने वाली घटनाओं के प्रति भी साक्षी भाव रख जाए। अगर समय में पीछे लौटकर जीवन की घटनाओं को देखा जा सकता है। उनका गवाह हुआ जा सकता है। दिन में किसी ने

तुम्हारा अपमान किया थ और तुम बिना क्रोधित हुए उस घटना को फिर से देख सकते हो—तो क्या कारण है कि उस घटनाओं को जो अभी घट रही है, नहीं देखा जा सकता है। कठिनाई क्या है?
कोई तुम्हारा अपमान कर रहा है। तुम अपने को घटना से पृथक कर सकते
हो। और देख सकते हो। कि कोई तुम्हारा अपमान कर रहा है। तुम यह भी देख सकते हो कि तुम अपने शरीर से, अपने मन से और उससे भी जो अपमानित हुआ है। पृथक हो। तुम सारी चीज के गवाह हो सकते हो। और अगर ऐसे गवाह हो सको तो फिर तुम्हें क्रोध नहीं होगा। क्रोध तब असंभव हो जायेगा। क्रोध तो तब संभव होता है जब तुम तादात्म्य करते हो। अगर तादात्म्य नहीं है तो क्रोध असंभव है। क्रोध का अर्थ तादात्म्य है।
यह विधि कहती है कि अतीत की किसी घटना को देखो, उसमें तुम्हारा रूप उपस्थित होगा। यह सूत्र तुम्हारी नहीं, तुम्हारे रूप की बात करता है। तुम तो कभी वहां थे ही नहीं। सदा किसी घटना में तुम्हारा रूप उलझता है। तुम उसमे नहीं होते। जब तुम मुझे अपमानित करते हो तो सच में तुम मुझे अपमानित नहीं करते। तुम मेरा अपमान कर ही नहीं सकते। केवल मेरे रूप का अपमान कर सकते हो। मैं जो रूप हूं तुम्हारे लिए तो उसी की उपस्थिति अभी है और तुम उसे अपमानित कर सकत हो। लेकिन मैं अपने को अपने रूप से पृथक कर सकता हूं।
यही कारण है कि हिंदू-रूप से अपने को पृथक करने की बात पर जोर देता
है। तुम तुम्हारा नाम रूप नहीं हो, तुम वह चैतन्य हो जो नाम रूप को जानता है। और चैतन्य पृथक है, र्स्वथा पृथक है।
लेकिन यह कठिन है। इसलिए अतीत से शुरू करो। वह सरल है। क्योंकि
अतीत के साथ कोई तात्कालिकता का भाव नहीं रहता है। किसी ने बीस साल पहले तुम्हें अपमानित किया था, उसमें तात्कालिकता का भा अब कैसे होगा। वह आदमी मर चुका होगा और बात समाप्त हो गई है। यह एक मुर्दा घटना है। अतीत से याद की हुई। उसके प्रति जागरूक होना आसान है। लेकिन एक बार तुम उसके प्रति जागना सीख गए तो अभी और यहां होने वाली घटनाओं के प्रति भी जाना हो सकता है। लेकिन अभी और यहां से आरंभ करना कठिन है। समस्या इतनी तात् कालिक है, निकट है, जरूरी है कि उसमे गति करने के लिए जगह ही कहां है। थोड़ा दूरी बनाना और घटना से पृथक होना कठिन बात है।
इसीलिए सूत्र कहता है कि अतीत से आरंभ करो। अपने ही रूप को अपने से
अलग देखो और उसके द्वारा रूपांतरित हो जाओ।
इसके द्वारा रूपांतरित हो जाओगे। क्योंकि यह निर्ग्रंथन है—एक
गहरी सफाई है, धुलाई है। और तब तुम जानोंगे कि समय में जो तुम्हारा शरीर है, तुम्हारा मन है। अस्तित्व है, वह तुम्हारा वास्तविक यथार्थ नहीं है। वह तुम्हारा सत्य नहीं है। सार-सत्य सर्वथा भिन्न है। उस सत्य से चीजें आती जाती है। और सत्य अछूता रह जाता है। तुम अस्पर्शित रहते हो। निर्दोष रहते हो, कुँवारे रहते हो। सब कुछ गुजर जाता है। पूरा जीवन गुजर जाता है। शुभ और अशुभ सफलता और विफलता, प्रशंसा और निंदा, सब कुछ गुजर जाता है। रोग और स्वास्थ्य, जवानी और बुढ़ापा, जन्म और मृत्यु, सब कुछ व्यतीत हो जाता है। और तुम अछूते रहते हो।
लेकिन इस अस्पर्शित सत्य को कैसे जाना जाए?
इस विधि का वही उपयोग है। अपने अतीत से आरंभ करो। अतीत को देखने के
लिए अवकाश उपलब्ध है। अंतराल उपलब्ध है, परिप्रेक्ष्य संभव है। या भविष्य को देखो, भविष्य का निरीक्षण करो। लेकिन भविष्य को देखना भी कठिन है। सिर्फ थोडे से लोगों के लिए भविष्य को देखना कठिन नहीं है। कवियों और कल्पनाशील लोगों के लिए भविष्य को देखना कठिन नहीं है। वे भविष्य को ऐसे देख सकते है जैसे वे किसी यथार्थ को देखते है। लेकिन सामान्यत: अतीत को उपयोग में लाना अच्छा है। तुम अतीत में देख सकते हो।

जवान लोगों के लिए भविष्य में देखना अच्छा रहता है। उनके लिए
भविष्य में झांकना सरल है, क्योंकि वे भविष्योन्मुख होते है। बूढे लोगों के लिए मृत्यु के सिवाय कोई भविष्य नहीं है। वे भविष्य में नहीं देख सकते है। वे भयभीत है। यही वजह है कि बूढ़े लोग सदा अतीत के संबंध में विचार करते है। वे पुन:-पुन: अपने अतीत की स्मृति में घूमते रहते है। लेकिन वे भी वही भूल करते है। वे अतीत से शुरू कर वर्तमान की और आते है। यह गलत है। उन्हें प्रतिक्रमण करना चाहिए।
अगर वे बार-बार अतीत में प्रतिक्रम से लौट सकें तो धीरे-धीरे उन्
हें महसूस होगा कि उनका सारा अतीत बह गया। तब कोई आदमी अतीत से चिपके बिना, अटके बिना मर सकता है। अगर तुम अतीत को अपने से चिपकने न दो, अतीत में न अटकों, अतीत को हटाकर मर सको। तब तुम सजग मरोगे। तब तुम पूरे बोध में, पूरे होश में मरोगे। और तब मृत्यु तुम्हारे लिए मृत्यु नहीं रहेगी। बल्कि वह अमृत के साथ मिलन में बदल जाएगी।
अपनी पूरी चेतना को अतीत के बोझ से मुक्त कर दो। उससे अतीत के मैल
को निकालकर उसे शुद्ध कर दो। और तब तुम्हारा जीवन रूपांतरित हो जाएगा। प्रयोग करो। यह उपाय कठिन नहीं है। सिर्फ अध्यवसाय की, सतत चेष्टा
की जरूरत है। विधि में कोई अंतर्भूत कठिनाई नहीं है। यह सरल है। और तुम आज से ही इसे शुरू कर सकते हो। आज ही रात अपने बिस्तर में लेट कर शुरू करो, और तुम बहुत सुंदर और आनंदित अनुभव करोगे। पूरा दिन फिर से गुजर जाएगा।
लेकिन जल्दबाजी मत करो। धीरे-धीर पूरे क्रम से गूजरों, ताकि कुछ
भी दृष्टि से चूके नहीं। यह एक आश्चर्यजनक अनुभव है। क्योंकि अनेक ऐसी चीजें तुम्हारी निगाह के सामने आएँगी जिन्हें दिन में तुम चुक गये थे। दिन में बहुत व्यस्त रहने के कारण तुम बहुत सुंदर चीजें चूकते हो, लेकिन मन उन्हें भी अपने भीतर इकट्ठा करता जाता है। तुम्हारी बेहोशी में भी मन उनको ग्रहण करता जाता है।
तुम सड़क पर जा रहे हो। और कोई आदमी गा रहा था। हो सकता है कि तुमने उसके गीत पर कोई ध्यान नहीं दिया हो। तुम्हें यह भी बोध न हुआ हो कि तुमने उसकी आवाज भी सुनी। लेकिन तुम्हारे मन ने उसके गीत को भी सुना और अपने भीतर स्मृति में रख लिया था अब वह गीत तुम्हें पकड़े रहेगा। वह तुम्हारी चेतना पर अनावश्यक बोझ बना रहेगा।
तो पीछे लौट कर देखो, लेकिन बहुत धीरे-धीरे उसमे गति करो। ऐसा
समझो कि पर्दे पर बहुत धीमी गति से कोई फिल्म दिखायी जा रही है। ऐसे ही अपने बीते दिन की छोटी से छोटी घटना को गौर से देखो, उसकी गहराई में जाओ। और तब तुम पाओगे कि तुम्हारा दिन बहुत बड़ा था। वह सचमुच बड़ा था। क् योंकि मन को उसमे अनगिनत सूचनाएं मिली और मन ने सबको इकट्ठा कर लिया। तो प्रतिक्रमण करो। धीरे-धीरे तुम उस सबको जानने में सक्षम हो
जाओगे। जिन्हें तुम्हारे मन ने दिन भर में अपने भीतर इकट्ठा कर लिया था। वह टेप रिकार्डर जैसा है। और तुम जैसे-जैसे पीछे जाओगे। मन का टेप पुछता जाएंगा। साफ होता जाएगा। और तब तक तुम सुबह की घटना के पास पहुंचोगे तुम्हें नींद आ जाएगी। और तब तुम्हारी नींद की गुणवता और होगी। वह नींद भी ध्यान पूर्ण होगी।
और दूसरे दिन सुबह नींद से जागने पर अपनी आंखों को तुरंत मत
खोलों। एक बार फिर रात की घटनाओं में प्रतिक्रम से लोटों। आरंभ में यह कठिन होगा। शुरू में बहुत थोड़ी गति होगी। कभी कोई स्वप्न का अंश, उस स् वप्न का अंश जिसे ठीक जागने के पहले तुम देख रहे थे। दिखाई पड़ेगा। लेकिन धीरे-धीरे तुम्हें ज्यादा बातें स्मरण आने लगेंगी। तुम गहरे प्रवेश करने लगोंगे। और तीन महीने के बाद तुम समय के उस छोर पर पहूंच जाओगे। जब तुम्हें नींद लगी थी। जब तुम सो गए थे।

और अगर तुम अपनी नींद में प्रतिक्रम से गहरे उतर सके तो तुम्हारी
नींद और जागरण की गुणवता बिलकुल बदल जाएगी। तब तुम्हें सपने नहीं आएँगे, तब सपने व्यर्थ हो जायेंगे। अगर दिन और रात दोनों में तुम प्रतिक्रमण कर सके तो फिर सपनों की जरूरत नहीं रहेगी।
अब मनोवैज्ञानिक कहते है कि सपना भी मन को फिर से खोलने, खाली करने
की प्रक्रिया है। और अगर तुम स्वयं यह काम प्रतिक्रमण के द्वारा कर लो तो स्वप्न देखने जरूरत ही नहीं रहेगी। सपना इतना ही तो करता है कि जो कुछ मन में अटका है। अधूरा पडा था, अपूर्ण था, उसे वह पूरा कर देता है। तुम सड़क से गुजर रहे थे और तुमने एक सुंदर मकान देखा और तुम्हारे
भीतर उस मकान को पाने की सूक्ष्म वासना पैदा हो गई। लेकिन उस समय तुम दफ्तर जा रहे थे। और तुम्हारे पास दिवा-स्वप्न देखने का समय नहीं था। तुम उस कामना को टाल गये। तुम्हें यह पता भी नहीं चला कि मन ने मकान को पाने की कामना निर्मित कर ली है। लेकिन यह कामना अब भी मन के किसी कोने में अटकी पड़ी है। और अगर तुमने उसे वहां से नहीं हटाया तो वह तुम्हारी नींद मुश्किल कर देगी।
नींद की कठिनाई यही बताती है कि तुम्हारा दिन अभी भी तुम पर हावी
है और तुम उससे मुक्त नहीं हो पा रहे हो। तब रात में तुम स्वप्न देखेंगे कि तुम उस मकान के मालिक हो गए हो, और अब तुम उस मकान में वास कर रहे हो। और जिस क्षण यह स्वप्न घटित होता है। क्योंकि सपने तुम्हारी अधूरी चीजों को पूरा करने में सहयोगी होते है।
और ऐसी चीजें है जो पूरी नहीं हो सकती। तुम्हारा मन अनर्गल कामनाए
किए जाता है। वे यथार्थ में पूरी नहीं हो सकती। तो क्या किया जाए? वे अधूरी कामनाए तुम्हारे भीतर बनी रहती है। और तुम आशा किए जाते हो। सोच विचार किए जाते हो। तो क्या किया जाए? तुम्हें एक सुंदर स्त्री दिखाई देती है। और तुम उसके प्रति आकर्षित हो गए। अब उसे पाने की कामना तुम् हारे भीतर पैदा हो गई। जो हो सकता है संभव न हो। हो सकता है वह स्त्री तुम्हारी तरफ ताकना भी पसंद न करे। तब क्या हो?
स्वप्न यहां तुम्हारी सहायता करता है। स्वप्न में तुम उस स्त्री
को पा सकते हो। और तब तुम्हारा मन हलका हो जाएगा। जहां तक मन का संबंध है, स्वप्न और यथार्थ में कोई फर्क नहीं है। मन के तल पर क्या फर्क? किसी स्त्री को यथार्थत: प्रेम करने और सपने में प्रेम करने में क्या फर्क है?
कोई फर्क नहीं है। अगर फर्क है तो इतना ही कि स्वप्न यथार्थ से ज्
यादा सुंदर होगा। स्वप्न की स्त्री कोई अड़चन नहीं खड़ी करेगी। स्वप्न तुम्हारा और उसमे तुम जो चाहे कर सकते हो। वह स्त्री तुम्हारे लिए कोई बाधा नहीं पैदा करेगी। वह तो है ही नहीं, तुम ही हो। वहां कोई अड़चन नहीं है। तुम जो चाहो कर सकते हो, मन के लिए कोई भेद नहीं है। मन स्वप्न और यथार्थ में कोई भेद नहीं कर सकता है।
उदाहरण के लिए तुम्हें यदि एक साल के लिए बेहोश करके रख दिया जाए
और उस बेहोशी मे तुम सपने देखते रहो। तो एक साल तक तुम्हें बिलकुल पता नहीं चलेगा कि जो भी तुम देख रहे हो वह सपना है। सब यथार्थ जैसा लगेगा। और स्वप्न साल भर चलता रहेगा। मनोवैज्ञानिक कहते है कि अगर किसी व्यक् ति को सौ साल के लिए कौमा में रख दिया जाए तो वह सौ साल तक सपने देखता रहेगा। और उसे क्षण भर के लिए भी संदेह नहीं होगा। कि जो मैं कर रहा हूं वह स्वप्न है। और यदि कोमा में ही मर जाएगा तो उसे कभी पता नहीं चलेगा कि मेरा जीवन एक स्वप्न था। सच नहीं था।
मन के लिए कोई भेद नहीं है। सत्य और स्वप्न दोनों समान है। इसलिए
मन अपने को सपनों में भी निर्ग्रंथ कर सकता है। अगर इस विधि का प्रयोग करो तो सपना देखने की जरूरत नहीं है। तब तुम्हारी नींद की गुणवता ही

पूरी तरह से बदल जायेगी। क्योंकि सपनों की अनुपस्थिति में तुम अपने अस् तित्व की आत्यंतिक गहराई में उतर सकोगे। और तब नींद में भी तुम्हारा बोध कायम रहेगा।
कृष्ण गीता में यही बात कह रहे है कि जब सभी गहरी नींद में होते है
तो योगी जागता रहता है। इसका यह अर्थ नहीं कि योगी नहीं सोता। योगी भी सोता है। लेकिन उसकी नींद का गुणधर्म भिन्न है। तुम्हारी नींद ऐसी है जैसे नशे की बेहोशी होती है। योगी की नींद प्रगाढ़ विश्राम है। जिसमे कोई बेहोशी नहीं रहती है। उसका सारा शरीर विश्राम में होता है। एक-एक कोश विश्राम में होता है। वहां जरा भी तनाव नहीं रहता। और बड़ी बात कि योगी अपनी नींद के प्रति जागरूक रहता है।
इस विधि का प्रयोग करो। आज रात से ही प्रयोग शुरू करो। और फिर सुबह
भी इसका प्रयोग करना। एक सप्ताह में तुम्हें मालूम होगा कि तुम विधि से परिचित हो गए हो। एक सप्ताह के बाद अपने अतीत पर प्रयोग करो। बीच में एक दिन की छुट्टी रख सकेत हो। किसी एकांत स्थान में चले जाओ। अच्छा हो कि उपवास करा—उपवास और मौन। एकांत समुद्र तट पर या किसी झाड़ के नीचे लेटे रहो, वहां से, उसी बिंदु से अपने अतीत में प्रवेश करो। अगर तुम समुद्र तट पर लेटे हो तो रेत को अनुभव करो। धूप को अनुभव करो और तब पीछे की और सरको। और सरकते चले जाओ। अतीत में गहरे उतरते चले जाओ। देखो कि कौन सी आखिर बात स्मरण आती है।
तुम्हें आश्चर्य होगा कि सामान्यत: तुम बहुत कुछ स्मरण नहीं कर
सकते हो। सामान्यत: अपनी चार या पाँच वर्ष की उम्र के आगे नहीं जा सकोगे। जिनकी याददाश्त बहुत अच्छी है वे तीन वर्ष की सीमा तक जा सकते है। उसके बाद अचानक एक अवरोध मिलेगा। जिसके आगे सब कुछ अँधेरा मिलेगा। लेकिन अगर तुम इस विधि का प्रयोग करते रहे तो धीरे-धीरे यह अवरोध टूट जाएगा। तुम अपने जन्म के प्रथम दिन को भी याद कर पाओगे।
और वह एक बड़ा रहस्योद्घाटन होगा। तब धूप, बालू और सागर तट पर लौटकर तुम एक दूसरे ही आदमी होगें।
यदि तुम श्रम करो तो तुम गर्भ तक जा सकते हो। तुम्हारे पास मां के
पेट की स्मृतियां है। मां के साथ नौ महीने होने की बातें भी तुम्हें याद है। तुम्हारे मन में उन नौ महीनों की कथा भी लिखी है। जब तुम्हारी मां दुःखी हुई थी तो तुमने उसको भी मन में लिख लिया था। क्योंकि मां के दुःखी होने से तुम भी दुःखी हुये थे। तुम अपनी मां के साथ इतने जुडे थे। संयुक्त थे कि जो कुछ तुम्हारी मां को होता था वह तुम्हें भी होता था। जब वह क्रोध करती थी तो तुम भी क्रोध करते थे। जब वह खुश थी तो तुम भी खुश थे। जब कोई उसकी प्रशंसा करता था तो तुम भी प्रशंसित होते थे। और जब वह बीमार होती थी तो उसकी पीड़ा से तुम भी पीडित होते थे।
यदि तुम गर्भ की स्मृति में प्रवेश कर सको तो समझो कि मिल गई। और
जब तुम और गहरे उतर सकते हो। तब तुम उस क्षण को भी याद कर सकते हो जब तुमने मां के गर्भ में प्रवेश किया था। इसी जाति स्मरण के कारण महावीर और बुद्ध कह सके कि पूर्वजन्म है और पुनर्जन्म काई सिद्धांत नहीं है। वह एक गहन अनुभव है।
और अगर तुम उस क्षण की स्मृति को पकड़ सको, जब तुमने मां के गर्भ
में प्रवेश किया था तो तुम उससे भी आगे जा सकते हो। तुम अपने पूर्व जीवन की मृत्यु को भी याद कर सकते हो। और एक बार तुमने उस बिंदू को छू लिया तो समझो कि विधि तुम्हारे हाथ लग गई। तब तुम आसानी से अपने सभी पूर्व जन् मों में गति कर सकते हो।
यह एक अनुभव है, और इसके परिणाम आश्चर्यजनक है। जब तुम्हें पता
चलता है कि तुम जन्मों –जन्मों से उसी व्यर्थता को जी रहे हो। जो अभी तुम्हारे जीवन में है। एक ही मूढ़ता को तुम जन्मों-जन्मों में

दुहराते रहे हो। भीतरी ढंग ढांचा वही है। सिर्फ ऊपर-ऊपर थोड़ा फर्क है। अभी तुम इस स्त्री के प्रेम में हो, कल किसी अन्य स्त्री के प्रेम मैं थे। कल तुमने धन बटोरा था, आज भी धन बटोर रहे हो। फर्क इतना है कि कल के सिक्के और थे आज के सिक्के और है। लेकिन सारा ढांचा वही है, जो पुनरावृत्त होता रहा है।

और एक बार तुम देख लो कि जन्मों–जन्मों से एक ही तरह की मूढ़ता एक दुस्चक्र की भांति घूमती रही है। तो अचानक तुम जाग जाओगे। और तुम्हारा पूरा अतीत स्वप्न से ज्यादा नहीं रहेगा। तब वर्तमान सहित सब कुछ स्वप्न जैसा लगेगा। तब तुम उससे सर्वथा टूट जाओगे। और अब नहीं चाहोगे कि भविष्य में फिर से मूढ़ता दोहरे। तब वासना समाप्त हो जाएगी। क्योंकि वासना भविष्य में अतीत का प्रक्षेपण है। उससे अधिक कुछ नहीं है। तुम्हारा अतीत का अनुभव भविष्य में दुहराना चाहता है। वही तुम्हारी कामना है, चाह है।

पुराने अनुभव को फिर से भोगने की चाह कि कामना है। ओर जब तक तुम इस पुरी प्रक्रिया के प्रति होश पूर्ण नहीं होते हो तब तक वासना से मुक्त नहीं हो सकते। कैसे हो सकते हो? तुम्हारा समस्त अतीत एक अवरोध बनकर खड़ा है; चट्टान की तरह तुम्हारे सिर पर सवार है और वही तुम्हें तुम्हारे भविष्य की और धका रहा है। अतीत कामना को जन्म देकर उसे भविष्य में प्रक्षेपित करता है।

अगर तुम अपने अतीत को स्वप्न की तरह जान जाओ तो सभी कामनाए बांझ हाँ जाएंगी। और कामनाओं के गिरते ही भविष्य समाप्त हो जाता है। और इस अतीत और भविष्य की समाप्ति के साथ तुम रूपांतरित हो जाते हो।

[illegible]
[illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-15

[illegible]-[illegible]—[illegible]-23

[illegible]:

‘’[illegible]‘’

‘’अपने सामने किसी विषय को अनुभव करो।‘’

कोई भी विषय, उदाहरण के लिए एक गुलाब का फूल है—कोई भी चीज चलेगी। ‘’अपने सामने किसी विषय को अनुभव करो....’’
देखने से काम नहीं चलेगा, अनुभव करना है। तुम गुलाब के फूल को
देखते हो, लेकिन उससे तुम्हारा ह्रदय आंदोलित नहीं होता है। तब तुम गुलाब को अनुभव नहीं करते हो। अन्यथा तुम रोते और चीखते, अन्यथा तुम हंसते और नाचते। तुम गुलाब को महसूस नहीं कर रहे हो, तुम सिर्फ गुलाब को देख रहे हो।
और तुम्हारा देखना भी पूरा नहीं है। अधूरा है। तुम कभी किसी चीज
को पूरा नहीं देखते अतीत हमेशा बीच में आता है। गुलाब को देखते ही अतीत-स्मृति कहती है कि यह गुलाब है। और यह कहकर तुम आगे बढ़ जाते हो। लेकिन तब तुमने सच में गुलाब को नहीं देखा। जब मन कहता है कि यह गुलाब है तो उसका अर्थ हुआ कि तुम इसके बारे में सब कुछ जानते हो, क्योंकि तुमने बहुत गुलाब देखे है। मन कहता है कि अब और क्या जानना है। आगे बढ़ो। और आगे बढ़ जाते हो।
यह देखना अधूरा है। यह देखना-देखना नहीं है। गुलाब के फूल के साथ
रहो। उसे देखो और फिर उसे महसूस करो। उसे अनुभव करो। अनुभव करने के लिए क्या करना है? उसे स्पर्श करो, उसे सूंघो; उसे गहरा शारीरिक अनुभव बनने दो। पहले अपनी आंखों को बंद करो और गुलाब को अपने पूरे चेहरे को छूने दो। इस स्पर्श को महसूस करो। फिर गुलाब को आँख से स्पर्श करो। फिर गुलाब को नाक से सूंधो। फिर गुलाब के पास ह्रदय को ले जाओ और उसके साथ मौन हो जाओ। गुलाब को अपना भाव अर्पित करो। सब कुछ भूल जाओ। सारी दूनिया को भूल जाओ। गुलाब के साथ समग्रत: रहो।
‘’अपने सामने किसी विषय को अनुभव करो। इस एक को छोड़कर अन्य सभी
विषयों की अनुपस्थिति को अनुभव करो।
यदि तुम्हारा मन अन्य चीजों के संबंध में सोच रहा है तो गुलाब का अनुभव गहरा नहीं जाएगा। सभी अन्य गुलाबों को भूल जाओ। सभी अन्य लोगों को भूल जाओ। सब कुछ को भूल जाओ। केवल इस गुलाब को रहने दो। यही गुलाब हो, यही गुलाब। सब कुछ को भूल जाओ। केवल इस गुलाब को रहने दो। यही गुलाब, को तुम्हें आच्छादित कर लेने दो। समझो कि तुम इस गुलाब में डूब गये हो। यह कठिन होगा, क्योंकि हम इतने संवेदनशील नहीं है। लेकिन स्
त्रियों के लिए यह उतना कठिन नहीं होगा। क्योंकि वे किसी चीज को आसानी से महसूस करती है। पुरूषों के लिए यह ज्यादा कठिन होगा। हां, अगर उनका सौंदर्य बोध विकसित हो, कवि, चित्रकार या संगीतकार का सौंदर्य बोध विकसित होता है। तो बात और है। तब वे भी अनुभव कर सकते है। लेकिन इसका प्रयोग करो।

बच्चे यह प्रयोग बहुत सरलता से कर सकते है। मैं अपने एक मित्र के
बेटे को यह प्रयोग सिखाता था। यह किसी चीज को आसानी से अनुभव करता था। फिर मैंने उसे गुलाब का फल दिया और उससे यह सब कहा जो तुम्हें अब कह रहा हूं। उसने यह किया और कहा कि मैं गुलाब का फूल बन गया हूं। मेरा भाव यही है कि मैं ही गुलाब का फूल हूं।
बच्चे इस विधि को बहुत आसानी से कर सकते है। लेकिन हम उन्हें
इसमें प्रशिक्षित नहीं करते। प्रशिक्षित किया जाए तो बच्चे सर्वश्रेष्ठ ध्यानी हो सकते है।
‘’अपने सामने किसी विषय को अनुभव करो। इस एक को छोड़कर अन्य सभी विषयों की अनुपस्थिति को अनुभव करो।‘’
प्रेम में यही घटित होता है। अगर तुम किसी के प्रेम में हो तो तुम सारे संसार को भूल जाते हो। और अगर अभी भी संसार तुम्हें याद है तो भली भांति समझो कि यह प्रेम नहीं है। प्रेम में तुम संसार को भूल जाते हो,

सिर्फ प्रेमिका या प्रेमी याद रहता है। इसलिए मैं कहता हूं कि प्रेम ध् यान है। तुम इस विधि को प्रेम-विधि के रूप में भी उपयोग कर सकते हो। अब अन्य सब कुछ भूल जाओ।
कुछ दिन हुए एक मित्र अपनी पत्नी के साथ मेरे पास आए। पत्नी को पति
से कोई शिकायत थी। इसलिए पत्नी आई थी। मित्र ने कहा कि मैं एक वर्ष से ध् यान कर रहा हूं। और लगती है। यह आवाज मेरे ध्यान में सहयोगी है। लेकिन अब एक आश्चर्य की घटना घटती है। जब मैं अपनी पत्नी के साथ संभोग करता हूं, और संभोग शिखर छूने लगता है तब भी मेरे मुंह से रजनीश-रजनीश की आवाज निकलने लगती है। और इस कारण मेरी पत्नी को बहुत अड़चन होती है। वह अक्सर पूछती है कि तुम प्रेम करते हो या ध्यान करते हो या क्या करते हो? और ये रजनीश बीच में कैसे आ जाते है।
उस मित्र ने कहा कि मुश्किल यह है कि अगर मैं रजनीश-रजनीश न चिल्
लाउं तो संभोग का शिखर चूक जाता है। और चिल्लाउं तो पत्नी पीडित होती है। सह रोने चिल्लाने लगती है। और मुसीबत खड़ी कर देती है। तो उन्होंने मेरी सलाह पूछी और कहां कि पत्नी को साथ लाने का यही कारण है।
उनकी पत्नी की शिकायत दूरूस्त है। क्योंकि वह कैसे मान सकती है कि
कोई दूसरा व्यक्ति उनके बीच में आये। यही कारण है कि प्रेम के लिए एकांत जरूरी है। बहुत जरूरी है। सब कुछ को भूलने के लिए एकांत अर्थपूर्ण है। अभी यूरोप और अमेरिका में वे समूह संभोग का प्रयोग कर रहे है—एक
कमरे में अनेक जोड़े संभोग में उतरते है। यह मूढ़ता है। अत्यंतिक मूढ़ता है। क्योंकि समूह में संभोग की गहराई नहीं छुई जा सकती है। वह सिर्फ काम क्रीड़ा बन कर रह जाएगी। दूसरों की उपस्थिति बाधा बन जाती है। तब इस संभोग को ध्यान भी नहीं बनाया जा सकता है।
अगर तुम शेष संसार को भूल सको तो ही तुम किसी विषय के प्रेम में हो सकते हो। चाहे वह गुलाब का फूल हो या पत्थर हो या कोई भी चीज हो, शर्त यही है कि उस चीज की उपस्थिति महसूस करो और अन्य चीजों की अनुपस्थिति महसूस करो। केवल वही विषय वस्तु तुम्हारी चेतना में अस्तित्वगत रूप से रहे।
अच्छा हो कि इस विधि के प्रयोग के लिए कोई ऐसी चीज चुनो जो तुम्हें प्रीतिकर हो। अपने सामने एक चट्टान रखकर शेष संसार को भूलना कठिन होगा। यह कठिन होगा, लेकिन झेन सदगुरओं ने यह भी किया है। उन्होंने ध्यान के लिए रॉक गार्डन बना रखा है। वहां पेड़-पौधे या फूल नहीं होते। पत्थर और बालू होते है। और वे पत्थर पर ध्यान करते है।
वे कहते है कि अगर किसी पत्थर के प्रति तुम्हारा गहन प्रेम हो तो
कोई भी आदमी तुम्हारे लिए बाधा नहीं हो सकता। और मनुष्य चट्टान जैसे ही तो है। अगर तुम चट्टान को प्रेम कर सकते हो तो मनुष्य को प्रेम करने में क्या कठिनाई। तब कोई अड़चन नहीं है। मनुष्य चट्टान जैसे है। उससे भी ज् यादा पथरीले। उन्हें तोड़ना उनमें प्रवेश करना अति कठिन है।
लेकिन अच्छा हो कि कोई ऐसी चीज चुनो जिसके प्रति तुम्हारा सहज
प्रेम हो। और तब शेष संसार को भूल जाओ। उसकी उपस्थिति का मजा लो, उसका स् वाद लो आनंद लो। उस वस्तु में गहरे उतरो और उस वस्तु को अपने में गहरा उतरने दो।
‘’फिर विषय भाव को छोड़कर.......।‘’
अब इस विधि का कठिन अंश आता है। तुमने पहले ही सब विषय छोड़ दिए
है। सिर्फ यह एक विषय तुम्हारे लिए रहा है। सबको भूलकर एक इसे तुमने याद रखा था। अब ‘’विषय भाव को छोड़कर....।‘’ अब उस भाव को भी छोड़कर। अब तो दो ही चींजे बची है, एक विषय की उपस्थिति है और शेष चीजों की अनुपस्थिति है। अब उस अनुपस्थिति को भी छोड़ दो। केवल यह गूलाब या केवल यह चेहरा। यह केवल यह स्त्री या केवल यह पुरूष या यह चट्टान की उपस्थिति बची है।

उसे भी छोड़ दो। और उसके प्रति जो भाव है, उसे भी तुम अचानक एक आत्यंतिक शून्य में गिर जाते हो। जहां कुछ भी नहीं बचता।
और शिव कहते है: ’’आत्मोपल्बध होओ।‘’ इस शून्य को, इस ना-कुछ को
उपलब्ध हो, यही तुम्हारा स्वभाव है, यही शुद्ध होना है।
शून्य को सीधे पहुंचना कठिन होगा—कठिन और श्रम-साध्य। इसलिए
किसी विषय को माध्यम बनाकर वहां अच्छा है। पहले किसी विषय को अपने मन में ले लो और उसे इस समग्रता से अनुभव करो। कि किसी अन्य चीज को याद रखने की जरूरत न रहे। तुम्हारी समस्त चेतना इस एक चीज से भर जाए। और तब इस विषय को भी छोड़ दो, इसे भी भूल जाओ। तब तुम किसी अगाध अतल में प्रविष्ट हो जाते हो। जहां कुछ भी नहीं है। वहां केवल तुम्हारी आत्मा है। शुद्ध और निष्कलुष। यह शुद्ध अस्तित्व यह शुद्ध चैतन्य ही तुम्हारा स्वभाव है।
लेकिन इस विधि को कई चरणों में बांट कर प्रयोग करो। पूरी विधि को एकबारगी काम में मत लाओ। पहल एक विषय का भाव निर्मित करो। कुछ दिन तक सिर्फ इस हिस्से का प्रयोग करो। पूरी विधि का प्रयोग मत करो। पहले कुछ दिनों तक या कुछ हफ्तों तक इस एक हिस्से की, पहले हिस्से की साधना करो। विषय-भाव पैदा करो। पहले विषय को महसूस करो। और एक ही विषय चुनो, उसे बार-बार बदलों मत। क्योंकि हर बदलते विषय के साथ तुम्हें फिर-फिर उतना ही श्रम करना होगा।
अगर तुमने विषय के रूप में गुलाब का फूल चुना है तो रोज-रोज गुलाब
के फूल का ही उपयोग करो। उस गुलाब के फूल से तुम भर जाओ। भरपूर हो जाओ। ऐसे भर जाओ कि एक दिन कह सको की मैं फूल ही हूं। तब विधि का पहला हिस्सा सध गया, पूरा हूआ।
जब फूल ही रह जाए और शेष सब कुछ भूल जाए, तब इस भाव का कुछ दिनों तक आनंद लो। यह भाव अपने आप में सुंदर है। बहुत-बहुत सुंदर है। यह अपने आप में बहुत प्राणवान है, शक्तिशाली है। कुछ दिनों तक यही अनुभव करते रहो। और जब तुम उसके साथ रच-पच जाओगे, लयवद्ध हो जाओगे, तो फिर वह सरल हो जाएगा। फिर उसके लिए संघर्ष नहीं करना होगा। तब फूल अचानक प्रकट होता है। और समस्त संसार भूल जाता है। केवल फूल रहता है।
इसके बाद विधि के दूसरे भाग पर प्रयोग करो। अपनी आँख बंद कर लो और
फूल को भी भूल जाओ। याद रहे, अगर तुमने पहल भाग को ठीक-ठीक साधा है तो दूसरा भाग कठिन नहीं होगा। लेकिन यदि पूरी विधि पर एक साथ प्रयोग करोगे तो दूसरा भाग कठिन ही नहीं असंभव होगा। पहले भाग में अगर तुमने एक फूल के लिए सारी दुनियां को भूला दिया तो दूसरे भाग में शून्य के लिए फूल को भुलाना आसानी से हो सकेगा। दूसरा भाग आएगा। लेकिन उसके लिए पहल भाग पहले करना जरूरी है।
लेकिन मन बहुत चालाक है। मन सदा कहेगा। कि पूरी विधि को एक साथ
प्रयोग करो। लेकिन उसमे तुम सफल नहीं हो सकते हो। और तब मन कहेगा कि यह विधि काम की नहीं है। या यह तुम्हारे लिए नही है।
इसलिए अगर सफल होना चाहते हो तो विधि को क्रम में प्रयोग करो। पहले-पहले भाग को पूरा करो और तब दूसरे भाग को हाथ में लो। और तब विषय भी विलीन हो जाता है। और मात्र तुम्हारी चेतना रहती है। शुद्ध प्रकाश, शुद्ध ज्योति-शिखा।
कल्पना करो कि तुम्हारे पास दीया है, और दिए की रोशनी अनेक चीजों
पर पड़ रही है। मन की आंखों से देखो कि तुम्हारे अंधेरे कमरे में अनेक-अनेक चीजें है। और तुम एक दिया वहां लाते हो और सब चीजें प्रकाशित हो जाती है। दीया उन सब चीजों को प्रकाशित करता है। जिन्हें तुम वहां देखते हो।
लेकिन अब तुम उनमें से एक विषय चून लो, और उसी विषय के साथ रहो।

दीया वहीं है, लेकिन अब उसकी रोशनी एक ही विषय पर पड़ती है। फिर उस एक विषय को भी हटा दो। और तब दीए के लिए कोई विषय नहीं बचा।

वही बात तुम्हारी चेतना के लिए सही है। तुम प्रकाश हो, ज्योति शिखा हो। और सारा संसार तुम्हारा विषय है। तुम सारे संसार को छोड़ देते हो। और एक विषय पर अपने को एकाग्र करते हो। तुम्हारी ज्योति शिखा वही रहती है। लेकिन अब वह अनेक विषयों में व्यस्त नहीं है। वह एक ही विषय में व्यस्त है। और फिर उस एक विषय को भी छोड़ दो। अचानक तब सिर्फ प्रकाश बचता है। चेतना बचती है। वह प्रकाश किसी विषय को नहीं प्रकाशित कर रहा है।

इसी को बुद्ध ने निर्वाण कहा है। इसी को महावीर ने कैवल्य कहा है। परम एकांत कहा है। उपनिषदों ने इसे ही ब्रह्मज्ञान या आत्मज्ञान कहा है। शिव कहते है कि अगर तुम इस विधि को साध लो तो तुम ब्रह्मज्ञान को उपल्बध हो जाओगे।

[illegible]
[illegible]
([illegible]-[illegible]—[illegible]-1)
[illegible]-15

[illegible]-[illegible]—[illegible]-24

[illegible]:
‘’[illegible]‘’

अगर हमें किसी के विरूद्ध घृणा अनुभव हो या किसी के लिए प्रेम अनुभव हो तो हम क्या करते है? हम उस घृणा या प्रेम को उस व्यक्ति पर आरोपित कर देते है। अगर तुम मेरे प्रति घृणा अनुभव करते हो तो उस घृणा के ही कारण तुम अपने को बिलकुल भूल जाते हो। और मैं तुम्हारा एक मात्र लक्ष्य या विषय बन जाता हूं। वैसे ही जब तुम मुझे प्रेम करते हो तो भी तुम अपने को बिलकुल ही भूल जाते हो। और मुझे अपना एक मात्र विषय बना लेते हो। तुम अपनी घृणा को प्रेम को या जो भी भाव हो, उसे मुझे पर प्रक्षेपित कर देते हो। उस दशा में तुम आंतरिक केंद्र को भूल जाते हो। और दूसरे को अपना केंद्र बना लेते हो।

यह सूत्र कहता है। कि जब किसी के प्रति घृणा, प्रेम या कोई और भाव
पक्ष या विपक्ष में पैदा हो तो उसको, उस भाव को उस व्यक्ति पर आरोपित मत करो। बल्कि स्मरण रखो कि उस भाव का स्त्रोत तुम स्वयं हो।
मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। इसमें सामान्य भाव यह है कि तुम मेरे प्रेम के स्त्रोत हो। लेकिन यह हकीकत नहीं है। मैं ही स्त्रोत हूं, तुम तो महज वह पर्दा हो जिस पर मैं अपने प्रेम को प्रक्षेपित करता हूं। तुम मात्र पर्दा हो। मैं अपना प्रेम तुम पर प्रक्षेपित करता हूं। और मैं कहता हूं कि तुम मेरे प्रेम के स्त्रोत हो। लेकिन यह तथ्य नहीं है। यह झूठ है। यह मेरी ही प्रेम की ऊर्जा है जिसे मैं तुम पर प्रक्षेपित कर रहा हूं।
इस प्रेम की ऊर्जा की प्रभा में पड़ कर तुम सुंदर हो जाते हो। हो सकता है। किसी के लिए तुम सुंदर न होओ। हो सकता है कि किसी के लिए तुम बिलकुल कुरूप और विकर्षण से भरे होओ। ऐसा क्यों? अगर तुम ही प्रेम के स्त्रोत हो तो प्रत्येक व्यक्ति को तुम्हारे प्रति प्रेमपूर्ण होना चाहिए। लेकिन तुम स्त्रोत नहीं हो। मैं तुम पर प्रेम आरोपित करता हूं तो
तुम सुंदर हो जाते हो। कोई दूसरा व्यक्ति तुम पर घृणा आरोपित करता है और तुम कुरूप हो जाते हो। और हो सकता है कोई तीसरा व्यक्ति तुम्हारे प्रति बिलकुल उदासीन हो, तटस्थ हो। उसने तुम्हें देखा तक न हो। आखिर हो क्या रहा है? हम अपने-अपने भाव दूसरों पर फैला रहे है।
यही कारण है कि सुहागरात में चंद्रमा तुम्हें सुंदर, चमत्
कारपूर्ण और अपूर्व दिखाई देता है। उस समय सारा संसार तुम्हें अपूर्व मालूम देता है। और हो सकता है उसी रात तुम्हारे पड़ोसी के लिए अद्भुत रात्रि अस्तित्व में न हो। और अगर उसका बच्चा मर गया हो। तो वही चाँद उसके लिए उदास, दुःखी और असहनीय मालूम पड़ेगा। और वही चाँद तुम्हारे लिए इतना मोहक है, मादक है और तुम्हें पागल किए दे रहा है। क्यों? क्या चंद्रमा स्त्रोत है, आधार है? यह चंद्रमा केवल पर्दा है जिस पर तुम अपने को फैला रहे हो। प्रक्षेपित कर रहे हो।
यह सूत्र कहता है: ‘’जब किसी व्यक्ति के पक्ष या विपक्ष में कोई
भाव उठे तो उसे उस व्यक्ति पर मत आरोपित करो, बल्कि केंद्रित रहो।‘’ यहां व्यक्ति की जगह कोई वस्तु भी हो सकती है। विषय के रूप में कुछ
भी काम देगा। तुम सदा केंद्रित रहो। याद रहे कि तुम स्त्रोत हो और विषय की और गति करने की बजाएं स्त्रोत की और गति करो। जब घृणा का भाव उठे तो घृणा के विषय पर जाने की बजाएं उस बिंदु पर जाना बेहतर है जहां पर घृणा आ रही है। उस व्यक्ति को मत खोजों जो इस घृणा का विषय है। लक्ष्य है; उस केंद्र को खोजों जहां से घृणा उठ रही है। केंद्र की तरफ चलो, भीतर जाओ अपनी घृणा या प्रेम या जो भी भाव हो उसे केंद्र की और स्त्रोत की और, उदगम की और यात्रा का साधन बनाओ। उदगम पर जाओ, और वहां केंद्रित रहो। इसे प्रयोग करो। यह बहुत ही मनोवैज्ञानिक विधि है। किसी ने तुम्
हारा अपमान किया और तुम क्रोधित हो गए, ज्वरग्रस्त हो गए। अभी तुम्हारा यह क्रोध को उस आदमी प्रवाहित हो रहा है। जिसने तुम्हें अपमानित किया। तुम अपने पूरे क्रोध को उस आदमी पर प्रक्षेपित हो रहा है। जिसने तुम् हें अपमानित किया, अगर उसने तुम्हें अपमानित किया तो सच में क्या किया? उसने केवल तुम्हें थोड़ा कुरेदा। उसने तुम्हारे क्रोध को उभरने में थोड़ा सहायता कर दी। लेकिन यह क्रोध तुम्हारा है।
वह व्यक्ति बुद्ध के पास जाए और उन्हें अपमानित करे तो वह उनमें
कोई क्रोध पैदा नहीं कर सकेगा। वह अगर जीसस के पास जाए तो जीसस उसे अपना दूसर गाल भी हाजिर कर देंगे। और बोधिधर्म के पाए जाए तो वह अट्टहास कर उठेंगे। यह व्यक्ति पर निर्भर है।
इसलिए दूसरा व्यक्ति स्त्रोत नहीं है। स्त्रोत सदा तुम्हारे

भीतर है। दूसरा सिर्फ स्त्रोत पर चोट कर रहा है। लेकिन अगर तुम्हारे भीतर क्रोध नहीं है तो क्रोध बाहर नहीं आएगा। यदि तुम बुद्ध को चोट करो तो करूणा आएगी। क्योंकि वहां क्रोध नहीं है।
एक सूखे कुएं में बाल्टी डालों तो कुछ भी हाथ नहीं आता। पानी वाले कुएं में बाल्टी डालों और वह पानी से भरकर बाहर आती है। लेकिन पानी कुएं में है। कुआं स्त्रोत है। बाल्टी तो पानी को बाहर लाने का निमित मात्र है।
जो आदमी तुम्हें अपमानित करता है वह बाल्टी का काम करता है। वह तुम्हारे भीतर से तुम्हारे क्रोध, घृणा या किसी भी आग को बाहर ले आता है। तो स्मरण रहे। तुम स्त्रोत हो।
इस विधि के लिए विशेष रूप से इस बात को ध्यान में रख लो कि दूसरों
पर तुम जो भी भाव प्रक्षेपित करते हो उसका स्त्रोत सदा तुम्हारे भीतर है। इसलिए जब भी कोई भाव पक्ष या विपक्ष में उठे तो तुरंत भीतर प्रवेश करो और उस स्त्रोत के पास पहु्ंचो जहां से यह भाव उठ रहा है। स्त्रोत पर केंद्रित रहो, विषय की चिंता ही छोड़ दो। किसी ने तुम्हें तुम्हारे क्रोध को जानने का मोका दिया है। इसके लिए उसे तुरंत धन्यवाद दो और उसे भूल जाओ। फिर आंखें बंद कर लो और अपने भीतर सरक जाओ। और उस स्त्रोत पर ध् यान दो जहां से यह प्रेम या क्रोध का भाव उठ रहा है।
भीतर गति करने पर तुम्हें वह स्त्रोत मिल जाएगा। क्योंकि ये भाव
उसी स्त्रोत से आते है। घृणा हो या प्रेम, सब तुम्हारे स्त्रोत से आते है। इस स्त्रोत के पास उस समय पहुंचना आसान है जब तुम क्रोध या प्रेम या घृणा सक्रिय रूप से अनुभव करते हो। इस क्षण में भीतर प्रवेश करना आसान होता है। जब तार गर्म है तो उसे पकड़कर भीतर जाना आसान होता है। और भीतर जाकर जब तुम एक शीतल बिंदू पर पहुंचोगे तो अचानक एक भिन्न आयाम, एक दूसरा ही संसार सामने खुलने लगता है।
इसलिए क्रोध, घृणा या प्रेम जो भी हो उसका उपयोग अंतर्यात्रा के
लिए करो। हम सदा दूसरों की तरफ गति करने में इन भावों का उपयोग करते हे। और जब अपने भाव आरोपित करने के लिए हमें कोई नहीं मिलता तो बड़ी निराशा लगती है। तब हम अपने भावों को निर्जीव वस्तुओं पर भी आरोपित करने लगते है। मैंने लोग देखे है जो अपने जूतों पर क्रोध करते है। और क्रोध से उन् हें फेंकते है। वे क्या कर रहे है? मैंने लोगों को देखा है जो घर के दरवाजे पर क्रोध करते है, क्रोध में उसे खोलते है, उसे गालियां तक देते है। वे क्या कर रहे है?
इस प्रसंग में मैं एक झेन अंतदृष्टि की चर्चा से अपनी बात समाप्त करूं। एक बहुत बड़े झेन सदगुरू लिंची कहा करते थे:
मैं जब युवा था तो मुझे नौका-विहार का बहुत शौक था। मेरे पास एक
छोटी सी नाव थी और उसे लेकर में अक्सर अकेला झील की सैर करता था। मैं घंटों झील में रहता था।
एक दिन ऐसा हुआ कि मैं अपनी नाव में आँख बंद कर सुंदर रात पर ध्यान
कर रहा था। तभी एक खाली नाव उलटी दिशा में आई और मेरी नाव से टकरा गई। मेरी आंखे बंद थी। इसलिए मैंने मन में सोचा कि किसी व्यक्ति ने अपनी नाव मेरी नाव से टकरा दी है। और मुझे क्रोध आ गया।
मैंने आंखें खोली और मैं उस व्यक्ति को क्रोध में कुछ कहने ही जा
रहा था कि मैंने देखा कि दूसरी नाव खाली है। अब मुझे कुछ करने का कोई उपाय न रहा। किस पर यह क्रोध प्रकट करूं? नाव तो खाली है। और वह नाव धार के साथ बहकर आई थी। और मेरी नाव से टकरा गई थी। अब मेरे लिए कुछ भी करने को न था। एक खाली नाव पर क्रोध उतारने की कोई संभावना न थी। तब फिर एक ही उपाय बाकी रहा। मैंने आंखें बंद कर ली। और अपने क्रोध को पकड़ कर उलटी दिशा में बहने लगा। और में पहूंच गया अपने केंद्र पर। वह खाली नाव में

आत्म ज्ञान का कारण बन गई। उस मौन रात में मैं आपने भीतर सरक गया। और क्रोध मेरी सवारी बन गया। और खाली नाव मेरी गुरु हो गई।
और फिर लिंची ने कहा, अब जब कोई आदमी मेरा अपमान करता है तो मैं
हंसता हूं और कहता हूं कि यह नाव भी खाली है। मैं आंखें बंद करता हूं और अपने भीतर चला जाता हूं।
इस विधि को प्रयोग करो। यह तुम्हारे लिए चमत्कार कर सकती है।

ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र
(तंत्र-सूत्र—भाग-1)
प्रवचन-15